काली उपासना

हिन्द पुस्तक भ

लौ
S. BRIJBASI & SONS
59 Mirza Street
Bombay 3
SREE MAHA
Delhi 6

धार्मिक पुस्तकें पढ़कर पुण्य कमाइये

तुलसीकृत रामायण भाषा-टीका-सहित

—टीकाकार पं० ज्वालाप्रसाद जी मूल्य 30/

इसमें आठों काण्डों के प्रत्येक दोहा, चौपाई, सोरठा और छन्दों का अर्थ साथ-साथ अत्यन्त शुद्धतापूर्वक लिखा गया है। गोस्वामी तुलसीदासजी का जीवन-चरित्र, श्री राम शलाका प्रश्नोत्तरी, मास पारायण विधि, रामायण माहात्म्य, नवाह्न मास परायण विश्राम, हनुमान चालीसा, श्री रामचन्द्र जी के वंश का वृक्ष, गूढ़ार्थ शब्द कोश, राम-नाम महामन्त्र, सप्तदेवों की आरती, राम कलेवा, श्रवण चरित्र, सूलोचना सती, अहिरावण वध, नारान्तक वध तथा अन्य सभी क्षेपक, टीका सहित दिये गये हैं।

आदर्श बाल्मीकीय रामायण भाषा

पं० जयगोपाल मूल्य 30/-

इस ग्रन्थ में मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् राम की शिक्षाप्रद सम्पूर्ण कथा को बहुत सुन्दरता से छपवाया गया है। इस पुस्तक की भाषा बहुत ही सरल तथा मधुर है, जिसको स्त्री, पुरुष, बाल तथा वृद्ध सुगमता से पढ़कर और समझकर आनन्द उठा सकते हैं। यह ग्रन्थ हर घर का दीपक अर्थात् अंधेरे में प्रकाश है। इस पुस्तक में बीसियों चित्र दिये गये हैं। आवरण चित्र अति सुन्दर है। छठा शुद्ध संस्करण मोटे टाइप में छपा है। पृष्ठ संख्या 612 है।

सप्तवार व्रत कथा (सचित्र) मूल्य 2/50

जिसमें रविवार, सोमवार, सोलह सोमवार, सौम्य प्रदोष व्रत, मंगलवार, बुधवार, वृहस्पतिवार, शुक्रवार तथा शनिवार (सातों वारों) की कथायें, पूजन, व्रत सहित सरल हिन्दी भाषा में दी गई हैं। सातों वारों की आरतियाँ भी दी गई हैं।

श्रीमद् भागवत (बतर्ज राधेश्याम) —श्री लाल खत्री मूल्य 15/-

यह वेद और उपनिषदों का सारांश है। भक्ति के तत्त्वों का परिपूर्ण खजाना है, परमार्थ द्वार है, तीनों पापों को समूल नष्ट करने वाली महौषधि है, शान्ति-निकेतन है, धर्म ग्रंथ है। इस कराल कलिकाल में आत्मा और परमात्मा का ऐक्य करा देने का मुख्य साधन है। श्री मन्महर्षि द्वैपायन व्यासजी की उज्ज्वल बुद्धि का उज्ज्वल उदाहरण [illegible] तथा भगवान् श्रीकृष्ण का साक्षात् प्रतिबिम्ब है। सम्पूर्ण 20 भागों का।

वी०पी०पी० [illegible] का एक मात्र सबसे बड़ा पुस्तक भण्डार
हिन्द[illegible]क भण्डार खारी बावली, दिल्ली

काली उपासना

[भगवती महामाया काली की उपासना एवं पूजा-विधि, मन्त्र, यन्त्र, कीलक, हृदय, स्तव, स्तोत्र, अर्गल, कवच, अष्टोत्तरशतनाम स्तोत्र, सहस्रनाम स्तोत्र, सहस्राक्षरी, बीज सहस्राक्षरी, काल्युपनिषत्, कालिकोपनिषत् तथा कालीतन्त्र आदि विषयों का शास्त्रोक्त संकलन]

लेखक

राजेश दीक्षित

हिन्द पुस्तक भण्डार

खारी बावली, दिल्ली - 006

कालिका च महाविद्या षोडशी भुवनेश्वरी ।
भैरवी छिन्नमस्ता च विद्या धूमावती तथा ।।
बगला सिद्धविद्या च मातङ्गी कमलात्मिका ।
एता दश महाविद्याः सर्वतन्त्रेषु गोपिताः ।।

प्रकाशक :

© हिन्द पुस्तक भण्डार

लेखक : राजेश दीक्षित

मूल्य : 8/25 (सवा आठ रुपये)

मुद्रक :
ऐवरैस्ट प्रेस, दिल्ली-6

चेतावनी

भारतीय कापीराइट एक्ट के अधीन इस पुस्तक का कापीराइट भारत सरकार के कापीरा[illegible]ऑफिस द्वारा हो चुका है। अतः कोई सज्जन इस पुस्तक का नाम, अन्[illegible] मैटर, डिजाइन, चित्र, सैटिंग या किसी भी अंश को किसी भी भाषा में [illegible] करने या तोड़-मरोड़कर छापने का साहस न करें, अन्यथा कानूनी [illegible]र्जे-खर्चे व हानि के जिम्मेदार होंगे।

—प्रकाशक

दो शब्द

●दशमहाविद्याओं में 'काली' सर्वप्रधान हैं। इन्हें 'आद्या' अथवा 'महाविद्या' भी कहा जाता है। श्मशान काली, भद्रकाली, सिद्धिकाली, कामकलाकाली, हंस काली, गुह्यकाली आदि इन्हीं भगवती के भेद हैं। इनमें 'दक्षिणा काली' का स्थान मुख्य है। दक्षिण दिशा में रहने वाला 'यम' भगवती 'काली' का नाम सुनते ही भाग जाता है तथा काली-उपासकों को नरक में ले जाने की सामर्थ्य उसमें नहीं है, इसीलिए भगवती को 'दक्षिण कालिका' अथवा 'दक्षिणा काली' के नाम से सम्बोधित किया जाता है।

●मार्कण्डेय पुराण की सप्तशती में जिन महाकाली का वर्णन है और जिनका जन्म भगवती अम्बिका के ललाट से हुआ है, वे काली अथवा महाकाली देवी दुर्गा की त्रिमूर्त्तियों में से एक हैं तथा आद्या महाविद्या काली से सर्वथा भिन्न हैं। पौराणिक काली तमोगुण की स्वामिनी हैं, जब कि भगवती दक्षिणा काली जगद्धात्री आदि शक्ति स्वरूपा हैं। काली-उपासकों को यह अन्तर ध्यान में रखना चाहिए।

●विभिन्न ग्रंथों में भगवती दक्षिण कालिका की उपासना की अनेक विधियों का वर्णन किया गया है। उनमें पशु भाव तथा वीर भाव की उपासना विधियां मुख्य हैं। वीरभाव की उपासना गृहस्थों के लिए न तो उचित है और न सुसाध्य ही। सिद्ध गुरु के उचित मार्ग-दर्शन के अभाव में उनका प्रयोग साधक के लिए अहितकर भी सिद्ध होता है। अस्तु, उन विधियों का सम्यक् ज्ञान किसी योग्य गुरु से ही प्राप्त करना चाहिए। गृहस्थों के लिए भगवती की जो उपासना-विधि शास्त्र, सम्मत, सरल तथा हानि रहित है, इस पुस्तक में मुख्य रूप से उसी का वर्णन किया गया है। वाममार्ग के प्राचीन ग्रंथ 'काली तन्त्र' तथा अन्य विधियों को प्रस्तुत पुस्तक में केवल इसी दृष्टि से सङ्कलित किया गया है, ताकि जिज्ञासुओं को काली-उपासना विषयक सभी विधियों का शास्त्रीय-ज्ञान प्राप्त हो सके।

● उपासना-विधि के अतिरिक्त भगवती काली विषयक विभिन्न मन्त्र, यन्त्र, हृदय, अर्गल, कवच, स्तोत्र, सहस्रनाम, बीजसहस्राक्षरी, उपनिषद् आदि विविध विषयों को संकलित कर, पुस्तक को अधिकाधिक उपयोगी बनाने का प्रयास किया गया है। जिन ग्रन्थों तथा महानुभावों से हमें इनके संकलन में सहायता प्राप्त हुई है, उन सब के प्रति हम हृदय से कृतज्ञ हैं। आशा है, भगवती काली के उपासक भक्तजन हमारे इस श्रम को स्नेह पूर्वक अपनाएंगे।

कृष्णा पुरी, मथुरा

—राजेश दीक्षित

समर्पण

आगरा निवासी, सुप्रसिद्ध कवि एव साहित्य-मर्मज्ञ

परम आदणीय

पं० हृषिकेश जी चतुर्वेदी

के

कर-कमलों में सादर

अरूपाया: कालिकाया: कालमातुर्महाद्युतेः ।
गुणक्रियानुसारेण क्रियते रूप कल्पना ।।

× × ×

कालिका द्विविधा प्रोक्ता कृष्णा रक्ता प्रभेदत: ।
कृष्णा तु दक्षिणा प्रोक्ता रक्ता तु सुन्दरी मता ।।

× × ×

सा विद्या परमा मुक्तेर्हेतुभूता सनातनी ।
संसारबन्धहेतुश्च सैव सर्वेश्वरेश्वरी ।।

× × ×

यथा कर्मसमाप्तौ च दक्षिणा फलसिद्धिदा ।
तथा मुक्तिरम्यौ देवी सर्वेषां फलदायिनी ।।

× × ×

पुरुषो दक्षिण: प्रोक्तो वामा शक्तिर्निगद्यते ।
वामा सा दक्षिणं जीत्वा महामोक्ष प्रदायिनी ।।
तत: सा दक्षिणा नाम्ना त्रिषु लोकेषु गीयते ।।

× × ×

श्वेतपीतादिको वर्णो यथा कृष्णे विलीयते ।
प्रविशन्ति तथा काल्यां सर्वभूतानि शैलजे ।।
अतस्तस्या: कालशक्तेर्निर्गुणाया निराकृतेः ।
हिताया: प्राप्तयोगानां वर्ण: कृष्णो निरूपित: ।।

विषय-सूची

प्रथम खण्ड

द्वितीय खण्ड

तृतीय खण्ड

अविस्मरणीय-वचन

यः शिवः सैव दुर्गाध्यात् या दुर्गा शिव एव सः ।
यः शिवः कृष्ण एव स्यात् या कालो कृष्ण एव सः ।।

× × ×

शशिसूर्योग्निभिर्नेत्रैरखिलं कालिका जगत् ।
सम्पश्यति यतस्तस्मात् कल्पितं नयनत्रयम् ।।

× × ×

पुस्तके लिखिता विद्या येन सुन्दरि जप्यते ।
सिद्धिर्न जायते तस्य कल्पकोटि शतैरपि ।।

× × ×

पुस्तके लिखिते मन्त्रो येन सुन्दरि जप्यते ।
न तस्य जायते सिद्धिर्हानिखे पदे पदे ।।

× × ×

जपस्यादौ शिवा ध्यायत् ध्यानस्यान्ते पुनर्जपेत् ।
जपध्यानसमायुक्तः शीघ्र सिध्यति साधकः ।।

× × ×

पूजा कोटि समं स्तोत्र स्तोत्र कोटि समो जपः ।
जपकोटि समं ध्यानं ध्यान कोटिसमो लयः ।।

× × ×

मनोऽन्यत्र शिवोन्यत्र शक्तिरन्यत्र मारुतः ।
न सिद्धयति वरारोहे लक्षकोटि जपादपि ।।

× × ×

मन्त्रार्थं मन्त्रचैतन्यं योनिमुद्रां न वेत्तियः ।
लक्षकोटि जपेनापि तस्य विद्या न सिद्धयति ।।

धर्म सम्बन्धी पुस्तकें

श्री अष्टदेव आराधना
मूल्य 8/25

इस पुस्तक में श्री राम, कृष्ण, विष्णु, शिव, हनुमत्, भैरव, गणेश तथा ॐ— इन आठों देवताओं की आराधना विषयक छोटी पुस्तकें संकलित हैं।

श्री अष्टदेवी आराधना
मूल्य 8/25

इस पुस्तक में श्री लक्ष्मी, दुर्गा, काली, गायत्री, सरस्वती, वैष्णोदेवी, पार्वती तथा गंगा—इन आठों देवियों की आराधना विषयक छोटी पुस्तकें संकलित हैं। एक ही जिल्द में।

श्री विष्णु उपासना (विष्णु पूजा)
मूल्य 8/25

सम्पूर्ण चराचर के स्वामी चतुर्भुज शेषशायी भगवान श्री विष्णु की पौराणिक कथा, पूजा, आराधना, उपासना, ध्यान स्तुति विषयक यन्त्र, मन्त्र, स्तोत्र, कवच, भजन, आरती, चालीसा आदि का वृहद् संकलन।

सचित्र एवं सजिल्द पुस्तक।

छोटी पुस्तक 'श्री विष्णु आराधना' का मूल्य 1/50

बारह महीनों के व्रत व त्यौहार
मूल्य 6/-

प्रतिदिन विश्व में अनेक घटनाएँ घटती हैं। वे अपना प्रभाव आने वाली पीढ़ियों के लिए छोड़ जाती हैं। उन्हीं घटनाओं की पुण्यमयी स्मृति पर्वों और त्यौहारों का नाम ग्रहण कर लेती हैं। इस पुस्तक में विद्वान लेखक ने वर्षभर के त्यौहारों की तिथियों, प्रचलन के कारणों और मनाने की विधियों पर सुन्दर शैली में प्रकाश डाला है। स्त्रियों के लिए अत्यन्त उपयोगी व्रतों की कथाएँ भी हैं।

श्री गणेश उपासना (गणेश पूजा)
मूल्य 8/25

आदि पूज्य ऋद्धि सिद्धि दायक विघ्न विनाशक श्री गणेशजी की पौराणिक कथा तथा पूजा, आराधना, ध्यान एवं स्तुति विषयक यन्त्र, मन्त्र, स्तोत्र, कवच, भजन, आरती, चालीसा आदि का वृहद् संकलन।

श्री लक्ष्मी उपासना (लक्ष्मी पूजा)
मूल्य 8/25

विष्णु पत्नी भगवती महामाया श्री लक्ष्मी की पौराणिक कथा तथा पूजा, आराधना, उपासना, ध्यान, स्तुति विषयक यन्त्र, मन्त्र, स्तोत्र, कवच, भजन, आरती, चालीसा आदि का वृहद संकलन।

सचित्र एवं सजिल्द पुस्तक का मूल्य 8/25

छोटी पुस्तक 'श्री लक्ष्मी अराधना' मूल्य 1/50

वी०पी०पी० द्वारा मंगाने का एक मात्र सबसे बड़ा पुस्तक भण्डार

हिन्द पुस्तक भण्डार खारी बावली, दिल्ली

काली-उपासना
(प्रथम खण्ड)

कालीतत्त्व निरूपण, कादि क्रम, हादिक्रम, क्रोधादि क्रम, वागादि क्रम, नादि क्रम, दादिक्रम तथा प्रणवादि क्रम के ध्यान, भगवती के स्वरूप का यथार्थ वर्णन, भाव, मन्त्र, श्रद्धा, ध्यान, जप, क्रीं मन्त्र, काली-उपासना के विविध मन्त्र आदि।
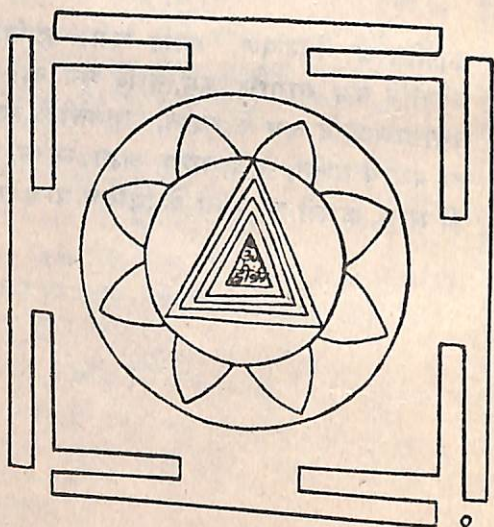
काली पूजन यन्त्र संख्या- १

काली-तत्त्व निरूपण

काली और उनके भेद

'काली' का शब्दार्थ है—'काल:' अर्थात् 'शिव: तस्य पत्नी काली।' अर्थात् 'काली' शिव की पत्नी का नाम है। ये भगवती आदि-अन्त-रहित-अजन्मा और सम्पूर्ण जगत् की स्वामिनी हैं। ये काल को उत्पन्न करने वाली तथा अरूपा हैं। साकार-उपासकों की सुविधा के हेतु तन्त्र आदि शास्त्रों में इन्हीं निराकारा भगवती के गुण और क्रिया-रूप ध्यान तथा स्वरूप आदि का वर्णन किया गया है।

'मार्कण्डेय पुराण' के सप्तशती खण्ड में वर्णित अम्बिका के ललाट से उत्पन्न पौराणिक काली इन आद्या काली से भिन्न हैं। वे दुर्गा की त्रिमूर्तियों में से एक हैं और उनका ध्यान भी इनसे सर्वथा पृथक् है।

तन्त्र शास्त्रों में आद्या भगवती के दस मुख्य भेद कहे गये हैं—

> कालिका च महाविद्या षोडशी भुवनेश्वरी।
> भैरवी छिन्नमस्ता च विद्या धूमावती तथा॥
> बगला सिद्ध विद्या च मातङ्गी कमलात्मिका।
> एता दश महाविद्याः सर्वतन्त्रेषु गोपिताः॥

अर्थात्—(१) काली, (२) महाविद्या (तारा), (३) षोडशी, (४) भुवनेश्वरी, (५) भैरवी, (६), छिन्नमस्ता, (७) धूमावती, (८) बगला, (९) मातङ्गी और (१०) कमलात्मिका—ये दस महाविद्याएं हैं। इनमें भगवती काली मुख्य हैं। काली के अनन्त तथा असंख्य भेद हैं। परन्तु आठ भेद मुख्य माने जाते हैं जो इस प्रकार हैं—

(१) चिन्तामणि काली, (२) स्पर्शमणि काली, (३) सन्तति

प्रदा काली, (४) सिद्धि काली, (५) दक्षिणा कांली, (६) कामकला काली, (७) हंस काली तथा (८) गुह्य काली।

काली क्रम दीक्षा में इन्हीं आठ कालियों के मन्त्र दिये जाते हैं। इन आठ भेदों में मुख्य 'दक्षिणा काली' हैं। इन्हीं को 'दक्षिण कालिका', 'दक्षिणा कालिका' आदि नामों से सम्बोधित किया जाता है। भगवती दक्षिणा काली ही सर्व साधारण द्वारा विशेष-उपास्य हैं।

'दक्षिणा काली' नाम से भगवती से भगवती को क्यों पुकारा जाता है—इस सम्वन्ध में 'निर्वाण तन्त्र' का कथन इस प्रकार है--

दक्षिणस्या दिशि स्थाने संस्थितश्च रवेः सुतः।
काली नाम्ना पलायेतभीति युक्तः समन्ततः।।
अतः सा दक्षिणा काली त्रिषुलोकेषु गीयते।

अर्थात् दक्षिण दिशा में रहने वाला सूर्य का पुत्र 'यम' काली का नाम सुनते ही भयभीत होकर भागता है अर्थात् वह काली-उपासकों को नरक में नहीं ले जा सकता, इसलिए भगवती काली को तीनों लोकों में 'दक्षिणा काली' कहा जाता है।

देवी के 'दक्षिण काली' नाम के सम्वन्ध में शास्त्रों के अन्य मत इस प्रकार हैं—

यथा कर्म समाप्तौ च दक्षिणा फलसिद्धिदा।
तथा मुक्तिरसौ देवी सर्वेषां फलदायिनी ।।१।।
पुरुषो दक्षिणः प्रोक्तो वामा शक्तिर्निगद्यते।
वामा सा दक्षिणं जीत्वा महामोक्षप्रदायिनी।
ततः सा दक्षिणा नाम्ना त्रिषु लोकेषु गीयते ।।२।।
दक्षिणा मूर्ति भैरवाराधिता तस्मात् दक्षिणा प्रकीर्तिताः ।।३।।
वरदानेषु चतुरां तेनेयं दक्षिणा स्मृता ।।४।।

भावार्थ—(१) जिस प्रकार कर्म की समाप्ति पर दक्षिणा फल

की सिद्धि देने वाली होती है, उसी प्रकार देवी भी सभी फलों की सिद्धि को देती हैं, इसोलिए उनका नाम 'दक्षिणा' है।

(२) पुरुष को 'दक्षिण' कहा गया है तथा शक्ति को 'वामा' कहा जाता है। वही 'वामा' 'दक्षिण' पर विजय प्राप्त कर महामोक्ष प्रदायिनी बनी, इसीलिए तीनों में उसे 'दक्षिणा' कहा जाता है।

(३) दक्षिणा मूर्ति भैरव ने इनकी सर्वप्रथम आराधना की, इस हेतु भगवती का नाम 'दक्षिणा काली' है।

(४) देवी वरदान देने में बड़ी चतुर हैं, इसीलिए उन्हें 'दक्षिणा' कहा जाता है।

इस प्रकार भगवतो के 'दक्षिणा' नाम के सम्बन्ध में अनेक व्याख्याएं हैं। जिस भक्त को जो व्याख्या रुचिकर हो, उसे वही अंगीकार कर लेनी चाहिए।

भगवती काली अनादिरूपा आद्या विद्या हैं। वे ब्रह्म स्वरूपिणी तथा कैवल्पदात्री हैं। अन्य महाविद्याएं मोक्षदात्री कही गई हैं। उनमें तारा सत्वगुणात्मिका एवं तत्त्व विद्यादायिनी हैं। षोडशी (त्रिपुर सुन्दरी), भुवनेश्वरी तथा छिन्नमस्ता रज:प्रधाना एवं सत्वगुणात्मिका है। अत: ये गौण मुक्तिदात्री हैं। धूमावती, भैरवी, बगला, मातङ्गी तथा कमला—ये सब तम: प्रधाना हैं। इनकी उपासना विशेषत: षट्कर्मों में की जाती है।

शास्त्रों में कहा गया है—

पञ्चशून्ये स्थिता तारा सर्वान्ते कालिका स्थिता।

अर्थात् पांचों शून्य अर्थात् पांचों तत्त्वों तक सत्वत्वात्मिका शक्ति तारा को स्थिति है और सबके अन्त में काली की स्थिति है। अर्थात् जब महाप्रलय में आकाश का भी लय हो जाता है, तब यही भगवती काली आद्याशक्ति चित्-शक्ति के रूप में विद्यमान रहती हैं। अस्तु ये नित्य हैं, अनादि हैं, अनन्त हैं और सबकी

स्वामिनी हैं। इन्हीं भगवती की वेद में भद्रकाली के रूप में स्तुति की गई है। ये अजन्मा और निराकार स्वरूपा हैं। भावुक भक्तजन अपनी भावनाओं तथा देवी के गुण-कर्मों के अनुरूप उनके काल्पनिक साकार रूप की उपासना करते हैं। अपने ऐसे भक्तों को भगवती काली युक्ति-भुक्ति प्रदान करती हैं, क्योंकि वे अपने भक्तों पर स्नेह रखने वाली तथा उनका कल्याण करने वाली हैं।

भगवती का ध्यान

भगवती के ध्यान के अनेक क्रम हैं, उनमें (१) कादि, (२) हादि, (३) क्रोधादि, (४) वागादि, (५) नादि, (६) दादि तथा (७) प्रणवादि क्रमों में ध्यान के स्वरूप प्रथक्-प्रथक् हैं। इन क्रमों के विषय में नीचे लिखे अनुसार समझना चाहिए।

(१) जिन मन्त्रों के आदि अक्षर 'ककार' शब्द से प्रारम्भ होते होते हैं; यथा—'क्रीं' उसे 'कादि क्रम' कहा जाता है। कादि क्रम के मन्त्र एकाक्षर 'क्रीं' से लेकर लक्षाक्षर तक के कहे गए हैं।

(२) जिन मन्त्रों के आदि अक्षर 'हकार' शब्द से प्रारम्भ होते हैं, यथा—'ह्रीं' उसे 'हादि क्रम' कहा जाता है।

(३) जिन मन्त्रों के आदि अक्षर क्रोध बीज 'हूं' से प्रारम्भ होते हैं, उसे 'क्रोधादि क्रम' कहा जाता है।

(४) जिन मन्त्रों के अन्त में नमः शब्द हो, उसे 'नादि क्रम' कहा जाता है।

(५) जिन मन्त्रों के आदि में 'द' अक्षर हो जैसे '**दक्षिणे कालिके** स्वाहा आदि, उसे दादि **क्रम** कहा जाता है।

(६) जिन मन्त्रों के आदि में 'प्रणव' अर्थात् **ॐ बीज हो अर्थात्** जो मन्त्र ॐ से प्रारम्भ हो, उसे 'प्रणवादि क्रम' **कहा जाता है।**

उक्त विभिन्न क्रमों के ध्यान इस प्रकार बताये गए हैं—

'कादि' क्रम का ध्यान

कराल वदनां घोरां मुक्त केशीं चतुर्भुजां।
कालिकां दक्षिणां दिव्यां मुण्डमाला विभूषिताम्॥
सद्यः छिन्नाशिरः खड्गवामाधोर्ध्वकराम्बुजाम्।
अभयं वरदञ्चैव दक्षिणोर्ध्वाधपाणिकाम्॥
महामेघ प्रभां श्यामां तथा चैव दिगम्बरीम्।
कण्ठावसक्तमुण्डाली गलद्रुधिर चर्चिताम्।
कर्णावतंसतानीत शवयुग्मभयानकाम्।
घोरदंष्ट्रा करालास्यां पीनोन्नत पयोधरीम्॥
शवानां कर संघांतैः कृतकाञ्ची हसन्मुखीम्।
सृक्कद्वयगलद्रक्तधारण विस्फुरिताननाम्॥
घोर रावां महारौद्रीं श्मशानालयवासिनीम्।
बालर्क्कमण्डलाकार लोचनत्रितयान्विताम्॥
दन्तुरां दक्षिणव्यापि मुक्तालम्बिक चोच्चयाम्।
शवरूपमहादेव हृदयोपरिसंस्थितामा॥
शिवाभिर्घोररावाभिश्चतुर्दिक्षु समन्विताम्।
महाकालेन च समं विपरीत रतातुराम्॥
सुख प्रसन्न वदनां स्मेराननसरोरुहाम्।
एवं सञ्चिन्तयेत् कालीं सर्वकामार्थ सिद्धिदाम्॥

'हादि' क्रम का ध्यान

देव्याध्यानमथो वक्ष्ये सर्वदेवोऽपशोभितम्।
अञ्जनादिनिभां देवी करालवदनां शिवाम्॥
मुंडमालावली कीर्णां मुक्तकेशीं स्मिताननाम्।
महाकालहृदम्भोजस्थितां पीन पयोधराम्॥
विपरीतरतासक्तां घोरदंष्ट्रां शिवेन वै।
नागयज्ञोपवीताञ्च चन्द्रार्द्ध कृत शेखराम्॥
सर्वालङ्कार संयुक्तां मुक्तामणिविभूषिताम्।

मृतहस्तसहस्त्रै स्तु बद्धकाञ्चीदिगम्बराम् ॥
शिवा कोटि सहस्त्रै स्तु योगिनीभिर्विराजिताम् ।
रक्तपूर्णाभुखाम्भोजां सद्यपान प्रमत्तिकाम् ॥
सद्यः छिन्नशिरः खड्गवामोर्ध्वाधः कराम्बुजाम् ।
अभीवरददक्षोर्ध्वाधः करां परमेश्वरीम् ॥
वह्न्यर्कशशिनेत्राञ्च रण विस्फुरिताननाम् ।
विगतासु किशोराभ्यां कृत वर्णावतंसिनीम् ॥
कर्णावसक्त मुण्डाली गलद्रुधिर चर्चिताम् ।
श्मशान वह्नि मध्यस्थां ब्रह्म केशव वन्दिताम् ॥
सद्यः कृत्त शिरः खड्गवराभीति कराम्बुजम् ।

'क्रोधादि' क्रम का ध्यान

दीपं त्रिकोणं विपुलं सर्वतः सुमनोहरम् ।
कूजत् कोकिल नादाढ्यं मन्दमारुतसेवितम् ॥
भृङ्गपुष्पलताकीर्णं मुद्यच्चन्द्र दिवाकरम् ।
स्मृत्वा सुधाब्धि मध्यस्थं तस्मिन् माणिक्य मण्डपे ॥
रत्नसिंहासने पद्मे त्रिकोणो ज्ज्वलकर्णिके ।
पीठे सञ्चिन्तयेत् देवीं साक्षात् त्रैलोक्य सुन्दरीम् ॥
नीलनीरज संकाशां प्रत्यालीढपदस्थिताम् ।
चतुर्भुजां त्रिनयनां खण्डेन्दुकृत शेखराम् ॥
लम्बोदरीं विशालाक्षीं श्वेतप्रेतासन स्थिताम् ।
दक्षिणोर्ध्वेन निस्तृंशं वामोर्ध्व नीलनीरजम् ॥
कपालंदधतीञ्चैव दक्षिणाधश्च कर्त्रिकाम् ।
नागाष्टकेन सम्बद्ध जटाजूटां सुरार्चिताम् ॥
रक्तवर्तुल नेत्राश्च प्रव्यक्त दशनोज्ज्वलाम् ।
व्याघ्र चर्मपरीधानां गन्धाष्टक प्रलेपिताम् ॥
ताम्बूलपूर्ण वदनां सुरासुर नमस्कृताम् ।
एवं सञ्चिसयेत कालीं सर्वाभीष्ट प्रदां शिवाम् ॥

'वागादि' क्रम का ध्यान

चतुर्भुजां कृष्णवर्णां मुण्डमालाविभूषताम् ।
खड्गञ्च दक्षिणे पाणौ विभुतीं सशरं धनुः ॥
मुण्डञ्च खर्परञ्चैव क्रमाद् वामे च विभ्रतीम् ।
द्या लिखन्ती जटामेकां विभ्रतीं शिरसा स्वयम् ॥
मुण्डमालाधारां शीर्षे ग्रीवायामपि सर्वदा ।
वक्षसा नागहारं तु विभ्रतीं रक्तलोचनाम् ॥
कृष्णवर्णधरांदिव्यां व्याघ्राजिनसमन्विताम् ।
वामपादं शवहृदि संस्थाप्य दक्षिणं पदम् ॥
विन्यस्य सिंहपृष्ठे च लेलिहानां शवं स्वयम् ।
साट्टहासां महाशवयुक्तां च विभीषिणाम् ॥
एवं विचिन्त्या भक्तैस्तु कालिका परमेश्वरी ।
सततं भक्तियुक्तैस्तु भोगैश्वर्य्यामभीप्सुभिः ॥

'नादि' क्रम का ध्यान

खड्गञ्च दक्षिणे पाणौ विभ्रतीन्दीवरद्वयम् ।
कर्त्रकां खर्परञ्चैव क्रमाद् वामेन विभ्रतीं ॥

दृष्टव्य—शेष ध्यान वागादि क्रम के अनुसार समझना चाहिए ।

'दादि' क्रम का ध्यान

सद्यः कृन्तशिरः खड्गमूर्ध्वंद्वय कराम्बुजाम् ।
अभयं वरदं तैव तयोर्द्वय करान्विताम् ॥

दृष्टव्यः—शेष ध्यान कादि क्रम के अनुसार समझना चाहिए ।

'प्रणवादि' क्रम का ध्यान

इस क्रम का ध्यान कादि क्रम के अनुसार समझना चाहिए ।

भगवती का वर्ण

भगवती का वर्ण 'काला' है । 'महानिर्वाण' तन्त्र में लिखा है—

श्वेतपितादि को वर्णो यथा कृष्णे विलीयते ।
प्रविशन्ति तथा काल्यां सर्वभूतानि शैलजे ॥
अतस्तस्याः कालशक्तेर्निगुणाया निराकृतेः ।
हितायाः प्राप्त योगानां वर्णः कृष्णेनिरूपितः ॥

भावार्थ—जिस प्रकार श्वेत, पीत आदि रंग काले वर्ण में समा जाते हैं, उसी प्रकार सब जीवों का लय काली में ही होता है । अतः कालशक्ति निर्गुणा निराकार काली भगवती का वर्ण काला ही निरूपित किया गया है ।

कुछ तन्त्रों में काली का वर्ण काला तथा रक्त (लाल) दोनों ही बताये गए हैं, परन्तु यह अन्तर स्पष्ट कर दिया गया है कि भगवती दक्षिणा काली का वर्ण काला है तथा भगवती त्रिपुर सुन्दरी का रंग लाल है । यथा—

कालिका द्विविधा प्रोक्ता कृष्णा-रक्त प्रभेदतः ।
कृष्णा तु दक्षिणा प्रोक्ता रक्ता तु सुन्दरी मता ॥
इयं नारायणी काली तारा स्यात् शून्यवाहिनी ।
सुन्दरी रक्त काली तत् भैरवी नादिनी तथा ॥

इससे निष्कर्ष निकलता है कि भगवती दक्षिणा काली का वर्ण 'श्याम' है । अस्तु काली के उपासकों को उनके श्याम वर्ण शरीर की ही भावना करनी उचित है ।

भगवती का यथार्थ रूप

उपासना तथा तन्त्र ग्रंथों में भगवती के स्वरूप का वर्णन साङ्केतिकरूप में किया गया है । उन संकेतों का भावार्थ समझे बिना अर्थ का अनर्थ हो जाता है । अतः उपासकों की जानकारी के लिए भगवती के स्वरूप के सम्बन्ध में जो वर्णन शास्त्रों में है, उसका यथार्थ तात्पर्य क्या है, इस विषय पर यहां संक्षिप्त प्रकाश डाला जाता है ।

श्मशानवासिनी

भगवती को 'श्मशानवासिनी' कहा गया है । श्मशान का जो लौकिक अर्थ किया जाता है कि 'जहां शव जलाये जाते हों वह श्मशान है' वह यहां लागू नहीं होता। 'श्मशान' का भावार्थ निम्नानुसार समझना चाहिए ।

(१) पंच महाभूत चिद्-ब्रह्म में लय होते हैं। आद्याकाली चिद्-ब्रह्म स्वरूपा हैं। लय होने के स्थान को ही श्मशान कहा जाता है। इस विधि से 'जिस स्थान पर पंच महाभूत लय हों, वही श्मशान है और भगवती वहीं निवास करती हैं।'

(२) सांसारिक काम-क्रोध रागादि जिस स्थान पर भस्म होते हों, वही स्थान श्मशान है। इसके भस्म होने का मुख्य स्थान 'हृदय' ही है। जो हृदय काम-क्रोध रागादि से रहित होता है उसी श्मशान-वत् हृदय में भगवती काली निवास करती हैं।

अस्तु, भगवती के साधकों को चाहिए कि वे अपने हृदय में काली को स्थापित करने से पूर्व, उसे श्मशानवत् बना लें अर्थात् काम-क्रोध रागादि को पूर्णतः नष्ट कर दें।

श्मशान में प्रज्ज्वलित चिता

श्मशान में चिता के प्रज्ज्वलित होने का आशय है—हृदय में ज्ञानाग्नि का निरन्तर प्रज्ज्वलित बने रहना। अस्तु, साधक को अपने श्मशानवत् हृदय में ज्ञानाग्निरूपी चिता को प्रज्ज्वलित रखना चाहिए।

शिवा, कङ्काल, अस्थि, शवमुण्ड आदि

श्मशान में शिवा (गीदड़ियां) कङ्काल, अस्थि तथा शवमुण्ड समूह की उपस्थिति का तात्पर्य इस प्रकार समझना चाहिए—

शिवा, शवमुण्ड आदि अपञ्चीकृत महाभूत हैं तथा अस्थि-कङ्काल आदि उज्ज़वल वर्ण सत्वगुण के बोधक हैं।

भगवती का आसन

भगवती का आसन 'शव' कहा गया है। इसका आशय यह है कि जब 'शिव' से शक्ति पृथक् हो जाती है तो 'शिव' 'शव' रह जाता है। शिव का अंश स्वरूप साधारण जीव प्राणशक्ति के हट जाने पर मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। जिस समय उपासक अपनी प्राणशक्ति को चित्शक्ति में समाहित कर देता है, तब उसका पञ्चभौतिक शरीर 'शव' के समान निर्जीव हो जाता है। उस स्थिति में भगवती आद्याशक्ति उसके ऊपर अपना आसन करती हैं अर्थात् उस पर अपनी कृपा बिखेरती हैं और स्वयं में सन्निहित कर उसे भौतिक प्रपञ्च से मुक्त कर देती हैं। शवासन का मूल रहस्य यही है।

शशि शेखरा

'भगवती के ललाट पर चन्द्रमा स्थित है'—इसका तात्पर्य यह है कि भगवती परमात्मरूपिणी तथा चिदानन्दमयी हैं। उनके ललाट पर अमृत्व बोधक चन्द्रमा निरूपित है।

मुक्तकेशी

'भगवती के बाल बिखरे हुए हैं'—इसका आशय यह है कि भगवती केश विन्यासादि-विलास के विकारों से रहित निर्विकार हैं अथवा वे तीनों गुणों से मुक्त-त्रिगुणातीता हैं।

त्रिनेत्रा

'भगवती के तीन नेत्र हैं—इसका आशय यह है कि सूर्य, चन्द्र तथा अग्नि—ये तीनों ही भगवती के नेत्र स्वरूप हैं। अर्थात् भगवती में सम्पूर्ण जगत् को सम्यक् प्रकार से देखने की शक्ति है अथवा यह कि भगवती तीनों कालों—भूत, भविष्य तथा वर्तमान—को देखने वाली हैं।

'महानिर्वाण तन्त्र' में यही बात इस प्रकार कही गई है—

शशिसूर्याग्निभिर्नेत्रैरखिलं कालिका जगत्।
सम्पश्यति यतस्तस्मात् कल्पितं नयनत्रयम्॥

महाघोर बालावतंसा

'भगवती अपने कानों में बालक का शव पहने हैं'—इसका आशय यह है कि वे बाल-स्वरूप निर्विकार साधक को अपने कानों के समीप रखती हैं अर्थात् उस पर अपनी कृपा बरसाती हैं। आलंकारिक भाषा में उस पर अपने कान लगाये रखती हैं।

सृक्कद्वयगलद्रक्तधारा

'भगवती के दोनों ओठों के कोनों से रक्त धारा बह रही है'—इस का आशय यह है कि भगवती रजोगुण को निःस्रत कर रही हैं, अतः वे शुद्ध सत्वात्मिका हैं।

प्रकटितरदना

'भगवती के दांत बाहर निकले हैं और वे उनसे बाहर निकली हुई जीभ को दबाये हैं'—इसका आशय यह है कि भगवती रजोगुण तथा तमोगुण रूपी जीभ को अपनी सतोगुण रूपी उज्ज्वलता से दबाये हुए हैं।

यही बात 'स्वरूप व्याख्या' में इस प्रकार कही गई है—

स्वप्रकाश सत्वगुण सूचकदशन पंक्त्या रजोगुण सूचक रक्त वर्णां लोलरसनां दशति। सत्वगुणेन रजस्तमश्च नाशयति इति भावः।

स्मित मुखी

'भगवती मुस्कुरा रही हैं'—इसका आशय यह है कि वे नित्यानन्द-स्वरूपा हैं।

पीनोन्नतपयोधारा

'भगवती के स्तन बड़े तथा उन्नत हैं'—इसका आशय यह है कि

भगवती तीनों लोकों को आहार देकर उनका पालन करने वाली हैं और अपने साधकों को अमरत्वरूपी दुग्धपान कराती हैं अर्थात् मोक्ष-दायिनी हैं।

कण्ठावसक्तमुण्डालीगलद्रुधिर चर्चिता

'भगवती के कण्ठ की मुण्डमाला से रक्त टपक रहा है'—इसका आशय निम्नानुसार समझना चाहिए—

मुण्डमाला के पचास मुण्ड पचास मातृका अर्थात् अक्षर हैं। यह भगवती के शब्द ब्रह्म होने का द्योतक है। उस शब्द गुण से जो रजोगुण टपक रहा है अर्थात् सृष्टि का प्रारम्भ हो रहा है, वही इस रूप का रहस्य है।

'कामधेनु तन्त्र' में यही बात भगवती कालिका के मुख से इस प्रकार कहलाई गई है—

मम कण्ठे स्थितं बीजं पञ्चाशद्वर्णमद्भुतन्।

दिगम्बरा

'भगवती दिगम्बरा हैं'—इसका आशय यह है कि वे माया रूपी आवरण से आच्छादित नहीं हैं, अतः वे दिगम्बरा हैं।

शवानां करसंघातैः कृतकाञ्ची

'भगवती शवों के हाथ की करधनी पहने हैं'—इसका आशय यह है कि कल्पान्त में सभी जीव स्थूल शरीर को त्यागकर, सूक्ष्म-शरीर के रूप में कल्पारम्भ पर्यन्त, जब तक कि उनका मोक्ष नहीं हो जाता, भगवती के कारण शरीर के साथ बने रहते हैं। शव की भुजाओं से आशय जीवों के कर्म की प्रधानता का है और 'वे भुजाएं देवी की जननेन्द्रिय को ढांके हुए हैं'—इसका आशय यह है कि कल्प के पुनः प्रारम्भ होने तक वे जीव देवी की जननेन्द्रिय को आच्छादित किए रहते हैं और तब तक सृष्टि-निर्माण का कार्य स्थगित रहता है।

वामहस्ते कृपाण

'देवी के ऊपर वाले बाएं हाथ में कृपाण है'—इसका आशय यह है कि भगवती ज्ञानरूपी तलवार से साधकों के मोहरूपी मायापाश को काटती हैं। तलवार के बाएं हाथ में होने का अर्थ यह है कि देवी वाममार्ग अर्थात् शिवजी के बताये हुए मार्ग पर चलने वाले उपासक अर्थात् निष्काम भक्तों को ह मुक्ति देती हैं।

छिन्नमुण्डं तथाधः

'देवी के नीचे वाले बायें हाथ में कटा हुआ सिर है'—इसका आशय यह है कि वे अपने निचले हाथ में रजोगुण रहित तत्त्व के आधार ज्ञानरूपी मस्तक को धारण किये हैं।

'विमलानन्दिनी व्याख्या' में भी यही बात कही गई है—

आधोहस्तेन विगतरजं तत्त्वज्ञानाधारं मस्तकं।

सव्येचाभीर्वरञ्च

'देवी के दायें हाथों में अभय तथा वर है'—इसका आशय यही है कि देवी दक्षिणमार्ग अर्थात् सकाम-साधकों को अभय और वर प्रदान करती हैं।

महाकाल सुरता

'देवी महाकाल के साथ विपरीतरता हैं'—इसका आशय यह है कि भगवतो अपनो कालरूपो शक्ति को शक्ति प्रदान कर रही हैं। जब वे निर्गुणा होतो हैं तो महाकाल उन्हीं में सन्निविष्ट हो जाता है और जब सगुणा होती हैं, तब वे महाकाल से युक्त रहती हैं। अस्तु, सृष्टिक्रम में देवी 'विपरीतरता' तथा स्थिात क्रम में 'महाकालेनलालिता' रहती हैं।

नित्ययौवनवती

'देवी नित्य यौवनवती हैं'—इसका आशय यह है कि देवी में

अवस्था सम्बन्धी कोई परिवर्तन नहीं होता। वे नित्य हैं, अतः उनका चित् स्वरूप है।

करालवदना

'भगवती का रूप भयानक है'—इसका आशय यह है कि देवी का विराट् स्वरूप देखकर सामान्यजन भयभीत हो जाते हैं।

निष्कर्ष

उक्त विवरण से जो निष्कर्ष निकलता है, वह इस प्रकार है—

'भगवती दक्षिणा कालिका का वर्ण श्याम है, जिसमें कि सभी रंग सन्निहित हैं। भक्तों के विकार-शून्य हृदय रूपी श्मशान अथवा पंच-महाभूतों से रहित चित् शक्ति के रूप में उनकी अवस्थिति है। उस श्मशान में ज्ञानाग्निरूपी चिता प्रज्ज्वलित रहती है। अपञ्चीकृत महा-भूत रूपी शिवा एवं शवमुण्ड तथा सत्वगुण बोधक अस्थि-कङ्काल विद्यमान हैं। भगवती चित्त् शक्ति में समाहित प्राणशक्तिरूपी शवा-सन पर स्थित हैं। उनके ललाट पर अमृतत्व बोधक चन्द्रमा है और वे त्रिगुणातोत निर्विकारा अयुक्त केशिनी हैं। सूर्य, चन्द्र और अग्नि—ये तीनों उनके नेत्र हैं, जिनसे वे तीनों कालों को देखती हैं। वे बाल-स्वरूप साधकों की ओर कान रखती हैं। शुद्ध सत्वात्मिका होने के कारण रजोगुण को निःसृत करती हैं। वे सतोगुण रूपी उज्ज्वल दांतों से रजोगुण तथा तमोगुण रूपी जीभ को दबाये हैं। वे नित्यानन्द स्व-रूपिणी मुस्कान लिए हैं तथा समस्त संसार का पालन करने में सक्षम होने के कारण वे उन्नत पीन पयोधरा हैं। वे पचास मातृका अक्षरों की माला धारण किये हैं तथा माया रूपी आवरण से मुक्त हैं। कल्पान्त में सभी जीव मोक्ष न होने तक उन्हीं के आश्रित रहते हैं तथा पुनः सृष्ट्यारम्भ में वे सबको जन्म देती हैं। वे अपने निष्काम भक्तों के मायारूपी पाश को ज्ञानरूपी तलवार से काट देती हैं तथा रजोगुण रहित तत्व के आधार रूपी मस्तक को ग्रहण किये हुए हैं।

वे अपने भक्तों को अभय तथा वर प्रदान करती हैं। वे कालरूपी शक्ति को शक्ति प्रदान करने वाली अपरिवर्तनीया तथा विराट् रूपा हैं।'

अन्य विषय

काली-उपासना सम्बन्धी तन्त्रों में भी इसी प्रकार सांकेतिक रूप से सभी बातें कही गई हैं। उनके यथार्थ भाव को न समझकर लोग अर्थ का अनर्थ कर बैठते हैं, अतः उनके यथार्थ आशय को नीचे लिखे अनुसार समझना चाहिए—

मातृ योनि का अर्थ मूलाधार स्थित त्रिकोण है। लिङ्ग जीवात्मा को कहा जाता है। जीवात्मा की भगिनी कुण्डलिनी है।

जपमाला के सुमेरु को भी 'मातृयोनि' कहा जाता है। माला के अन्य दानों को 'योनि' कहा जाता है।

मद्यपान से आशय कुण्डलिनी को जगाकर तथा ऊपर उठाकर षट् चक्रभेदन कर, सहस्रार में जाकर शिव-शक्ति सामरस्यानन्दामृत का वारम्वर पान करने से है। इस विधि के द्वारा कुण्डलिनी को मूलाधार चक्र, अर्थात् पृथ्वी तत्व पर ले आने तथा उसे फिर उठाकर सहस्रार में जाकर उक्त अमृत का पान करने से पुनर्जन्म नहीं होता।

इसी प्रकार अन्य शब्दों के भी साङ्केतिक भावार्थ हैं, उन्हें गुरु मुख से सुनकर जान लेना चाहिए।

भाव

देवी-उपासना के तीन भाव कहे गए हैं: (१) पशुभाव, (२) वीरभाव तथा (३) दिव्यभाव।

मनुष्य संसार के सब प्राणियों में सर्वोत्तम पशु है। अतः सामान्य मनुष्य इसी भाव से देवी का पूजन करते हैं। वीरभाव तथा दिव्य भाव उन्नत-साधना के अङ्ग हैं। गुरु द्वारा निर्देशित मार्ग के आधार

पर ही इन भावों की उपासना की जाती है। ग्रंथ तो केवल विद्वानों के लिए होते हैं। केवल पुस्तक को पढ़कर गुरु की सहायता लिए बिना ही, किसी प्रकार की उपासना में प्रवृत्त होना हानिकारक ही सिद्ध होता है।

मन्त्र

भगवती काली की उपासना के अनेक मन्त्र हैं। उनमें 'बाईस अक्षर' का मन्त्र मुख्य माना जाता है। अगले प्रकरण में भगवती की उपासना के अनेक मन्त्रों का विवरण दिया गया है। साधक को चाहिए कि वह जिस मन्त्र को भी अपने लिए उपयुक्त समझे उसी का साधन करे, परन्तु किसी भी मन्त्र की सिद्धि के लिए गुरु से दीक्षित होना अत्यावश्यक है। गुरु की कृपा, आशीर्वाद और मार्ग-दर्शन के बिना कोई भी मन्त्र सिद्ध नहीं हो पाता—यह सदैव स्मरण रखना चाहिए। परम्परागत गुरु योग्य ही होगा—यह आवश्यक नहीं है। अतः अपनी पारिवारिक गुरु परम्परा का कोई विचार न करके जो गुरु श्रेष्ठ, योग्य तथा अपने विषय का विद्वान हो, उसी को गुरु बनाना चाहिए।

श्रद्धा

बिना श्रद्धा के कोई भी साधन सिद्ध नहीं होता। अतः किसी भी साधन को करते समय उसके प्रति पूर्ण श्रद्धालु होना आवश्यक है। अश्रद्धापूर्वक किये गए कर्म तथा साधन निष्फल हो जाते हैं।

ध्यान

उपासना का मुख्य अङ्ग ध्यान है। पूजा-पाठ, जप-तप आदि इसी ध्यान के साधन हैं। ध्यान के बिना पूजा, जप, तप, पाठ आदि का कोई फल नहीं होता। ध्यान के विषय में कहा गया है—

पूजा कोटि समं स्तोत्रं स्तोत्र कोटि समोजपः।
जपकोटि समंध्यानं ध्यान कोटिसमो लयः॥

अर्थात्—करोड़ पूजनों के समान स्तोत्र, करोड़ स्तोत्रों के समान जप करोड़ जपों के समान ध्यान तथा करोड़ ध्यानों के समान लय अर्थात् ध्यान की चरमावस्था है।

भगवती काली के ध्यान के विषय में पहले लिखा जा चुका है, अतः जिस उपासक की जैसी रुचि हो, उसी के अनुसार भगवती का ध्यान करना चाहिए।

जप

ध्यान का प्रारम्भ जप से होता है। मन्त्र के सार्थ-स्मरण को जप कहा जाता है। अर्थात् मन्त्र के वास्तविक अर्थ का अनुभव करते हुए जो जप किया जाता है, वही यथार्थ जप है। केवल मन्त्रोच्चारण करते हुए माला पर उंगली घुमाना ही जप नहीं होता।

देवता के रूप और गुण का मनन करते हुए तथा मन्त्र के यथार्थ अर्थ को जानते हुए जप करना ही उचित है। इस प्रकार का निरन्तर अभ्यास करने से मन्त्र सिद्ध हो जाता है और मन्त्र के सिद्ध हो जाने पर अभीक्षित-फल की प्राप्ति होती है।

'क्रीं' मन्त्र

भगवती काली का एकाक्षरी मन्त्र 'क्रीं' है। इस बीज मन्त्र का बीज 'कं' है, शक्ति 'ईं' है तथा 'रं' कीलक है। आधुनिक पद्धतियों में इस बीज मन्त्र के बीज, शक्ति तथा कीलक का अशुद्ध वर्णन किया गया है। उनमें 'ह्रीं' बीज, 'हूं' शक्ति तथा 'क्रीं' कीलक बताये गए हैं। ये सब बाईस अक्षर वाले मन्त्र के हैं। यह स्मरण रखना आवश्यक है।

एकाक्षर मन्त्र 'क्रीं' काली-प्रणव है। यह चिन्तामणि काली का मन्त्र है। पहले इसी मन्त्र की दीक्षा आवश्यक है। इसके पश्चात् क्रोध बीज द्वय मन्त्र 'स्पर्शमणि काली' का है। अतः दूसरी बार इस मन्त्र की दीक्षा होनी चाहिए। फिर क्रोध बीज, काली बीज तथा माया

बीज यह त्र्यक्षर मन्त्र 'सन्तति प्रदा काली' का है। तीसरी बार इस मन्त्र की दीक्षा होना उचित है। चौथा मन्त्र 'ॐ ह्रीं क्रीं मे स्वाहा' सिद्धि काली का मन्त्र है। इसकी दीक्षा के बाद दक्षिण काली के विद्याराज्ञी बाईस अक्षर वाले मन्त्र की दीक्षा होनी चाहिए। इसके बाद कामकला काली, हंस काली तथा गुह्यकाली के मन्त्रों की क्रमशः दीक्षा होनी चाहिए। इन सबके मन्त्रों का यथाविधि पुरश्चरण करने के उपरान्त द्वितीय विद्या तारा के मन्त्र की दीक्षा होती है, तत्पश्चात् क्रमशः षोडशी तथा छिन्नमस्ता के मन्त्रों की दीक्षा है। तदुपरान्त महाकाल तथा वटुक के मन्त्रों की दीक्षा है।

क्रमदीक्षा का यह क्रम काली-उपासकों को श्रीगुरुमुख द्वारा जानना चाहिए तथा उन्हीं के द्वारा दीक्षा प्राप्त करनी चाहिए।

काली-उपासना

जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि काली-उपासना की विभिन्न विधियां प्रचलित हैं। साधकों को उनका ज्ञान गुरुमुख द्वारा ही प्राप्त हो सकता है। यहां पर हम भगवती दक्षिणा काली तथा उनके कुछ अन्य रूपों की सरल उपासना विधियों को प्रस्तुत कर रहे हैं। इन उपासना-पद्धतियों पर प्रत्येक मनुष्य सरलता-पूर्वक आचरण तथा देवी की प्रसन्नता द्वारा सिद्धि प्राप्त कर सकता है। भगवती काली के विभिन्न मन्त्रों का वर्णन भी उपासना-पद्धति के साथ ही कर दिया गया है। इसके अतिरिक्त भगवती के स्तोत्र, कीलक, कवच, हृदय, शतनाम, अष्टोत्तरशत नाम, सहस्रनाम, सहस्राक्षरी, बीज-सहस्राक्षरी, उपनिष्द, कालीतंत्र आदि विषयों का इसी पुस्तक के दूसरे खण्ड में वर्णन किया गया है। भगवती काली की उपासना के यन्त्रों के स्वरूप भी इस पुस्तक में दिये गए हैं। काली-उपासकों को चाहिए कि वे इन सबके द्वारा यथोचित लाभ प्राप्त करें।

यहां एक बात और भी स्मरण रखने योग्य है कि सामान्यतः काली-साधन में अधिक श्रम अथवा अधिक व्यय करने की आवश्यकता

नहीं होती। शरीर को भी अधिक कष्ट नहीं देना पड़ता। कालिका देवी के मन्त्रों को ग्रहण करने में मन्त्र शुद्धि का विचार तथा अरि-मित्रादि दोषों का विचार भी नहीं करना पड़ता। सामान्य श्रम तथा विधियों से ही वह मन्त्र सिद्ध होकर साधक को अभीक्षित फल प्रधान करते हैं।

भगवती दक्षिण कालिका अर्थात् श्यामा, गुह्यकाली, भद्रकाली, श्मशानकाली तथा महाकाली साधन के मन्त्र नीचे दिये जा रहे हैं। इनके अतिरिक्त अन्य जो मन्त्र हैं, उन सबका वर्णन द्वितीय खण्ड में पूजा-विधि के साथ-साथ किया गया है।

दक्षिण कालिका साधन-मन्त्र

कामत्रयं वह्नि संस्थं रतिविन्दु समन्वित।
कूर्चयुग्मं तथा लज्जायुग्मं च तदनन्तर॥
दक्षिणे कालिके चेति पूर्ववीजानि चोच्चरेत्।
अन्ते वह्नि वधूं दद्यात् विद्या राज्ञी प्रकीर्तिता॥

(१) "क्रीं क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।"

वर्गाद्यं वह्नि संयुक्तं रतिविन्दु विभूषितं।
एकाक्षरो महामन्त्रः सर्वकाम फलप्रदः॥

(२) "क्रीं।"

त्रिमूला तु विशेषेण सर्वशास्त्र प्रबोधिनी।

(३) "क्रीं क्रीं क्रीं।"

मायाद्वयं कूर्चयुग्ममैस्त्रान्तं मादनत्रयं।
माया विन्द्वीश्वरयुतं दक्षिणे कालिके पदं॥
संहारक्रमयोगेन बीजसप्तकमुद्धरेत्।
एकविंशाक्षरो ज्ञेयस्ताराद्यः कालिकामनुः॥

(४) "ऊं ह्रीं ह्रीं हुं हुं क्रीं क्रीं क्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं।"

अयं स्वाहान्ताश्चेत्त्रयोविंशत्यक्षरः

(५) "ऊं ह्रीं ह्रीं हुं हुं क्रीं क्रीं क्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।"

स्वाहा प्रणव रहितश्चेद्विंशत्यक्षरः

(६) "ह्रीं ह्रीं हुं हुं क्रीं क्रीं क्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं।"

कालीवीजद्वयं देवि दीर्घ हूंकारमेव च।
त्र्यक्षरी सा महाविद्या चामुण्डा कालिका स्मृता।

(७) "क्रीं क्रीं हूं।"

प्रणवं पूर्वमुद्धृत्य हृल्लेखा बीजमुद्धरेत्।
रतिवीजं समुद्धृत्य पपञ्चम भगान्वितं।।
ठ द्वयेन समायुक्ता विद्याराज्ञी प्रकीर्तिता।
रतिवीजं निजवीजं व्याख्यातत्वात्।।

(८) "ऊं ह्रीं क्रीं मे स्वाहा।"

मूलवीजं ततः कूर्च लज्जावीजं ततः परं।
महाविद्या महाकाली महाकालेन भाषिता।

(९) "क्रीं हूं ह्रीं।"

प्रजापतिं समुद्धृत्य वह्न्यारूढं ततः प्रिये।
चतुर्थस्वर संयुक्तं नादबिन्दु विभूषितं।।
वीजत्रयं क्रमेणैव तदन्ते वह्नि सुन्दरी।।

(१०) "क्रीं क्रीं क्रीं स्वाहा।"

वीजत्रयं समुद्धृत्य अस्त्रमन्त्रं समुद्धरेत्।
वह्निजायावधि प्रोक्ता विद्या त्रैलोक्यमोहिनी।।

(११) "क्रीं क्रीं फट् स्वाहा।"

वीजत्रयं कूर्चमाया तानि पुनः क्रमात् ।
स्वाहान्ता कथिता विद्या चतुर्वर्ग फलप्रदा ॥

(१२) "क्रीं क्रीं क्रीं हुं ह्रीं क्रीं क्रीं क्रीं हुं ह्रीं स्वाहा ।"

वाग्भवं हृदयं पश्चाद्ब्रह्मारूढं प्रजापतिं ।
चतुर्थस्वर संयुक्तं विन्दुनाद विभूषितं ॥
द्विगुणं च ततः कृत्वा ङेतरं कालिका पदं ।
स्वाहान्ता कथिता विद्या प्रिये एकादशाक्षरी ॥

(१३) "ऐं नमः क्रीं क्रीं कालिकायै स्वाहा ।"

मूलवीजं ततो मायां लज्जावीजं ततः परं ।
दक्षिणे कालिके चेति अस्त्रान्ता समुदीरिता ॥

(१४) "क्रीं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके फट् ।"

मूलवीजं ततो मायां लज्जावीजं ततः परं ।
दक्षिणे कालिके चेति तदन्ते वह्नि सुन्दरी ॥

(१५) "क्रीं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके स्वाहा ।"

कवच मूल विद्याद्यं तदन्ते भुवनेश्वरी ।
दक्षिणे कालिके चेति अस्त्रान्ता समुदीरिता ॥

(१६) "क्रीं हुं ह्रीं दक्षिणे कालिके फट् ।"

मूलवीज द्वयं ब्रूयात्ततः कूर्चद्वयं वदेत् ।
लज्जायुग्मं समुद्धृत्य सम्बुद्धयन्तं पदद्वयं ॥
पूर्ववत् षट् तथा वीजाद्यन्ते च वह्नि सुन्दरी ।

(१७) "क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं स्वाहा ।"

निजबीजं समुद्धृत्य तदन्ते वह्नि सुन्दरी ।

(१८) "क्रीं स्वाहा ।"

निजवीजद्वयं कूर्चयुग्मं लज्जायुगं ततः ।

स्वाहान्ता कथिता काली सर्वसम्पत्करी मता ॥

(१९) "क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं स्वाहा ।"

निजं कूर्च तथा लज्जा तदन्ते बह्नि सुन्दरी

(२०) "क्रीं हुं ह्रीं स्वाहा ।"

निजवीज त्रयं कूर्चयुग्मं लज्जायुगं ततः ।
स्वाहान्ता कथिता विद्या सर्वसम्पत्करी मता ॥

(२१) "क्रीं क्रीं हुं हु ह्रीं ह्रीं स्वाहा ।"

मूलवीजं समुद्धृत्य समुद्धन्त्यं पदद्वयं ।
स्वाहान्ता कथिता विद्या सर्वशत्रु क्षयङ्करी ॥

(२२) "क्रीं दक्षिणे कालिके स्वाहा ।"

निजवीजं ततः कूर्च ततो मायां समुद्धरेत् ।
पुनस्तानि समुद्धृत्य स्वाहान्ता मोक्षदायिनी ॥

(२३) "क्रीं हुं ह्रीं क्रीं हुं ह्रीं स्वाहा ।"

मूलद्वयं कूर्चयुग्मं तथा लज्जाद्वयं ततः ।
पुनस्तान्येव वीजानि तदन्ते वह्नि सुन्दरी ॥

(२४) "क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं स्वाहा ।"

ब्रह्मत्रयं समुद्धृत्य रति वह्नि विभूषितं ।
नादविन्दुसमाक्रान्तं लज्जा कूर्चद्वयं पुनः ॥
पुनः क्रमेण चोद्धृत्य वह्नि जायावधिर्मनुः ।
षोडशीयं समाख्याता सर्वसम्पत्प्रदायिनी ॥

(२५) "क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं हुं हुं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं हुं हुं स्वाहा ।"

हृदयं वाग्भवं देवि निजवीजयुगं ततः ।
कालिकायै पदं चोक्त्वा तदन्ते वह्नि सुन्दरी ॥

(२) "नमः ऐं क्रीं क्रीं कालिकायै स्वाहा ।"

नमः पाशांकुशो द्वेधा फट् स्वाहा चैव कालिके ।

दीर्घतनुच्छदं काली मनुः पञ्चदशाक्षरः ॥

(२७) "नमः आं आं क्रों क्रों फट् स्वाहा कालिके हूं ।"

ह्याकाली साधन-मन्त्र

इन्द्रादिरूढं वर्गाद्यं रति विन्दुसमन्वितं ।
त्रिगुणं च ततः कृत्वा ईशानं च समुद्धरेत् ॥
षऽठस्वर समायुक्तं विन्दुनादकलान्वितं ।
द्विगुणं च ततः कृत्वा ईश्वद्वय समुद्धरेत् ॥
वामाक्षि वह्नि संयुक्तं नादविन्दु कलान्वितं ।
तद्गुह्ये कालिके प्रोक्ता चाथवा दक्षिणे वदेत् ॥
सप्तवीजं ततः पूर्वक्रमेण योजयेत्ततः ।
वह्नि जायावधिः प्रोक्ता विद्या त्रैलोक्य मोहिनी ॥

(१) "क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं गुह्ये कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।"

अथवा

"क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।"

कामबीजं ततः कूर्च तदन्ते भुवनेश्वरी ।
गुह्ये च कालिके चेति तथा वीजद्वयं भवेत् ॥
स्वाहान्ता कथिता विद्याः सर्वतन्त्रेषु गोपिता ।

(२) "क्रीं हुं ह्रीं गुह्ये कालिके क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।"

कामवीज द्वयं हित्वा भवेद् विद्याचतुर्दशी ।

(३) "क्रीं हूं ह्रीं गुह्ये कालिके हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।"

सप्तवीजं पुरा प्रोक्तं गुह्यान्ते कालिका पुनः ।
स्वाहान्ता कथिता विद्या सर्वतन्त्रेषु गोपिता ॥

(४) "क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं गुह्ये कालिके स्वाहा।"

दक्षिणे पदमाभाष्य भवेत् पञ्चदशाक्षरी ।

(५) "क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे स्वाहा ।"

कामबीजं परित्यज्य अथवा षोडशाक्षरी ।

(६) "हूं हूं ह्रीं ह्रीं गुह्ये कालिके क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा ।"

कामबीजं समुद्धृत्य सम्बुद्धयन्तपरद्वयं ।
पुनः कामं तदन्ते च दद्याद्वह्नेश्च सुन्दरी ।।

(७) "क्रीं गुह्यकालिके क्रीं स्वाहा ।"

दक्षिणे पदमाभाष्य भवेद्विद्या दशाक्षरी

(८) "क्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं स्वाहा ।"

भद्रकाली साधन-मन्त्र

कामबीजादिकं बीजं सर्व पूर्वापरे यजेत् ।
भद्रकाली तथा ङेन्तां बीजमध्ये नियोजयेत् ।।
स्वाहान्ता कथिता विद्या विंशवर्णात्मिका परा ।

(१) "क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं भद्रकाल्यै क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा ।"

प्रसादबीजमुद्धृत्य कालीति पदमुद्धरेत् ।
महाकालिपदं चोक्त्वा किलियुग्म मतः परं ।
ह्रीं कालि अस्त्रमग्नि जायान्तो ऽयं महामनुः ।।

(२) "भद्रकाली महाकालि किलि किलि फट् स्वाहा ।"

श्मशान काली साधन-मन्त्र

सप्तबीजं समुद्धृत्य श्मशानकालि वै तथा ।
पुनबीज क्रमेणैव स्वाहान्ता सर्वसिद्धिदा ।।

(१) 'क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं श्मशानकालि क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा ।"

वाणीमायां ततो लक्ष्मीं कामबीजमत: परं।
कालिके सम्पुटत्वेन चतुष्कं बीजमालिखेत्॥

(२) ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं कालिके क्लीं श्रीं ह्रीं ऐं।"

कामबीजं समालिख्य कालिकायै समालिखेत्।
नमोऽन्तेन च देवेशि सप्तार्णो मनुरुत्तम:॥

(३) "क्लीं कालिकायै नम:।"

महाकाली साधन-मन्त्र

बीजादि चोच्चरेत् पूर्वं महाकालि पदं ततः।
तदन्ते सप्तबीजानि स्वाहान्ता सर्वसिद्धिदा॥

(१) "क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं महाकालि क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।"

तथा

(२) "फ्रें फ्रें क्रों क्रों पशून गृहाण हुं फट स्वाहा।"

काली मन्त्र-दीपनी
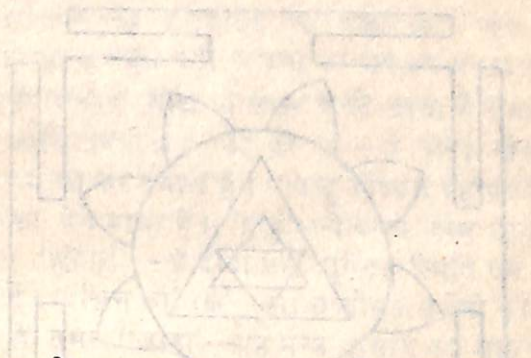
तुम्बुरुर्मा सवह्निस्थो मायास्वर समन्वितः।
नादबिन्दु समायुक्तः कालीविद्यासु दीपनी॥

(१) "क्रीं क्रीं।"

निर्देश—इन दोनों बीजों को जप के आरम्भ में सात बार जप कर, जप के अन्त में भी सात बार जपना चाहिए।

काली-उपासना
(द्वितीय-खण्ड)

काली-साधन मन्त्र, पूजा-प्रणाली, न्यास, यन्त्र, पीठ पूजा, आवरण-पूजा, भैरव-पूजा, देवी-अस्त्र-पूजन, ध्यान, गुह्यकाली. भद्रकाली, श्मशानकाली तथा महाकाली के मन्त्र, पुष्पांजलि, पुरश्चरण की विधि आदि।

2
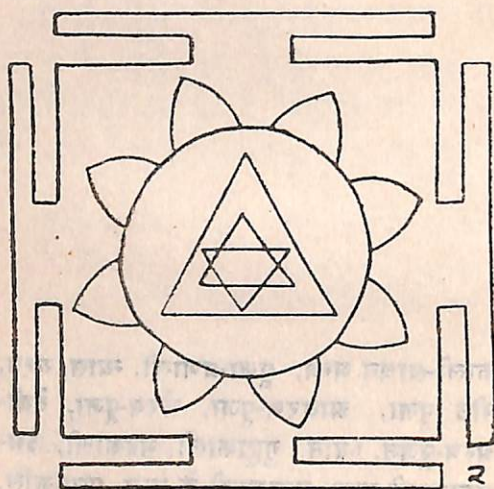
काली-साधन

द्वाविंशक्षर मन्त्र

क्रीं क्रीं क्रीं ह्रूं ह्रूं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं ह्रूं ह्रूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

दक्षिणकालिका का यह बाईस अक्षर का मन्त्र सब मन्त्रों में प्रधान माना गया है। इस मन्त्र के वर्णों का अर्थ इस प्रकार है—

"जलरूपी 'ककार' मोक्ष को प्रदान करने वाला है तथा अग्नि-रूपी 'रेफ' सर्वतेजोमयी है। 'क्रीं क्रीं क्रीं'—ये तीनों बीज सृष्टि, स्थिति एवं लय को करने वाले हैं। 'विन्दु' निष्कल ब्रह्मरूप है, अतः कैवल्य फल को देने वाला है। 'ह्रूं ह्रूं'—ये दोनों बीज शब्दज्ञान को देने वाले हैं। 'ह्रीं ह्रीं'—ये दोनों बीज सृष्टि, स्थिति एवं लय को करने वाले हैं। 'दक्षिण कालिके'—इस सम्बोधन से देवी का सामीप्य प्राप्त होता है तथा 'स्वाहा'—यह मन्त्र संसार का मातृ स्वरूप है तथा समस्त पापों को क्षय करने वाला है।"

पूजा-प्रणाली

सर्वप्रथम सामान्य रूप से प्रातः कृत्यादि करके मन्त्र द्वारा आच-मन करे। 'क्रीं'—इस मन्त्र से तीन बार आचमनीय जल का पान करके—

ॐ काल्यै नमः।
ॐ कपाल्यै नमः।

इस मन्त्र से दोनों ओष्ठों का दो बार मार्जन करे। तदुपरान्त—

ॐ कुल्वायै नमः—इस मन्त्र से हस्त प्रक्षालन करके **ॐ कुरु कुरु कुल्वायै नमः**—इस मन्त्र से मुख तथा **ॐ विरोधिन्यै नमः**—इस मन्त्र से दक्षिण कालिका **ॐ विप्रचित्तायै नमः**—इस मन्त्र से

वाम नासिका ॐ **उग्रायै नमः**—इस मन्त्र से दक्षिण नेत्र, ॐ **उग्र-प्रभायै नमः**—इस मन्त्र से वाम नेत्र, ॐ **दीप्तायै नमः**—इस मन्त्र से दक्षिण कर्ण, ॐ **नीलायै नमः**—इस मन्त्र से वामकर्ण, ॐ **धनायै नमः**—इस मन्त्र से नाभि, ॐ **वलाकायै नमः**—इस मन्त्र से छाती, ॐ **मात्रायै नमः**—इस मन्त्र से मस्तक, ॐ **मुद्रायै नमः**—इस मन्त्र से दाएं कन्धे तथा ॐ **नित्यायै नमः**—इस मन्त्र से वायें कंधे का स्पर्श करे।

इस प्रकार आचमन करके सामान्य पूजा-पद्धति के नियमानुसार भूत-शुद्धि तक सब कार्य करके मा बीज 'ह्रीं'—इस मन्त्र से यथाविधि प्राणायाम करे। तत्पश्चात् ऋष्यादिन्यास करना चाहिए।

ऋष्यादिन्यास

ऋष्यादि न्यास की विधि इस प्रकार है—

अस्य मन्त्रस्य भैरव ऋषिरुष्णिक्छन्दो दक्षिण कालिका देवता ह्रीं बीजं हूं शक्तिः क्रीं कीलकं पुरुषार्थ सिद्ध्यर्थे विनियोगः।

'काली क्रम' में लिखा है—आदि बीज का कीलक चतुर्वर्ग के फल को देने वाला है। कीलक की विधि इस प्रकार है—

शिरसि भैरव ऋषये नमः
मुखे उष्णिक्छन्दसे नमः
हृदि दक्षिण कालिकायै देवतायै नमः
गुह्ये ह्रीं बीजाय नमः
पादयोः हूं शक्तये नमः
सर्वाङ्गे क्रीं कीलकायै नमः

इसके उपरान्त कराङ्गन्यास करना चाहिए। 'कालीतन्त्र' में कराङ्गन्यास के सम्बन्ध में यह लिखा है—

अङ्गन्यास करन्यासौ यथावदभिधीयते।
भैरवो ऽस्य ऋषिः प्रोक्त उष्णिक्छन्द उदाहृतम्॥

देवता कालिका प्रोक्ता लज्जाबीजं तु बीजकम् ।
कीलकं चाद्य बीजंस्याच्चतुर्वर्ग फल प्रदम् ॥
शक्तिश्च कूर्चबीजस्यादनिरुद्धा सरस्वती ।
कवित्वार्थो विनियोग स्यादि त्यादि तेन मायया ॥
षड्दीर्घ मात्रा बीजेन प्रणवाद्येन कल्पयेत् ॥

कराङ्गन्यास की विधि

'वीरतन्त्र' में कराङ्गन्यास की विधि इस प्रकार बताई गई है—

ॐ ह्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ।
ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा ॥
ॐ ह्रूं मध्यमाभ्यां वषट् ।
ॐ ह्रैं अनामिकाभ्यां हुं ।
ॐ ह्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट् ।
ॐ ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् ॥

इस प्रकार करान्यास करके ॐ हृदयाय नमः—इत्यादि क्रम से अङ्गन्यास करना चाहिए। अथवा—

ॐ क्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ।
ॐ क्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा ।
ॐ क्रूं मध्यमाभ्यां वषट् ।
ॐ क्रैं अनामिकाभ्यां हुं ।
ॐ क्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट् ।
ॐ क्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् ॥

इस क्रम से 'क्र' वर्ग में दीर्घस्वर मिलाकर कराङ्गन्यास करना चाहिए।

वर्णन्यास

कराङ्गन्यास के पश्चात् वर्णन्यास करना चाहिए। वर्णन्यास की विधि इस प्रकार कही गई है—

अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लॄं नमः इतिहृदये ।
एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं नमः इति दक्षिण बाहौ ।
ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं नमः इतिवाम बाहौ ।
णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं नमः इति दक्षिण पादे ।
मं यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं नमः इतिवाम पादे ।

'विरूपाक्ष' के मत से सबिन्दु रीति (अर्थात् अं आं आदि) से वर्णन्यास करना चाहिए तथा 'कालो तन्त्र' के अनुसार निर्बिन्दु रीति (अर्थात् अ आ आदि) से वर्णन्यास करना चाहिए परन्तु चाहे सबिन्दु-न्यास किया जाए अथवा निर्बिन्दु किया जाय—दोनों ही युक्तिसङ्गत हैं। अस्तु. जैसी इच्छा हो, उसी के अनुसार वर्णन्यास करना चाहिए।

षोढान्यास

बर्णन्यास के उपरान्त षोढान्यास करना चाहिए। 'वीरतन्त्र' में लिखा है—

पहले केवल मातृकान्यास करे, फिर दुबारा समस्त मातृका वर्गों का 'ॐ' इस मन्त्र से पुटित करके मातृकान्यास के स्थान में न्यास करे तथा मातृकावर्ण द्वारा 'ॐ'—इस मन्त्र को पुटित करके न्यास करे। यथा—

ललाट में—ॐ अं ॐ नमः।
मुख में—ॐ आं ॐ नमः। इत्यादि।
ललाट में—अं ॐ अं नमः।
मुख में—आं ॐ आं नमः। इत्यादि।

तत्पश्चात् श्री बीज श्रीं वर्ण द्वारा समस्त मातृकावर्णों को पुटित करके उसी तरह मातृकान्यासोक्त स्थान में न्यास करे तथा समस्त मातृकावर्णों द्वारा इस 'श्रीं बीज' को पुटित करके पूर्ववत न्यास करे। यथा—

ललाट में—श्रीं अं श्रीं नमः।
मुख में—श्रीं आं श्रीं नमः॥

इत्यादि।

ललाट में—अं श्रीं अं नमः।
मुख में—आं श्रीं आं नमः।

इत्यादि।

तदुपरान्त काम बीज क्लीं के द्वारा समस्त मातृकावर्णों को पुटित करके मातृकान्यास के स्थान में तथा मातृकावर्ण द्वारा काम बीज क्लीं को पुटित करके पूर्ववत् न्यास करना चाहिए। यथा—

ललाट में—क्लीं अं क्लीं नमः।
मुख में—क्लीं आं क्लीं नमः।

इत्यादि।

ललाट में—अं क्लीं अं नमः।
मुख में—आं क्लीं आं नमः।

इत्यादि।

इसी प्रकार शक्ति बीज 'ह्रीं' द्वारा समस्त मातृका वर्णों को पुटित करके मातृका वर्ण द्वारा 'ह्रीं'—इस बीज को पुटित करके सब स्थानों में न्यास करना चाहिए। यथा—

ललाट में—ह्रीं अं ह्रीं नमः।
मुख में—ह्रीं आं ह्रीं नमः।

इत्यादि।

ललाट में—अं ह्रीं अं नमः।
मुख में—'आं ह्रीं आं नमः।'

इत्यादि।

इसके पश्चात् ललाट में 'क्रीं क्रीं ऋं ॠं लृं ॡं क्रीं क्रीं नमः इत्यादि तथा ललाट में 'ऋं ॠं लृं ॡं क्रीं क्रीं ऋं ॠं लृं ॡं नमः' इत्यादि क्रम से मातृका स्थान में न्यास करना चाहिए।

इसके उपरान्त मूल मन्त्र द्वारा मातृकावर्ण को पुटित करके तथा मातृकावर्ण द्वारा मूलमन्त्र को पुटित करके पूर्वोक्त स्थान में न्यास करना चाहिए। यथा—

ललाट में—क्रीं अं क्रीं नमः।

मुख में—क्रीं आं क्रीं नमः।

इत्यादि।

इसी प्रकार अनुलोम तथा विलोमन्यास करके मूलमन्त्र द्वारा १०८ बार 'व्यापक न्यास' करना चाहिए। इस तरह से 'षोढान्यास' करने पर समस्त पाप क्षय हो जाते हैं

तत्त्वन्यास

षोढान्यास के पश्चात् 'तत्त्वन्यास' करना चाहिए। उसकी विधि इस प्रकार है—

पूर्वोक्त बाईस अक्षर वाले मन्त्र को तीन भागों में बाँट दे। पहले खण्ड में सात अक्षर दूसरे खण्ड में छै अक्षर तथा तीसरे खण्ड में नौ अक्षर होने चाहिए।

पहले खण्ड के अन्त में ॐ आत्मतत्त्वाय स्वाहा।
दूसरे खण्ड के अन्त में ॐ विद्यातत्त्वाय स्वाहा।
तीसरे खण्ड के अन्त में ॐ शिवतत्त्वाय स्वाहा।

कहकर न्यास करना चाहिए। यथा—

'क्रीं क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं ॐ आत्मतत्त्वाय स्वाहा।

इस मन्त्र द्वारा चरणों से नाभि पर्यन्त,

दक्षिणे कालिके ॐ विद्यातत्त्वाय स्वाहा।

इस मन्त्र द्वारा नाभि से हृदय पर्यन्त तथा

'क्रीं क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं स्वाहा ॐ शिव तत्त्वाय

स्वाहा'—इस मन्त्र द्वारा हृदय से मस्तक पर्यन्त न्यास करना चाहिए।

बीज न्यास

तत्त्वन्यास के पश्चात् बीज न्यास करना चाहिए। यथा—

ब्रह्मरन्ध्र में—क्रीं नमः।
भ्रूमध्य में—क्रीं नमः।
ललाट में—क्रीं नमः।
नाभि में—हुं नमः।
गुह्य में—हुं नमः।
मुख में—ह्रीं नमः।
सर्वाङ्ग में—ह्रीं नमः।

पूर्वोक्त षोढान्यास, तत्त्वन्यास तथा बीजन्यास—ये तीनों न्यास 'काम्य' हैं अर्थात् नित्यपूजा में इन तीनों न्यासों को बिना किए भी पूजा अङ्गहीन नहीं होती।

इसके पश्चात् मूलमन्त्र द्वारा सात बार व्यापक न्यास करके यथाविधि मुद्रा प्रदर्शन पूर्वक ध्यान करना चाहिए।

ध्यान का स्वरूप

देवी के कादि, हादि, क्रोधादि, वागादि, नादि, दादि तथा प्रणपादि क्रम के ध्यानों का वर्णन इसी पुस्तक के प्रथम खण्ड में किया जा चुका है। अतः साधक को जो भी रुचिकर लगे, उसी रूप म देवी का ध्यान करना चाहिए। सभी प्रकार के ध्यानों का माहात्म्य एक जैसा ही माना जाता है। चूंकि देवी के विविध ध्यानों का वर्णन पहले किया जा चुका है, अतः यहां पर इसकी पुनरावृत्ति नहीं की जा रही है।

अर्घ्य-स्थापन

ध्यानोपरान्त अर्घ्य स्थापित करना चाहिए। अर्घ्य-स्थापन की विधि इस प्रकार कही गई है—

अपने वाम भाग में पृथ्वीर हुंकार गर्भ-युक्त त्रिकोण लिखकर उसमें अर्घ्यपात्र को स्थापित करे। फिर मूलमन्त्र द्वारा शुद्ध जल आदि से शंख आदि पात्र को पूर्ण कर गन्धादि देकर ॐ गङ्गे कहकर तीर्थ का आवाहन करे। फिर—

'मं वह्नि मण्डलाय दशकलात्मने नमः'—कहकर शङ्ख स्थापित करे। तथा—

'ॐ सोममण्डलाय षोडश कलात्मने नमः'—कहकर जल की पूजा करे। फिर—

ॐ ह्रां हृदयाय नमः।
ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा।
ॐ ह्रूं शिखायै वषट्।
ॐ ह्रैं कवचाय हुं।

इत्यग्नीशासुरवायुषु।

अग्रे ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् चतुर्दिक्षु ॐ ह्रः अस्त्राय फट्।

इस प्रकार अभ्यर्चना कर, मत्स्यमुद्रा से आच्छादन कर, मूलमन्त्र का दस बार जप करे। फिर धेनुमुद्रा से अमृतीकरण करके रक्षा करते हुए भूतिनी योनि मुद्रा को प्रदर्शित करें। तत्पश्चात् उसके पानी को थोड़ा-सा प्रोक्षणीपात्र में डालकर मूलमन्त्र द्वारा उस जल से अपने शरीर एवं पूजा के उपकरणों को सिंचित करने के पश्चात् पीठ-पूजा आरम्भ करनी चाहिए।

पूजा-यन्त्र

'पूजा-यन्त्र' की निर्माण विधि इस प्रकार कही गई है—

'पहले बिन्दु ॐ, फिर निज बिन्दु क्रीं, फिर भुवनेश्वरी बीज ह्रीं, लिखकर उसके बाहर एक त्रिकोण अङ्कित करना चाहिए। फिर उस त्रिकोण के बाहर क्रमशः चार अन्य त्रिकोण अंकित करके एक वृत्त, फिर अष्ठदल पद्म तथा पुनर्वार वृत्त अङ्कित करना चाहिए। उसके बाहर चतुर्द्वार अङ्कित करके यन्त्र को पूर्ण रूप देना चाहिए।'

उक्त विधि से जो यन्त्र निर्मित होता है, उसके स्वरूप को इसी पुस्तक में काली-पूजन-यन्त्र संख्या—१ के शीर्षक से अन्यत्र (प्रथम खण्ड के आरम्भ में) प्रदर्शित किया गया है, उसे वहां देख लेना चाहिए।

मन्त्र अङ्कित करने की उक्त विधि 'काली तन्त्र' तथा 'कुमारी कल्प' के अनुसार वर्णित की गई है। यन्त्र-निर्माण की दूसरी विधि नीचे लिखे अनुसार है—

'पहले एक षट्कोण अङ्कित करके उसके बाहर त्रिकोण अङ्कित करना चाहिए। फिर उसके बाहर वृत्त, फिर अष्टदल पद्म, तत्पश्चात् चतुर्द्वार लिखकर यन्त्र को पूर्ण करना चाहिए।'

उक्त प्रकार से निर्मित होने वाले यन्त्र का स्वरूप इसी पुस्तक के द्वितीय खण्ड के प्रारम्भ में काली पूजन-यन्त्र संख्या–२ के शीर्षक से दिया गया है, उसे वहां देख लेना चाहिए।

'मुण्डमाला तन्त्र' में यन्त्र-अङ्कन सम्बन्धी पात्र के विषय में इस प्रकार कहा गया है—

'तांबे के पत्र पर, मृत मनुष्य की खोपड़ी की हड्डी पर, श्मशान के काष्ठ पर, मंगलवार के दिन मृत मनुष्य के शरीर पर, स्वर्ण के पत्र पर, दही के पात्र पर अथवा लोहे के पात्र पर इस यन्त्र को यथाविधि प्रस्तुत करना चाहिए।'

पीठ-पूजा

यन्त्र लेखनोपरान्त पीठ-पूजा करनी चाहिए। उसकी विधि इस प्रकार है—

कर्णिका में—ॐ आधार शक्तये नमः।
ॐ प्रकृत्यै नमः।
ॐ कूर्माय नमः।
ॐ शेषाय नमः।
ॐ पृथिव्यै नमः।

ॐ सुधांबुधये नमः ।
ॐ मणिद्वीपाय नमः ।
ॐ चिन्तामणि गृहाय नमः ।
ॐ श्मशानाय नमः ।
ॐ पारिजाताय नमः ।

उसके मूल में—ॐ रत्नवेदिकायै नमः ।
उसके ऊपर—ॐ मणि पीठाय नमः ।
चारों दिशाओं में—ॐ मुनिभ्यो नमः ।
ॐ देवेभ्यो नमः ।
ॐ शिवेभ्यो नमः ।
ॐ शवमुण्डेभ्यो नमः ।
ॐ धर्माय नमः ।
ॐ ज्ञानाय नमः ।
ॐ वैराग्याय नमः ।
ॐ ऐश्वर्याय नमः ।
ॐ अज्ञानाय नमः ।
ॐ अवैराग्याय नमः ।
ॐ अनैश्वर्याय नमः ।
ह्रीं ज्ञानात्मने नमः ।

केशर में पूर्वादि क्रम से—ॐ इच्छायै नमः ।
ॐ ज्ञानायै नमः ।
ॐ क्रियायै नमः ।
ॐ कामिन्यै नमः ।
ॐ कामदायिन्यै नमः ।
ॐ रतिप्रियायै नमः ।
ॐ नन्दनायै नमः ।

मध्य में—ॐ मनोन्मन्यै नमः ।
उसके ऊपर—हसौः सदाशिव महाप्रत पद्मासनाय नमः ।

इस प्रकार पीठ-पूजा करके—

पीठ के उत्तर भाग में— 'ॐ गुरुभ्यो नमः।
ॐ परम गुरुभ्यो नमः।
ॐ परमेष्ठि गुरुभ्यो नमः।

इस प्रकार से पीठ पूजा करनी चाहिए'

इसके पश्चात् पुनर्वार ध्यान करके पुष्पांजलि ग्रहणपूर्वक मूलमन्त्र कल्पित मूर्ति में आह्वान करना चाहिए—

ॐ देवेशि भक्त सुलभे परिवार समन्विते।
यावत्त्वां पूजयिष्यामि तावत्व सुस्थिराभव।'

इस मंत्र का उच्चारण करके मूलमन्त्र का उच्चारण करना चाहिए।

काली देवि इहावह इहावह इह तिष्ठ तिष्ठ इह सन्निधेहि सन्निहिता भव।

कहकर आह्वान करना चाहिए। फिर 'हुं' इस एकाक्षर मन्त्र से सकलीकरण करके 'परमीकरण मुद्रा' से परमीकरण करना चाहिए तथा 'भूतिन्याकर्षिणी योनि मुद्रा' का प्रदर्शन कर प्राणप्रतिष्ठा करके मूलमन्त्र से पाद्यादि द्वारा पूजन करना चाहिए।

पूजन का क्रम इस प्रकार कहा गया है—

सर्वप्रथम मूलमन्त्र का उच्चारण करके—

एतत्पाद्यं अमुक देवतायैः (काल्यैः) नमः। एवमर्घ्य स्वाहा। इदमाचमनीयं स्वधा। स्नानीयं निवेदयामि। पुनराचमनीयं स्वधा। एष गन्धो नमः। एतानि पुष्पाणि वौषट।

इस प्रकार पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, स्नानीय, पुनराचमनीय, गन्ध एवं पुष्प प्रदान करने चाहिए। फिर मूलमन्त्र का उच्चारण करते हुए पांच पुष्पांजलि प्रदान करे तथा धूप-दीप दे।

वनस्पति रसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः।

आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥

इस मन्त्र के साथ मूलमन्त्र का उच्चारण करते हुए एषधूपो नमः कहकर धूप देनी चाहिए। फिर—

सुप्रकाशो महादीपः सर्वतस्तिमिरापहः ।
सबाह्याभ्यन्तरं ज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम ॥

इस मन्त्र के साथ मूलमन्त्र का उच्चारण करते हुए एषदीपो नमः कहकर दीपक प्रदान करना चाहिए।

फिर ॐ जयध्वनि मन्त्रमातः स्वाहा—इस मन्त्र द्वारा घण्टा का पूजन करके बाए हाथ से घण्टा बजाये तथा नीचे धूप देकर यथा-शक्ति नैवेद्य प्रदान करे। तत्पश्चात् आवरण-पूजा करे।

आवरण-पूजा

आवरण-पूजा को विधि इस प्रकार है—

श्री अमुकी देवि (काल्यैः) आवरणं ते पूजयामि ।

इस प्रकार उच्चारण करते हुए आज्ञा लेकर केशर को अग्नि कोणों में—

ॐ ह्रां हृदयाय नमः ।
ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा ।
ॐ ह्रूं शिखायै वषट् ।
ॐ ह्रैं कवचाय हुं ।
ॐ ह्रौं नेत्र त्रयाय वौषट् ।

तथा चारों दिशाओं में—

ॐ हुं अस्त्राय फट् ।

तथा बहिः कोण में—

ॐ काल्यै नमः ।

कहकर सर्वत्र—

ॐ नमः ।

कहकर पूजन करना चाहिए। फिर—

ॐ कपलिन्यै: नमः।

ॐ कुल्वायै नमः।

ॐ कुरु कुल्वायै नमः।

ॐ विरोधिन्यै नमः।

ॐ विप्रचित्तायै नमः।

ॐ उग्रायै नमः।

ॐ उग्रायै नमः।

ॐ उग्रप्रभायै नमः।

इस प्रकार प्रथम त्र्यस्र में—

ॐ नीलायै नमः।

ॐ धनायै नमः।

ॐ बलाकायै नमः।

कहकर द्वितीय त्र्यस्र में तथा—

ॐ मात्रायै नमः।

ॐ मुद्रायै नमः।

ॐ मित्रायै नमः।

कहकर तृतीय त्र्यस्र में पूजन करना चाहिए। फिर—

सर्वाः श्यामा असिकरा मुण्डमाला विभूषिताः।
तर्जनीं वामहस्तेन धारयन्त्यः शुचिस्मिता॥
दिगंबरा हसन्मुख्य स्वस्ववाहन भूषिता।

इस प्रकार से ध्यान करके अर्चना करना चाहिए। फिर कमल के आठों दलों में पूर्वादि क्रम से—

ॐ ब्रह्मायै नमः।

ॐ नारायण्यै नमः।

ॐ माहेश्वर्य्यै नमः।

ॐ चामुण्डायै नमः।
ॐ कौमार्यै नमः।
ॐ अपराजितायै नमः।
ॐ वाराह्यै नमः।
ॐ नारसिंह्यै नमः।

कहते हुए गन्ध आदि से पूजन करना चाहिए। उसके उपरान्त भैरवों का पूजन करना चाहिए।

भैरव-पूजन

भैरव-पूजन की विधि इस प्रकार कही गई है—पत्र के अग्र भाग में आठ भैरवों का पूजन करना चाहिए तथा—

ॐ असिताङ्ग भैरवाय नमः।
ॐ रुरु भैरवाय नमः।
ॐ चण्ड भैरवाय नमः।
ॐ क्रोध भैरवाय नमः।
ॐ उन्मत्त भैरवाय नमः।
ॐ कपालि भैरवाय नमः।
ॐ भीषणभैरवाय नमः।
ॐ संहार भैरवाय नमः।

कहकर मूलमन्त्र का उच्चारण करते हुए पांच पुष्पांजलि प्रदान कर पाद्यादि द्वारा महाकाल भैरव की पूजा करनी चाहिए।

महाकाल भैरव के ध्यान का स्वरूप

महाकाल भैरव के ध्यान का स्वरूप इस प्रकार कहा गया है—

महाकालं यजेद्देव्या दक्षिणे धूम्रवर्णकम्।
बिभ्रतं दण्ड खट्वाङ्गौ दंष्ट्राभीम मुखं शिशुम्।।
त्रिनेत्रमूर्द्ध केशं च मुण्डमाला विभूषितम्।
जटाभारलसच्चन्द्र खण्डमुग्रं ज्वलन्निभम्।।

भावार्थ—महाकाल भैरव देवी के दक्षिण भाग सें विराजान हैं। उनका शरीर धूम्रवर्ण है। वे दण्ड तथा खट्वाङ्ग को धारण किये हुए हैं। उनका मुख मण्डल दांतों की कराल पंक्ति के कारण अत्यन्त भयानक हो रहा है। उनका कटि प्रदेश व्याघ्र चर्म से आवृत्त है तथा उदर अत्यन्त स्थूल है। वे लाल रंग के वस्त्र धारण किये हुए हैं। उनके तीन नेत्र हैं तथा केश ऊपर को उठे हुए हैं। उनके कंठ में मुण्डों की माला है तथा उनकी जटाएं मस्तक के चारों ओर बिखरी हुई हैं। उनके कपाल पर अर्द्ध चन्द्र प्रकाशित है। वे महा उग्रमूर्ति हैं तथा उनके शरीर की कान्ति अग्नि की भांति जाज्वल्यमान हो रही है।

इस प्रकार महाकाल भैरव का ध्यान करके—

क्षुं [illegible] यां रां लां वां क्रों महाकाल भैरव सर्वविघ्नान्नाशय ह्रीं श्रीं फट् स्वाहा।

इस मन्त्र से पाद्यादि उपचार द्वारा यथाविधि पूजा-तर्पण करके उपरान्त मूल मन्त्र से गंधादि पंचोपचार द्वारा देवी का पूजन करना चाहिए।

देवी-अस्त्र पूजन

इसके उपरान्त देवी की अस्त्र-पूजा करनी चाहिए। अस्त्र पूजा की विधि इस प्रकार है—

देवी के बाईं ओर के ऊपरी हाथ में—'**ॐ खड्गाय नमः।**'
बाईं ओर के नीचे वाले हाथ में—'**ॐ मुण्डाय नमः।**'
दाईं ओर के ऊपरी हाथ में—'**ॐ अभयाय नमः।**'
दाईं ओर के निचले हाथ में—'**ॐ वराय नमः।**'

कहकर इस प्रकार से अस्त्र-पूजा करके, देवी का ध्यान करते हुए यथा शक्ति मूल मन्त्र का जप करे। फिर—

ॐ गुह्याति गुह्यगोप्त्री त्वं गृहाण्यस्मत्कृतंजयम्।
सिद्धिर्भ वतु मे देवित्वत्प्रसादान्यमहेश्वरि॥

इस मन्त्र का उच्चारण करते हुए देवी के बाएं हाथ में जप का समपण करना चाहिए। तदुपरान्त आत्मसमपण करना चाहिए।

विसर्जन की विधि

'स्वतन्त्र तन्त्र' में लिखा है कि मुद्रा-तर्पणादि द्वारा मूल देवी की पूजा, मन्त्र, जप और नमस्कार करके अपने हृदय में देवी को विसर्जित करना चाहिए।

जिस समय किसी कार्य की सिद्धि के लिए जप किया जाय, उस समय मुंह में कपूर रखकर, कर्पुर युक्त जिह्वा से जप करना चाहिए। फिर देवी की स्तुति करके प्रदक्षिणा सहित साष्टाङ्ग प्रणाम करके जगन्मङ्गल' नामक कवच का पाठ करना चाहिए। 'जगन्मङ्गल कवच' इसी पुस्तक के तीसरे खण्ड में दिया गया है।

जगन्मङ्गल' का पाठ करने के उपरान्त देवी के अङ्ग में समस्त आवरण देवताओं को विलीन करके संहारमुद्रा द्वारा **'अमुक देवि (काल्यै:) क्षमस्व'** यह कहकर विसर्जन करना चाहिए।

ॐ उत्तरे उत्तरे शिखरे देवि भूम्यां पर्वत वासिनी।
ब्रह्मयोनि समुत्पन्नो गच्छदेवि यमान्तर:॥

इस मन्त्र द्वारा तेजस्व रूपा देवी को पुष्प सहित अपने हृदय में आरोपित करे। फिर निवेदित किये हुए नैवैद्य का कुछ अंश लेकर **'ॐ उच्छिष्ट चाण्डालिन्यै नम:'**—इस मन्त्र का उच्चारण करते हुए उसे ईशान कोण में प्रदान करे। शेष अंश अपने प्रियजनों को देकर थोड़ा-सा प्रसाद स्वयं भी ग्रहण करे। तदुपरान्त देवी का चरणामृत पान करके तथा मस्तक पर निर्माल्य धारण करके अपनी इच्छानुसार विचरण करे।

फिर यन्त्र-लेपन चन्दन को अपने बाएं हाथ में लेकर उसमें दाएं हाथ की कनिष्ठा इंगली द्वारा माया बीज 'ह्रीं' लिखकर उसी चन्दन के द्वारा अपने ललाट पर तिलक करे। तिलक का मन्त्र यह है—

ॐ यं यं स्पृशामि पादाभ्यां यो मां पश्यति चक्षुषा ।
स एव दासतां यातु राजानो दुष्ट दस्यव: ।।

इसके पश्चात् मूल मन्त्र से एक सौ आठ बार अभिमन्त्रित पुष्प को धारण करे ।

इस विधि से जो साधक एक वर्ष तक देवी की आराधना करता है वह समस्त सिद्धियों का स्वामी बनकर भैरव के समान हो जाता है ।

मन्त्र की जप संख्या

'काली तन्त्र' मे इस मन्त्र के पुरश्चरण में दो लाख की संख्या में जप करने के लिए कहा गया है । उसमें बताया गया है कि साधक को पवित्र तथा हविष्याशी होकर दिन में एक लाख की संख्या में मन्त्र का जप करना चाहिए तथा रात्रि के समय मुंह में ताम्बूल रखकर तथा शय्या पर बैठकर एक लाख की संख्या में जप करना चाहिए । जप के पीछे दशांश घृत से होम करना चाहिए । 'काली तन्त्र' इसी पुस्तक से तीसरे खण्ड में सङ्कलित है ।

'स्वतन्त्र तन्त्र' में भी इस मन्त्र के दो लाख जप की व्यवस्था दी गई है तथा कहा गया है कि साधक को दिन के समय पवित्र तथा हविष्याशी होकर एक लाख की संख्या में जप करना चाहिए तथा हवि के द्वारा उसका दशांश होम करना चाहिए । एक लाख की संख्या में रात्रि के समय जप का विधान है।

'नील सारस्वत' में कहा गया है कि साधक को दिन में शुद्ध तथा हविष्याशी होकर एक लाख की संख्या में जप करना चाहिए । रात्रि में अशुद्ध भाव से एक लाख की संख्या में जप करके उसका दशांश होम, तर्पण तथा अभिषेक करना चाहिए ।

जप होमादि के कार्य ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्य के लिए दिन, शूद्र के लिए रात्रि का समय प्रशस्त कहा गया है । अन्यान्य देवताओं के यन्त्र पुरश्चरण में दिन में ही जप करना चाहिए, रात्रि में नहीं और उस देवता के पुरश्चरण के अङ्गस्वरूप ब्राह्मण भोजन तथा हविष्यान्न द्वारा करना चाहिए ।

'विश्वसार तन्त्र' में लिखा है कि जप का दशांश होम, होम का दशांश तर्पण तथा तर्पण का दशांश अभिषेक करना चाहिए।

अभिषेक तथा तर्पण का तीर्थ का फल सन्निहित हैं। मधु अथवा शर्करा मिश्रित जल द्वारा कार्य करना उचित है तथा हविष्यान्न द्वारा अभिषेक का दशांश ब्राह्मण-भोजन कराना चाहिए। तत्पश्चात् काली मन्त्र-विशारद साधक को चाहिए कि वह गुरु को दक्षिणा देकर कार्य को सर्वाङ्ग सम्पूण करे।

पश्वाचार विहित पुरश्चरण के विषय में उक्त बातें कही गई हैं। वीराचार-विहित प्रणाली संक्षेप में इस प्रकार है—

'विश्वसार तन्त्र' में कहा गया गया है कि वीराचार के साधक को दिन तथा रात्रि में एक लाख मन्त्र का जप करना चाहिए।

'कुमारी कल्प' म कहा गया है कि हविष्याशी पवित्र साधक को दिन में एक लाख की संख्या में मन्त्र का जप करना चाहिए तथा रात्रि के समय मुंह में पान रखकर तथा शय्या पर बैठकर एक लाख की संख्या में पुनः जप करना चाहिए। इस प्रकार दो लाख की संख्या में जप पूरा हो जाने पर सावधान हो जाने पर सावधान चित्त से होम करना चाहिए।

वीराचार-विहित प्रणाली का यथार्थ ज्ञान गुरु के द्वारा ही प्राप्त करना चाहिए। केवल पुस्तकों के द्वारा उसका ज्ञान होना कठिन तथा हानिकारक होता हैं।

दक्षिण कालिका के एकाक्षर मन्त्र

अब भगवती दक्षिण कालिका के एकाक्षर मन्त्रों के विषय में कहा जाता है—

क्रीं'

यह एकाक्षर मन्त्र समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाला है।

ह्रीं

यह दूसरा एकाक्षर मन्त्र है। इस मन्त्र द्वारा देवी की आराधना करने पर साधक को सम्पूर्ण शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त होता है।

पूजा-प्रणाली

उक्त मन्त्रों की पूजा-प्रणाली इस प्रकार बताई गई है—

सर्वप्रथम सामान्य-विधि के अनुसार प्रातः कृत्यादि से प्राणायाम तक सब कार्य करके पूर्वोक्त ऋष्यादि न्यास, वर्णन्यास तथा कराङ्ग-न्यास करे। इन दोनों के कराङ्गन्यास की विधि यह है—

ॐ क्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः।
ॐ क्रां हृदयाय नमः।

इत्यादि।

ॐ ह्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः।
ॐ ह्रां हृदयाय नमः।

इत्यादि।

इस पूजा के अन्यान्य सभी कार्य पूर्वोक्त रीति के अनुसार करना चाहिए।

ध्यान का स्वरूप

एकाक्षर-मन्त्र के विषय में 'सिद्धेश्वर तन्त्र' में ध्यान का स्वरूप इस प्रकार कहा गया है—

शवारूढा महाभीमां घोर दंष्ट्रांवर प्रदाम्।
हास्य युक्तां त्रिनेत्रां च कपाल कर्त्तृका कराम्॥
मुक्तकेशीं ललज्जिह्वां पिबन्तीं रुधिरं मुहुः।
चतुर्बाहुयुतां देवीं भराभयकरां स्मरेत्॥

पुरश्चरण की विधि

उक्त एकाक्षर मन्त्रों का जप एक लाख की सख्या में करने के लिए कहा गया है। उक्त मन्त्रों के पुरश्चरण के सम्बन्ध में 'सिद्धेश्वर

तन्त्र' में लिखा है कि देवी का यथाविधि ध्यान करके एक लाख की संख्या में मन्त्र का जप करे तथा विधानुसार जप का दशांश होम करे।

'कुल चूड़ामणि' ग्रंथ में लिखा है कि हविष्याशी साधक को दिन के समय पवित्र होकर एक लाख की संख्या में मन्त्र का जप करना चाहिए तथा रात्रि में भी इसी प्रकार एक लाख की संख्या में जप करना चाहिए। रात्रि-काल में जप करने से दक्षिण कालिका देवी मंत्र को सिद्धि प्रदान करती हैं।

अन्य मन्त्र

'काली तन्त्र' तथा अन्य तन्त्रों में दक्षिण कालिका के अन्य मन्त्र के सम्बन्ध में इस प्रकार लिखा गया है—

ॐ ह्रीं ह्रीं हूं हूं क्रीं क्रीं क्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं।'

यह दक्षिण कालिका का एक विंशत्यक्षर मन्त्र है। दक्षिण कालिका की पूर्वोक्त पूजा-प्रणाली के क्रम से ही इस मन्त्र की भी पूजा आदि सब कार्य करने चाहिए। इस मन्त्र का एक लाख जप करने से पुरश्चरण होता है तथा जप का दशांश पुरश्चरणांग होम करना चाहिए।

'विश्वसार तन्त्र' में लिखा है कि उक्त एक विंशत्यक्षर मन्त्र के अन्त में 'स्वाहा' जोड़ देने से तेईस अक्षर का मन्त्र होता है। यथा—

'ॐ ह्रीं ह्रीं हूं हूं क्रीं क्रीं क्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।'

उक्त तेईस अक्षर के मन्त्र के आदि का प्रणव छोड़ देने पर बाईस अक्षर का मन्त्र होता है। यथा—

ह्रीं ह्रीं हूं हूं क्रीं क्रीं क्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।'

पूर्वोक्त तेईस अक्षर वाले मन्त्र के आदि का 'प्रणव' तथा अन्त का 'स्वाहा' पद हटा देने से बीस अक्षर का मन्त्र होता है। यथा—

ह्रीं ह्रीं हूं हूं क्रीं क्रीं क्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं।

इन सब मन्त्रों का ध्यान-पूजन आदि दक्षिण कालिका की पूजा पद्धति के क्रमानुसार करना चाहिए।

भैरव तन्त्र में लिखा है कि निम्नलिखित तीन अक्षर का मन्त्र चामुण्डा कालिका के साधन में प्रशस्त है। यथा—

क्लीं क्लीं हूं।

इसके अतिरिक्त निम्नलिखित 'काली हृदय' नामक भैरवोक्त मन्त्र भी अत्यन्त प्रभावकारी कहा गया है। यथा—

ॐ ह्रीं क्रीं मे स्वाहा।

उक्त मन्त्र का वर्णन चामुण्डा तन्त्र में है। इसकी पूजा-प्रणाली निम्नानुसार है—

मस्तक में—भैरव ऋषये नमः।
मुख में—विराट छन्दसे नमः।
हृदय में—सिद्धकाली ब्रह्मरूपा भुवनेश्वरी देवतायै नमः।
गुह्य में—क्रीं बीजाय नमः।
पाद में—ह्रीं शक्तये नमः।

इसके उपरान्त दक्षिण-कालिका की पूजा-पद्धति के क्रमानुसार वर्णन्यास तथा कराङ्गन्यास करना चाहिए। इस मन्त्र के भैरव ऋषि, विराट छन्द, सिद्धकाली ब्रह्मरूपा भुवनेश्वरी देवता, निजबीज तथा लज्जा शक्ति कही गई है।

ध्यान का स्वरूप

इस मन्त्र के साधन में देवी के ध्यान का स्वरूप इस प्रकार कहा गया है—

गङ्ग द्भिन्नेदुंखण्डस्रवदमृतरसा
प्लाविताङ्गी त्रिनेत्रा।
सव्ये पाणौ कफलाद्गलद सृजमथो
मुक्तकेशी पिबन्ती॥

दिग्वस्त्रा बद्धकाञ्ची मणिमय मुकुटा
घैर्युता दीप्त जिह्वा ।
पायान्नीलोत्पलाभा रवि शशि विलस-
त्कुन्तलालीढपादा ॥

भावार्थ—खड्ग द्वारा उद्भिन्न इन्दुखण्ड से जो अमृत की धारा गिर रही है, उससे देवी का सर्वाङ्ग भीग गया है। देवी तीन नेत्रों वाली हैं। वे अपने बाएं हाथ में नरमुण्ड को धारण किये हुए हैं। उस मुण्ड से जो रक्त की धारा टपक रही है, देवी उसे पान करने में संलग्न हैं। देवी के केश खुले हुए हैं और वे नग्न हैं। उनका कटि प्रदेश मेखला से घिरा हुआ है। वे मणिमय मुकुट, आभूषणों आदि से विभूषित हैं। उनके शरीर की कान्ति नील-कमल के समान है। उनकी लपलपाती हुई जिह्वा अग्नि-शिखा की भांति दीप्तिशाली है। वे सूर्य और चन्द्र विराजित दो कुण्डलों को धारण किये हुए आलीढ चरण (एक पांव आगे की ओर बढ़ा हुआ) से विद्यमान हैं।

इस प्रकार देवी का ध्यान करके दक्षिण कालिका की पूजा पद्धति के अनुसार सभी क्रियाएं करनी चाहिए।

मन्त्र का पुरश्चरण

इस मन्त्र का पुरश्चरण इक्कीस हजार की संख्या में जप करने से होता है। 'काली तन्त्र' में कहा गया है कि साधक को इस मन्त्र के पुरश्चरण में इक्कीस हजार जप करके **सिरस के** पुष्पों द्वारा जप का दशांश होम करना चाहिए।

विश्वसार तन्त्र के मन्त्र

'विश्वसार तन्त्र' में दक्षिण कालिका के जिन मन्त्रों को कहा गया है, अब उनका वर्णन किया जाता है। वे मन्त्र इस प्रकार हैं—

क्रीं ह्रीं ह्रीं।

महाकाली के इस महामन्त्र को स्वयं महाकाल ने कहा है। अन्य मन्त्र इस प्रकार हैं—

क्रीं क्रीं क्रीं स्वाहा ।

क्रीं क्रीं क्रीं फट् स्वाहा ।

क्रीं क्रीं क्रीं हूं ह्रीं क्रीं क्रीं क्रीं हूं ह्रीं स्वाहा ।

ऐं नमः क्रीं ऐं नमः क्रीं कालिकायै स्वाहा ।

पूजा-विधि

पूर्वोक्त सामान्य पूजा-पद्धति के नियमानुसार प्रातः कृत्यादि से प्राणायाम तक सब कार्य करके ऋष्यादि न्यास करना चाहिए । यथा—

दक्षिणामूर्ति ऋषिः पंक्तिश्छन्दः कालिका देवता ।

शिरसि दक्षिणामूर्तिर्ऋषये नमः ।

मुखे पंक्तिश्छन्दसे नमः ।

हृदि कालिकायै देवतायै नमः ।

इस प्रकार ऋष्यादिन्यास तथा पूर्वोक्त प्रकार से कराङ्गन्यासादि करके देवी का ध्यान करना चाहिए ।

ध्यान का स्वरूप

चतुर्भुजां कृष्णवर्णां मुण्डमाला विभूषिताम् ।

खड्गं च दक्षिणे पाणौ बिभ्रन्तीन्दीवरद्वयम् ॥

कर्त्तरीं खर्परं चैव क्रमाद्वामेन बिभ्रती ।

द्यां लिखन्ती जटायेकां बिभ्रती शिरसाद्वयीम् ॥

मुण्डमालाधरा शीर्षे ग्रीवायामथ चापराम् ।

वक्षसा नागहारं च विभ्रती रक्त लोचनां ॥

कृष्ण वस्त्रधरां कट्यां व्याघ्राजिन समन्विता ।

वामपदं शव हृदि संस्थाप्य दक्षिणं पदम् ॥

विलसद् सिंह पृष्ठे तु लेलिहानासवं पिबम् ।

साट्टहासा महाघोर रावै युक्ता सुभीषणां ॥

भावार्थ—देवी चार भुजा वाली, कृष्णवर्णा तथा मुण्डमाला से विभूषित हैं । वे दाईं ओर के दोनों हाथों में खड्ग तथा नीलकमल एवं बाईं ओर के दोनों हाथों में कतरनी तथा खप्पर को धारण किये

हुए हैं। उनके मस्तक पर दो जटाएं हैं, जिनमें से एक आकाश को छू रही है। उनके मस्तक तथा कण्ठ में मुण्डमाला तथा वक्षःस्थल पर नागहार सुशोभित है। उनके नेत्रों का वर्ण लाल है। वे कटि में काले वस्त्र तथा बाघम्बर को धारण किये हुए शवरूपी महादेव के हृदय पर अपने बाएं पाव को स्थापित किये हुए हैं। उनका दायां पांव सिंह की पीठ पर स्थापित है। वे आसव-पान में आसक्त, भयंकर शब्द तथा भयानक आकृति वाली हैं।

पुरश्चरण विधि

इस मन्त्र को दो लाख की संख्या में जपने से पुरश्चरण होता है। अन्यान्य मन्त्रों में मन्त्र के अन्तर्गत जितनी वर्णसंख्या हो, उतने ही लाख की संख्या में जपने से मन्त्र का पुरश्चरण होता है।

अन्य मन्त्रों की साधन-प्रणाली

अन्य मन्त्रों की साधन-प्रणाली के विषय में नीचे लिखे अनुसार समझना चाहिए—

क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके स्वाहा।

क्रीं हूं ह्रीं दक्षिण कालिके फट्।

क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं दक्षिण कालिके क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

इन सब मन्त्रों के लिए पहले सामान्य विधि के अनुसार प्रात कृत्यादि से प्राणायाम पर्यन्त सभी कर्म करके ऋष्यादि न्यास करना चाहिए। ऋष्यादि न्यास की विधि इस प्रकार है—

शिरसि दक्षिणा मूर्ति ऋषये नमः।

मुखे पंक्ति छन्दसे नमः।

हृदये दक्षिण कालिकायै देवताय नमः।

अन्यान्य पूजा का क्रम दक्षिण कालिका की ही भांति समझना चाहिए।

क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

क्रीं हूं ह्रीं स्वाहा।

उक्त दोनों मन्त्रों के ऋषि पंचवक्त्र (शिव) हैं। अन्यान्य सभी कार्य पूर्ववत् समझने और करने चाहिए।

क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

क्रीं दक्षिण कालिके स्वाहा।

क्रीं हूं हूं ह्रीं हूं हूं क्रीं स्वाहा।

क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं हूं हूं क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं हूं हूं स्वाहा।

नमः ऐं क्रीं क्रीं कालिकायै स्वाहा।

नमः आं आं क्रों क्रों फट् स्वाहा कालिके हूं।

इन सब मन्त्रों के ऋष्यादि न्यास तथा पूजा प्रणाली दक्षिण कालिका की पद्धति के अनुसार समझनी चाहिए। इन सब मन्त्रों का पुरश्चरण एक लाख जपने से होता है।

क्रीं क्रीं क्रीं स्वाहा।

इस पञ्चाक्षर मन्त्र को स्वयं ब्रह्माजी ने कहा है।

क्रीं क्रीं फट् स्वाहा।

यह षडक्षर मन्त्र तीनों लोकों को मोहित करने वाला कहा गया है।

क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं स्वाहा।

यह अष्टाक्षर मन्त्र चतुर्वर्गदायक प्रसिद्ध है।

ऐं नमः क्रीं क्रीं कालिकायै स्वाहा।

यह एकादशाक्षर मन्त्र है। इस मन्त्र के दक्षिणा-मूर्ति ऋषि, पंक्ति छन्द, ह्रीं शक्ति तथा कालिका देवता हैं। यह एकादशाक्षर मन्त्र अत्यन्त दुर्लभ है। इस मन्त्र के पुरश्चरण में दो लाख जप करना चाहिए।

पंचाक्षर आदि अन्य मन्त्रों के पुरश्चरण में जितने वर्ण हों, उतने

ही लाख की संख्या में जप करना चाहिए। इस मन्त्र की पूजा में **चतुर्भुजां कृष्ण वर्णां** वाला देवी का ध्यान करना चाहिए।

कालिका देवी का एक अन्य एकादशाक्षर मन्त्र यह है—

क्रीं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके स्वाहा।

यह एकाक्षर मन्त्र चतुर्वर्ग को प्रदान करने वाला है।

क्रीं हूं ह्रीं दक्षिण कालिके फट्।

यह दशाक्षर मन्त्र भी चतुर्वर्ग फलदायक है।

क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

यह बीस अक्षर का मन्त्र है। इस मन्त्र की कृपा से साधक इन्द्र के समान हो सकता है। इस मन्त्र के दक्षिणामूर्ति ऋषि, पंक्ति छन्द तथा दक्षिण कालिका देवता हैं।

क्रीं स्वाहा।

इस मन्त्र के भैरव ऋषि हैं।

क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

यह अष्टाक्षर मन्त्र समस्त कामनाओं को देने वाला है।

क्रीं हूं ह्रीं स्वाहा।

यह पंचाक्षर मन्त्र के पंचवक्त्र (शिव) ऋषि हैं।

क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

इस नवाक्षर मन्त्र से देवी की आराधना करने वाला साधक समस्त सम्पत्तियों को प्राप्त करता है।

क्रीं दक्षिणे कालिके स्वाहा।

इस नवाक्षर महामन्त्र द्वारा दक्षिण कालिका की अराधना करने पर साधक के समस्त शत्रुओं का नाश हो जाता है।

क्रीं हूं ह्रीं क्रीं हूं ह्रीं स्वाहा।

इस अष्टाक्षर महामन्त्र का जप करने से साधक को मुक्ति-पद प्राप्त होता है।

क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

इस चतुर्दशाक्षर महामन्त्र के द्वारा देवी की आराधना करने से चतुर्वर्ग के फल की प्राप्ति होती है।

क्रीं क्रीं क्रीं हूंहूं ह्रीं ह्रीं क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

यह षोडशाक्षर मन्त्र कल्पवृक्ष की भांति है। साधक जिस कामना से इस मन्त्र का जप करता है, उसकी वही अभिलाषा पूर्ण होती है।

नमः ऐं क्रीं क्रीं कालिकायै स्वाहा।

यह मन्त्र 'मायातन्त्र' में वर्णित है। यह अभिलषित फल को देने वाला कहा गया है।

नमः आं क्रां आं क्रों फट् स्वाहा कालि कालिके हूं।

यह मन्त्र भी सभी मनोकामनाओं को पूर्ण करने वाला है।

दक्षिण कालिका के मन्त्र की भांति ही इन सब मन्त्रों की पूजा-पद्धति को भी समझना चाहिए। इन मन्त्रों को एक लाख की संख्या में जपने से पुरश्चरण होता है।

गुह्य काली के मन्त्र

अब 'गुह्यकाली' के मन्त्र तथा पूजा-प्रणाली का वर्णन किया जाता है। यह महाविद्या त्रिभुवन में अत्यन्त दुर्लभ तथा धर्मार्थ काम मोक्ष को देने वाली, महापापों को नष्ट करने वाली, समस्त सिद्धियों की प्रदाता, सनातनी तथा भोग को देने वाली प्रसिद्ध है।

क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं गुह्ये कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

नाम-भेद से यह मन्त्र गुह्यकाली तथा दक्षिणा काली—दोनों की ही आराधना में प्रयुक्त होता है। यह मन्त्र समस्त सिद्धियों को देने वाला है।

गुह्यकाली के अन्य मन्त्र इस प्रकार हैं—

क्रीं हूं ह्रीं गुह्य कालिके क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

इस षोडशाक्षर मन्त्र द्वारा आराधना करने पर साधक को चतुर्वर्ग की प्राप्ति होती है।

क्रीं हूं ह्रीं गुह्ये कालिके हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

यह चतुर्दशाक्षर मन्त्र सब तन्त्रों में गुप्त है। इस मन्त्र में 'गुह्ये' के स्थान पर 'दक्षिणे' पद जोड़ने से पंचदशाक्षरी दक्षिण कालिका का मन्त्र होता है। यथा—

क्रीं हूं ह्रीं दक्षिणे कालिके हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

गुह्यकाली का चतुर्दशाक्षर मन्त्र इस प्रकार है—

हूं ह्रीं गुह्ये कालिके क्रीं क्रीं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

गुह्यकाली का नवाक्षर मन्त्र इस प्रकार है—

क्रीं गुह्ये कालिके क्रीं स्वाहा।

इसी मन्त्र में 'गुह्ये' के स्थान पर दक्षिणे शब्द जोड़ने पर दक्षिण कालिका का दशाक्षर मन्त्र बनता है। यथा—

क्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं स्वाहा।

इन सब मन्त्रों की साधना में दक्षिण कालिका की पूजा-पद्धति में लिखे नियमानुसार न्यासादि करके पूजा तथा बलि करनी चाहिए। इसके बलिदान में यह विशेषता है कि पूर्व नियमानुसार बलि उत्सर्ग करके निम्नलिखित मन्त्र द्वारा बलि को निवेदित करना चाहिए—

ऐं ह्रीं ऐह्येहि जगन्मातर्जगतां जननि गृहण गृह्ण बलिं सिद्धिं देहि देहि शत्रु क्षयं कुरु कुरु हूं हूं ह्रीं ह्रीं फट् फट् ॐ कालिकायै नमः फट् स्वाहा।

यदि गुह्यकाली के लिए बलि निवेदित करनी हो तो इस मन्त्र का उच्चारण करना चाहिए—

ऐह्येहि गुह्य कालिके मम बलिं गृह्ण गृह्ण मम शत्रून नाशय नाशय खादय खादय स्फुर स्फुर छिन्धि छिन्धि सिद्धिं देहि हूं फट् स्वाहा।

आसन का मन्त्र भी अन्य प्रकार से है। यथा—

ॐ सदाशिव महाप्रेताय गुह्य कालपासनाय नमः।

भद्रकाली-मन्त्र

अब भद्रकाली के मन्त्र का वर्णन किया जाता है। वह इस प्रकार है—

क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं भद्रकाल्यै क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

यह बीस वर्ण वाला भद्रकाली का मन्त्र साधक को चतुर्वर्ग प्रदान करता है।

श्मशानकाली-मन्त्र

अब श्मशान काली के मन्त्र का वर्णन किया जाता है। वह इस प्रकार है—

क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं श्मशान कालि क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

इस इक्कीस अक्षर के मन्त्र से श्मशान काली की पूजा करनी चाहिए। यह भी चतुर्वर्गदायक है।

महाकाली मन्त्र

अब महाकाली के मन्त्र का वर्णन किया जाता है। वह इस प्रकार है—

क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं महाकाली क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

इस बीस अक्षर के मन्त्र द्वारा महाकाली का पूजन करना चाहिए। यह भी चतुर्वर्गदायक है।

पूजा-विधि

इन देवियों के पूजन में यह विशेषता है कि यन्त्र के भूपुर में इन्द्रादि दिक्पाल तथा वज्रादि अस्त्र, भूपुर के चतुर्द्वार में विष्णु, शिव, सूर्य और गणेश भूगृह में लोकपाल, बाह्यभाग में देवी के अस्त्र तथा भूपुर के चारों ओर पूर्वादि क्रम से विष्णु, शिव, सूर्य तथा गणेश का पूजन करना चाहिए।

इसी प्रकार यन्त्र में हो गुह्यकाली, भद्रकाली, श्मशान काली—इन चारों देवियों का पूजन करना चाहिए। इनका यन्त्र सम्बन्धी कोई भेद नहीं है। सबके यन्त्र एक समान हैं। इनके यन्त्र का स्वरूप नीचे बताया गया है।

यन्त्र का स्वरूप

उक्त चारों देवियों के यन्त्र को अङ्कित करने की विधि यह है कि पहले त्रिकोण, फिर षट्कोण तथा नवकोण अङ्कित करके उसके बाहर तीन वृत्त तथा केशर सहित अष्टदल पद्म अङ्कित करे। फिर तीन भूपुर वाला एक चतुर्द्वार संयुक्त योनि मण्डल का स्वरूप अङ्कित करना चाहिए। यह 'त्रिपञ्चार यन्त्र' सब यन्त्रों में प्रसिद्ध है। उक्त विधि से जो यन्त्र निर्मित होता है, उसके स्वरूप को इसी पुस्तक के तृतीय खण्ड के आरम्भ में कालो-पूजन यन्त्र संख्या—३ शीर्षक के अन्तर्गत आगे प्रदर्शित किया गया है, अतः वहां देख लेना चाहिए।

ध्यान का स्वरूप

यन्त्र को अङ्कित करने के उपरान्त ध्यान करना चाहिए। ध्यान का स्वरूप इस प्रकार कहा गया है—

> महामेघ प्रभां देवीं कृष्ण वस्त्रोभिधारिणीम्।
> ललजिह्वां घोरदंष्ट्रां कोटराक्षीं हसन्मुखीम॥
> नागहार लतोपेतां चन्द्रार्द्धकृत शेखराम्।
> द्यां लिखन्तीं जटामेकां लेलिहानासवं पिबम्॥

नाग यज्ञोपवीताङ्गी नाग शय्या निषेदुषीम् ।
पञ्चाशन्मुण्डसंयुक्तं वनमाला महोदरीम् ।।
सहस्रफण संयुक्तंमनन्तं शिरसोपरि ।
चतुर्दिक्षु नागफणा वेष्टित्त गुह्यकालिकाम् ।।
तक्षक सर्पराजेन वामकङ्कण भूषिताम् ।
अनन्त नागराजेन कृतदक्षिण कङ्कणम् ।।
नागेन रसनाहार कल्पितां रत्न नूपुराम् ।
वामेन शिव स्वरूपं तत् कल्पं वत्सरूपकम् ।।
द्विभुजां चिन्तयेद्देवीं नागयज्ञोपवीतिनीम् ।
नरदेह समाबद्ध कुण्डल श्रुति मण्डिताम् ।।
प्रसन्न वदनां सौम्यां नवरत्न विभूषिताम् ।
नारदाद्यैर्मुनिगणैः सेवितां शिवमोहिनीम् ।।
अट्टहासां महाभीमां साधकाभीष्ट दायिनीम् ।
द्यां लिखंतीं जटामेक इतिध्यायत्ती मिति शेषः ।।

भावार्थ—देवी का वर्ण सघन मेघ के समान काला है। उनके वस्त्र भी कृष्ण वर्ण हैं। उनकी जीभ लाल है तथा दांत अत्यन्त भयंकर हैं। उनके दोनों नेत्र कोटर में घुसे हुए हैं। मुख हास्यपूर्ण है। उनके कण्ठ में नागहार, कपाल में अर्द्धचन्द्र तथा मस्तक पर आकाशगामिनी जटा विद्यमान है। उनके गले में पचास मुण्ड संयुक्त वनमाला है। उनका उदर बहुत बड़ा है तथा मस्तक पर सहस्रफण-धारी अनन्त नागराज हैं। गुह्यकालिका देवी चारों ओर से नागफण वेष्टिता हैं। वे नागराज तक्षक द्वारा वामकङ्कण, अनन्त नाग द्वारा दक्षिण कङ्कण, नाग निर्मित करधनी तथा रत्नजटित पायजेब धारण किये हुए हैं। उनके वामभाग में शिवस्वरूप कल्पित वत्स हैं। देवी की दो भुजाएं हैं। वे अपने दोनों कानों में नरदेह युक्त कुण्डलों को धारण किये हुए हैं। उनका मुख प्रसन्न है तथा आकृति सौम्य है। उन नवरत्न विभूषिता शिवमोहिनी देवी की नारद आदि मुनिगण

सेवा कर रहे हैं। वे अट्टहास युक्त महाभयकरी देवी साधकों को अभीक्षित फल प्रदान करने वाली हैं।

इस ध्यान में गुह्यकाली को उपलक्षणमात्र समझना चाहिए।

भद्रकाली आदि की पूजा में भी यही ध्यान करना चाहिए।

दक्षिण कालिका का त्रयोविंशति वर्ण मन्त्र

दक्षिण कालिका का तेईस वर्ण का मुख्य मन्त्र इस प्रकार है—

क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं हूं हूं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं हूं हूं स्वाहा।

उक्त मन्त्र के पूजन का यन्त्र

उक्त मन्त्र का साधन करते समय जिस यन्त्र का निर्माण करके उसका पूजन करने का निर्देश है, उसे इस पुस्तक के तृतीय खण्ड के अन्त में प्रदर्शित किया है। यन्त्र संख्या ४ शीर्षक में उसे देख लें।

काली-ध्यान

इस मन्त्र के साधन में काली के ध्यान के सम्बन्ध में इस प्रकार बताया गया है—

शवारूढाम्महाभीमाङ्घोरदंष्ट्रां हसन्मुखीम्।
चतुर्भुजङ्खड्गमुण्ड वराभयकरां शिवाम्॥
मुण्डमालाधरान्देवीं ललजिजह्वान्दिगम्बराम्।
एवं सञ्चिन्तयेत्कालीं श्मशानलय वासिनीम्॥

भावार्थ—देवी शव पर आरूढ़, महाभयंकर स्वरूप वाली, घोर दांतों वाली, हास्यमुखी तथा चार भुजाओं वाली हैं। वे खड्ग तथा मुण्ड को धारण किये हुए भयदायिनी हैं। वे मुण्माला पहने हैं। उनकी जीभ लपलपा रही है। वे नग्न हैं तथा श्मशान में निवास करती हैं।

संक्षिप्त पूजा-विधि

इस मन्त्र के साधन हेतु संक्षिप्त पूजा विधि इस प्रकार बताई गई है—

अपने बाईं ओर चतुष्कोण का निर्माण कर—

ॐ ह: सामान्यार्घ्यं स्थापयामि।

इस मन्त्र से पूजन करके वहां पर अर्घ्यपात्र को स्थापित करे। फिर नम: शब्द का उच्चारण करते हुए उसे जल पूरित करे। उस जल में सूर्य मण्डल अङ्कुशमुद्रा से तीर्थों का आह्वान करे।

तीर्थ आह्वान का मन्त्र

ॐ गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदेसिन्धु कावेरि जलेस्मिन्सन्निधङ्कुरु॥
ॐ ब्रह्माण्डादर तीर्थानि करै: स्पृष्टानिते‍ऽ वै।
तैन सत्येन मे देव तीर्थन्देहि दिवाकर॥

इस प्रकार तीर्थों का आह्वान कर—

ॐ गङ्गादि सकल तीर्थेभ्यो नम:।

कहकर पुष्प-अक्षत आदि से पूजन करे। फिर—

ॐ अर्कमण्डलाय द्वादश कलात्मने नम.। ॐ वह्नि मण्डलाय दश कलात्मने नम:। ॐ सोम मण्डलाय षोडश कलात्मने नम:।

कहकर सूर्य, अग्नि तथा चन्द्र इन तीनों मण्डलों का पूजन करे। फिर—

ॐ षडङ्गेभ्यो नम।

कहकर षडङ्ग पूजन, अस्त्र से संरक्षण तथा कवच से अवगुण्ठन करके 'वम्' कहकर, धेनुमुद्रा द्वारा अमृतीकरण करके मत्स्यमुद्रा से आच्छादित कर, प्रणव (ॐ कार) का दस बार उच्चारण करे। फिर शङ्खमुद्रा को प्रदर्शित कर, धेनुमुद्रा तथा योनिमुद्रा को प्रदर्शित करे।

यह सामान्य अर्घ्य-स्थापना विधि है।

यन्त्र-लेखन और ऋष्यादि न्यास

कुंकुम, केशर, चन्दन आदि से भोजपत्र के ऊपर पहले बताये हुए यन्त्र को लिखकर ऋष्यादि न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास इस प्रकार करना चाहिए—

शिरसि भैरवाय ऋषये नमः।
मुखे उष्णिकछन्दसे नमः।
हृदये ॐ दक्षिण कालिकायै नमः।
गुह्ये क्रीं बीजाय नमः।
पादयोः ह्रूं शक्तये नमः।
सर्व्वाङ्गे क्रीं कीलकाय नमः।

षडङ्गन्यास

इसके उपरान्त षडङ्गन्यास करना चाहिए। यथा—

क्रां हृदयाय नमः।

कहकर तर्जनी, मध्यमा तथा अनामिका उंगलियों को फैलाकर हृदय का स्पर्श करे।

क्रीं शिरसे स्वाहा।

कहकर तर्जनी तथा मध्यमा उंगली से शिर का स्पर्श करे।

क्रूं शिखायै वषट्।

कहकर बंधी हुई मुट्ठी के अगूठे से शिखा का स्पर्श करे।

क्रैं कवचाय हुम्।

कहकर खुले हुए हाथों से सर्वाङ्ग का स्पर्श करे।

क्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्।

कहकर तर्जनी तथा अनामिका उंगली से दोनों नेत्र तथा मध्यमा उंगली से दोनों भौंहों के मध्य भाग का स्पर्श करे।

क्रः अस्त्राय फट्।

कहकर दिग्बन्धन करना चाहिए।

करन्यास

क्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः।
क्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा।
क्रूं मध्यमाभ्यां वषट्।
क्रैं अनामिकाभ्यां हुम्।
क्रः करतल करपृष्ठाभ्यां फट्।

इस प्रकार न्यास करके दस बार, सात बार अथवा पांच बार व्यापक न्यास करना चाहिए। फिर चार, सोलह अथवा आठ बार मूलमन्त्र का जप करते हुए पूरक, कुम्भक तथा रेचक—इन तीनों प्राणायामों को करना चाहिए। फिर दक्षिण काली का ध्यान करने के पश्चात् आह्वान करना चाहिए।

आह्वान की विधि

दोनों हाथों की अंजलि में पुष्प लेकर देवी के पूर्वोक्त स्वरूप का ध्यान करते हुए देवी को हृदय से, नासिका के ऊपर लाकर, मूलमन्त्र का उच्चारण करने के उपरान्त निम्नलिखित वाक्य का उच्चारण करना चाहिए—

एह्येहि महादेवि पादुकाभ्यान्दयानिधे।

कहकर अंजलि में रक्खे हुए पुष्पों की ओर मुह करके निम्नलिखित मन्त्र का उच्चारण करना चाहिए—

ॐ देवेशि भक्ति सुलभे परिवार समन्विते।
यावत्त्वान्पूजयिष्यामितावत्त्वं सुस्थिरा भव॥

यह कहकर पुष्पों को यन्त्र के ऊपर छोड़ देना चाहिए। फिर मूलमन्त्र का उच्चारण करके—

साङ्गे सायुधे सवाहने सावरणे सपरिवारे दक्षिण कालिके इहागच्छ।

कहकर आवाहन-मुद्रा से आवाहन करे तथा इहतिष्ठ कहकर स्थापन-मुद्रा से स्थापित करे। फिर इहसन्निधेहि—कहकर सन्निधीकरण मुद्रा से सन्निधीकरण करे तथा इहसन्निरुध्यस्व—कहकर सन्निरोधन-मुद्रा से सन्निरोधन करे। फिर इहसम्मुखीभव—कहकर सम्मुखीकरण-मुद्रा सम्मुखीकरण करे।

फिर अस्त्र से संरक्षण करके हूम्—इससे अवगुण्ठित कर, वम् कहकर धेनुमुद्रा से अमृतीकरण करके देवता का षडङ्गन्यास करके मूलमन्त्र द्वारा सकलीकरण कर, आं ह्रीं क्रों स्वाहा—इस मन्त्र को बारह बार जप कर लेलिहान-मुद्रा से देवता की प्राण प्रतिष्ठा करे। यथा—

आं ह्रीं क्रीं श्रीं दक्षिण कलिकाया वाङ्मनस्त्वक्चक्षु श्श्रोत्रघ्राण-प्राणा इहागत्य सुखञ्चिरन्तिष्ठन्तु स्वाहा।

इसे हाथ बांधकर पढ़े। फिर धेनुमुद्रा का प्रदर्शन करे।

पुष्पांजलि

इसके पश्चात् मूलमन्त्र का उच्चारण करके—

एषपुष्पाञ्जलि स्साङ्गसायुध सवाहन सावरण सपरिवार दक्षिण कालिका देवतायै समर्पयामि नमः।

कहकर पांच पुष्पांजलि प्रदान करे।

इसी प्रकार सभी स्थानों पर मूलमन्त्र का उच्चारण अवश्य करता रहे।

इदम्पाद्यमिदं माचमनीयम्, एषोऽर्घ्य, एषमधुपर्क. इदम्पुनराचमनीयं, इदंस्नानीयन्दक्षिण कालिकायै देवतायै नमः, इदंरक्तचन्दनानुलेपनम्, एते अक्षता, इमानिपुष्पाणि अमुक देवतायै वौषट्, एषधूप, एषदीपः, एतानि नैवेद्यानि कालिका देवतायै नमः।

इस प्रकार संक्षिप्त-पूजा करके. जपमाला लेकर किसी पात्र को

अपने बाएं हाथ में स्थापित कर, मूलमन्त्र द्वारा अर्घ्य के जल को छिड़ककर निम्नलिखित मन्त्र का उच्चारण करना चाहिए—

माला-मन्त्र

ॐ माले माले महामाये सर्व्वशक्ति स्वरूपिणि।
चतुर्व्वर्गस्त्वयिन्यस्त स्तस्मान्मे सिद्धिदाभव॥

फिर ह्रीं सिद्धयै नमः—कहकर माला को दाएं हाथ में लेकर हृदय के समीप ले जाकर मध्यमा उंगली के मध्य भाग से प्रत्येक दाने का स्पर्श करे, परन्तु सुमेरु को छोड़ दे।

फिर शरीर में कामकला का चिन्तन कर, मस्तक में गुरु का ध्यान करे तथा हृदय में देवी का चिन्तन करे। जिह्वा पर मन्त्र को दीपक के रूप में चिन्तन कर, उसकी प्रभा में जिह्वा को भी दीपक रूपिणी अनुभव करके मानसिक उपांशु जप करके माला, वर्णमाला अथवा संस्कृत महाशङ्ख, रुद्राक्ष, स्फटिक आदि किसी अन्य वस्तु की माला पर अथवा वैसे ही मूलमन्त्र को बिना विलम्ब किये, एक सौ आठ बार जपकर माला को मस्तक से लगाए। माला को मस्तक से लगाते समय निम्नलिखित मन्त्र का उच्चारण करना चाहिए—

ॐ त्वम्माले सर्व्वभूतानां सर्व्वलोक प्रियामता।
शिवङ्कुरुष्व मे भद्रे यशोवीर्य्यञ्च सर्वदा॥

यह पाठ करके ह्रीं सिद्धयै नमः—कहकर पुनः पूर्ववत् प्राणायाम, न्यास आदि करके देवता का पुष्प-अक्षत आदि से पूजन कर पुष्प, चन्दन, अक्षत युक्त शङ्खोदय से निम्नलिखित मन्त्र का जप करते हुए, जल को तेजोमय जानकर देवी के बाएं हाथ में समर्पित करना चाहिए।

मन्त्र यह है—

ॐ गुह्याति गुह्य गोप्त्रीत्वङ् गृहाणास्मत्कृतञ्जपम्।
सिद्धिर्भवतु मे देवित्वत्प्रसादान्महेश्वरि॥

तत्पश्चात् माला को सिर से नीचे उतारकर नीचे लिखे मंन्त्र का उच्चारण करना चाहिए—

ॐ त्वम्माले सर्व्वदेवानां सर्व्वसिद्धि प्रदामता।
तेन सत्येनमो सिद्धिन्देहि देवि नमोऽस्तुते ॥

इस प्रकार माला का पूजन करके उसे यत्न पूर्वक छिपाकर रख देना चाहिए। हाथ के स्पर्श के कारण माला भ्रष्ट हो जाने की शान्ति के लिए एक सौ आठ बार मूलमन्त्र का जप करना उचित है।

इसके उपरान्त देवी को आठ पुष्पांजलि देकर स्तोत्र तथा कवच आदि का पाठ करना चाहिए।

भगवती काली के स्तोत्र, कवच, हृदय, सहस्रनाम, बीजाक्षरी आदि का सङ्कलन इस पुस्तक के तृतीय खण्ड में किया गया है, अतः उन्हें वहा देखना चाहिए।

●

काली उपासना
(तृतीय खण्ड)

काली कीलक, काली अर्गल, काली क्रम स्तव, दक्षिण कालिका कवच, त्रैलोक्य विजय कवच, जगन्मङ्गल कवच, काली हृदय, कालिका हृदय स्तोत्र, महाकौतूहल दक्षिण काली हृदय स्तोत्र, काली क्षमापराध स्तोत्र, कालिका खड्गमाला स्तोत्र, सुधाधारा काली स्तोत्र, काली कर्पूर स्तोत्र, काली स्तव, कालिका स्तवन, कालिकाष्टक, काली शतनाम स्तोत्र, अष्टोत्तरशत नाम स्तोत्र, सहस्रनाम स्तोत्र, सहस्राक्षरी, बीज सहस्राक्षरी काली तन्त्र, काल्युपनिषत्, कालिकोपनिषत् आदि।
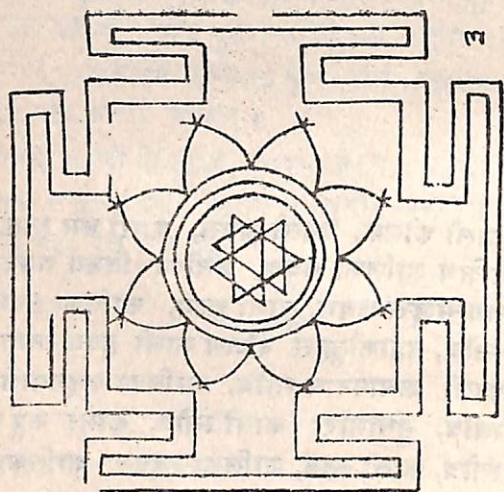
श्री काली कीलक

ॐ अस्य श्री कालिका कीलकस्य सदाशिव ऋषिरनुष्टुप् छन्दः श्री दक्षिण कालिका देवता सर्वसिद्धि साधने कीलकन्यासे जपे विनियोग।

भावार्थ—इस श्री कालिका कीलक के सदाशिव ऋषि हैं, अनुष्टुप छन्द हैं, दक्षिण कालिका देवता हैं तथा सर्वसिद्धि साधन में इस कोलकन्यास के जप का विनियोग है।

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि कीलकं सर्वकामदम्।
कालिकायाः परं तत्वं सत्यं सत्यं त्रिभिर्मम॥
दुर्वासाश्च वशिष्ठश्च दत्तात्रेयो बृहस्पतिः।
सुरेशो धनदश्चैव अङ्गिराश्च भृगूद्वहः॥
च्यवनः कार्तवीर्यश्च कश्यपोऽथ प्रजापतिः।
कीलकस्य प्रसादेन सर्वैश्वर्यमवाप्नुयुः॥

भावार्थ—अब मैं समस्त कामनाओं को देने वाले कालिका कीलक को कहता हूं। यह परमतत्त्व है—इसे सत्य, सत्य, सत्य, समझना चाहिए। दुर्वासा, वशिष्ठ, दत्तात्रेय, बृहस्पति, इन्द्र, कुवेर, अंगिरा, भृगु, च्यवन, कार्तवीर्य कश्यप तथा प्रजापति आदि ने इसी कीलक की कृपा से समस्त ऐश्वर्यों को प्राप्त किया है।

अथ कीलक

ॐ कारं तु शिखाप्रान्ते लम्बिका स्थान उत्तमे।
सहस्रारे पङ्कजे तु क्रीं क्रीं क्रीं वाग्विलासिनी॥
कूर्चबीजयुगं भाले नाभौ लज्जायुगं प्रिये।
दक्षिणे कालिके पातु स्वनासापुटयुग्मके॥
हूंकारद्वन्द्वं गण्डे द्वे द्वे मायै श्रवणद्वये।
आद्यातृतीयं विन्यस्य उत्तराधर सम्पुटे॥

स्वाहा दशनमध्ये तु सर्ववर्णन्न्यसेत् क्रमात् ।
मुण्डमाला असिकरा काली सर्वार्थसिद्धिदा ।।
चतुरक्षरी महाविद्या क्रीं क्रीं हृदय पङ्कजे ।
ॐ हूं ह्रीं क्रीं ततो हूं फट् स्वाहा च कंठकूपके ।।
अष्टाक्षरी कालिका या नाभौ विन्यस्य पार्वति ।
क्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं स्वाहान्ते च दशाक्षरी ।।
मम बाहु युगे तिष्ठ मम कुण्डलिकुण्डले ।
हूं ह्रीं मे वह्निजाया च हूं विद्या तिष्ठ पृष्ठके ।।
क्रीं हूं ह्रीं वक्षोदेशे च दक्षिणे कालिके सदा ।
क्रीं हूं ह्रीं वह्निजायाऽन्ते चतुर्दशाक्षरेश्वरी ।।
क्रीं तिष्ठ गुह्यदेशे मे एकाक्षरी च कालिका ।
ह्रीं हूं फट् च महाकाली मूलाधार निवासिनी ।
सर्वरोमाणिमे काली करांगुल्यङ्कपालिनी ।
कुल्ला कटि कुरुकुल्ला तिष्ठ तिष्ठ सकली मम ।।
विरोधिनी जनुयुग्मे विप्रचित्ता पदद्वये ।
तिष्ठमे च तथा चोग्रा पादमूले न्यसेत्क्रमात् ।।
प्रभा तिष्ठतु पादाग्रे दीप्ता पादांगुलीनपि ।
नीली न्यसेद्बिन्दुदेशे घना नादे च तिष्ठ मे ।।
वलाका विन्दुमार्गे च न्यसेत्सर्वाङ्ग सुन्दरी ।
मम पातालके मात्रा तिष्ठ स्वकुल कायिके ।।
मुद्रा तिष्ठ स्वमर्त्येमां मितास्वङ्गाकुलेषु च ।
एता नृमुण्डमालास्रग्धारिण्य: खड्गपाणय: ।।
तिष्ठन्तु मम गात्राणि सन्धिकूपानि सर्वश: ।
ब्राह्मी च ब्रह्मरंध्रे तु तिष्ठस्व घटिका परा ।।
नारायणी नेत्रयुगे मुखे माहेश्वरी तथा ।
चामुण्डा श्रवणद्वन्द्वे कौमारी चिबुके शुभे ।।
तथा सुन्दरमध्ये तु तिष्ठ मे चापराजिता ।
वाराही चास्थिसन्धौ च नारसिंही नृसिंहके ।।

आयुधानि गृहीतानि तिष्ठस्वेतानि मे सदा।
इति ते कीलकं दिव्यं नित्यं यः कीलयेत्स्वकम् ।।
कवचादौ महेशानि तस्य सिद्धिर्न संशयः।
श्मशाने प्रेतयोर्वापि प्रेतदर्शनतत्परः ।।
यः पठेत्पाठयेद्वापि सर्वसिद्धीश्वरो भवेत्।
सवाग्मी धनवान्दक्षः सर्वाध्यक्षः कुलेश्वरः ।।
पुत्र बान्धव सम्पन्नः समीर सदृशो बले।
न रोगवान् सदा धीरस्तापत्रय निषूदनः ।।
मुच्यते कालिका पायात् तृणराशिमिवानल
न शत्रुभ्यो भयं तस्य दुर्गमेभ्यो न बाध्यते ।।
यस्य देहे कीलकं तु धारणं सर्वदाम्बिके।
तस्य सर्वार्थसिद्धिः स्यात्सत्यं सत्यं वरानने ।।
मन्त्राच्छतगुणं देवि कवचं यन्मयोदितम्।
तस्माच्छतगुणं चैव कीलकं सर्वकामदम् ।।
तथा चाप्यसिता मन्त्रं नील सारस्वते मनौ।
न सिध्यति वरारोहे कीलकार्गलके विना ।।
विहीने कीलकार्गलके काली कवचं यः पठेत्।
तस्य सर्वाणि मन्त्राणि स्तोत्राण्य सिद्धये प्रिये ।।
।। इति श्री कालिकाकीलकम् समाप्तम् ।।

श्री काली अर्गल

ॐ अस्य श्री कालिकार्गलस्तोत्रस्य भैरव ऋषिरनुष्टप् छन्दः श्री कालिका देवता मम सर्वसिद्धिसाधने विनियोगः।

भावार्थ—इस श्री कालिका अर्गल स्तोत्र के भैरव ऋषि हैं, अनुष्टुप छन्द है, कालिका देवता हैं तथा सम्पूर्ण सिद्धियों के साधन में इसका विनियोग है।

ॐ नमस्ते कालिके देवि आद्यबीजत्रय प्रिये।
वशमानय मे नित्यं सर्वेषां प्राणिनां सदा ।।

कूर्च्चयुग्मं ललाटे च स्थातु मे शववाहिना।
सर्वसौभाग्यसिद्धि च देहि दक्षिण कालिके॥
भुवनेश्वरि बीजयुग्मं भ्रूयुगे मुण्डमालिनी।
कन्दर्परूपं मे देहि महाकालस्य गेहिनि॥
दक्षिणे कालिके नित्ये पितृकाननवासिनि।
नेत्रयुग्मं च मे देहि ज्योतिरालेकनं महत्॥
श्रवणे च पुनर्लज्जाबीजयुग्मं मनोहरम्।
महाश्रुतिधरत्वं च मे देहि मुक्त कुन्तले॥
ह्रीं ह्रीं बीजद्वयं देवि पातु नासापुटे मम।
देहि नाना विधिमह्यं सुगन्धिं त्वं दिगम्बरे॥
पुनस्त्रिबीजप्रथमं दन्तोष्ठरसनादिकम्।
गद्यपद्यमयींवाजीं काव्यशास्त्राद्यलंकृताम्॥
अष्टादशपुराणानां स्मृतीनां घोरचण्डिके।
कविता सिद्धिलहरीं मम जिह्वां निवेशय॥
वह्निजाया महादेवि घण्टिकायां स्थिराभव।
देहि मे परमेशानि बुद्धिसिद्धिरसायकम्॥
तुर्याक्षरी चित्स्वरूपा या कालिका मन्त्रसिद्धिदा।
सा च तिष्ठतु हृत्पद्मे हृदयानन्दरूपिणी॥
षडक्षरी महाकाली चण्डकाली शुचिस्मिता।
रक्तासिनी घोरदंष्ट्रा भुजयुग्मे सदाऽवतु॥
सप्ताक्षरी महाकाली महाकालरतोद्यता।
स्तनयुग्मे सूर्यकर्णा नरमुण्डसुकुन्तला॥
तिष्ठ स्वजठरे देवि अष्टाक्षरी शुभप्रदा।
पुत्रपौत्रकलत्रादि सुहृन्मित्राणि देहि मे॥
दशाक्षरी महाकाली महाकालप्रिया सदा।
नाभौ तिष्ठतु कल्याणी श्मशानालयवासिनी॥
चतुर्दशार्णवा या च जयकाली सुलोचना।
लिङ्गमध्ये च तिष्ठस्व रेतस्विनी मामाङ्गके॥

गुह्यमध्ये हर्षकाला मम तिष्ठ कुलाङ्गने।
सर्वाङ्गे भद्रकाली च तिष्ठ मे परमात्मिके ॥
कालि पादयुगे तिष्ठ मम सर्वमुखे शिवे।
कपालिनी च या शक्तिः खड्गमुण्डधरा शिवा ॥
पादद्वयांगुलिष्वङ्गे तिष्ठ स्वपापनाशिनि।
कुल्लादेवी मुक्तकेशी रोमकूपेषु वैमम ॥
तिष्ठतु उत्तमाङ्गे च कुरु कुल्ला महेश्वरी।
विरोधिनी विराधे च मम तिष्ठतु शंकरी ॥
चिप्रचित्तै महेशानि मुण्डधारिणि तिष्ठमाम्।
मार्गे दुर्मार्गगमने उग्रा तिष्ठतु सर्वदा ॥
प्रभादिक्षु विदिक्षुमाम् दीप्तां दीप्तं करोतुमाम्
नीला शक्तिश्च पातालेघना चाकाशमण्डले ॥
पातु शक्तिर्वलाका मे भुवं मे भुवनेश्वरी।
मात्रा मम कुले पातु मुद्रा तिष्ठतु मन्दिरे ॥
मिता मे योगिनी या च तथा मित्रकुलप्रदा।
सा मे तिष्ठतु देवेशि पृथिव्यां दैत्यदारिणी ॥
ब्राह्मी ब्रह्मकुले तिष्ठ मम सर्वार्थदायिनी।
नारायणी विष्णुमाया मोक्षद्वारे च तिष्ठ मे ॥
माहेश्वरी वृषारूढा काशिका पुरवासिनी।
शिवतां देहि चामुण्डे पुत्रपौत्रादि चानघे ॥
कौमारी च कुमाराणां रक्षार्थं तिष्ठ मे सदा।
अपराजिता विश्वरूपा जये तिष्ठ स्वभाविनी ॥
वाराही वेदरूपा च सामवेद परायणा।
नारसिंही नृसिंहस्य वक्षःस्थल निवासिनी ॥
सा मे तिष्ठतु देवेशि पृथिव्यां दैत्यदारिणी।
सर्वेषां स्थावरादीनां जङ्गमानां सुरेश्वरी ॥
स्वेदजोद्भिजण्डजानां चराणां च भयादिकम्।
विनाशयाप्यभिमतिं देहि दक्षिण कालिके ॥

य इदं चार्गलं देवि यः पठेत्कालिकार्चने ।
सर्वसिद्धिमवाप्नोति खेचरो जायते तु सः ।।
।। इति श्री कालिकार्गल स्तोत्रम् समाप्तम् ।।

श्री काली क्रम स्तव

ॐ नमामि कालिका देवीं कलिकल्मष नाशिनीम्
नमामि शम्भुपत्नीञ्च नमामि भवसुन्दरीं ।।१।।
आद्यांदेवी नमस्कृत्य नमस्त्रैलोक्य मोहिनीम् ।
नमामि सत्संकल्पां सर्वपर्वत वासिनीम् ।।२।।
पार्वतीञ्च नमस्कृत्य नमो नित्यं नगात्मजे ।।३।।
मातस्त्वदीयचरणं शरणं सुराणां
ध्यानास्पदैर्दिशति काङ्क्षितवाञ्छनीयम् ।
येषां हृदि स्फुरति तच्चरणारविन्दं
धन्यास्त एव नियतं सुरलोक पूज्याः ।।४।।
गन्धैः शुभैः कुंकुम पङ्कलेपै
मतिस्त्वदीयं चरणं हि भक्ताः ,
स्मरन्ति शृण्वन्ति लुठन्तिधीरा
स्तेषां जरानैव भवेद्भवानि ।।५।।
तवांघ्रिपद्मं शरणं सुराणाम्
परापरा त्वं परमा प्रकृष्टिः।
दिने दिने देवि भवेत् करस्थः
किमन्यमुच्चैः कथयन्ति सन्तः ।।६।।
कवीन्द्राणां दर्पं करकमल शोभा परिचितम् ।
विधुन्वज्जङ्घा मे सकलगणमेतद् गिरिसुते ।।
अतस्त्वत्पादाब्जं जननि सततं चेतसि मम ।
हितं नारीभूतं प्रणिहितपदं शाङ्करमपि ।।७।।
ये ते दरिद्राः सततं हि मात
स्त्वदीयपादं मनसा स्मरन्ति

देवासुराः सिद्धवराश्च सर्वे
तव प्रसादात् सततं लुठन्ति ॥८॥
हरिस्त्वत्पादाब्जं निखिलजगतां भूतिरभवत् ।
शिवोध्यात्वा ध्यात्वा किमपि परमं तत्परतरम् ॥
प्रजानां नाथोऽयं तदनु जगतां सृष्टिविहितम् ।
किमन्यत्ते मात स्तव चरणयुग्मस्य फलता ॥९॥
इन्द्रः सुराणां शरणं शरण्ये
प्रजापतिः काश्यप एव नान्यः ।
वरः पतिर्विष्णुभवः परेशि
त्वदीयपादाब्जफलं समस्तम् ॥१०॥
त्वदीयनाभी नव पल्लवेवा
नवांकुरैर्लोमवरैः प्रफुल्लम् ।
सदा वरेण्ये शरणं विधेहि
किम्वापरं चित्तधरैर्विभाव्यम् ॥११॥
त्वदीयपादार्चित वस्तु सम्भवः
सुरासुरैः पूज्यमवाप शम्भुः ।
त्वदीय पादार्चन तत्परो हरिः
सुदर्शनाधीश्वरतामुपालभत् ॥१२॥
धरित्री गन्धरूपेण रसेन च जलं धृतम् ।
तेजो वह्निस्वरूपेण प्रणवे ब्रह्मरूपधृक् ॥१३॥
मुखं चन्द्राकारं त्रिभुवनपदे यामसहितम्
त्रिनेत्रं मे मातः परिहरित यः स्यात् स तु पशुः ।
न सिद्धिस्तस्य स्यात् सुरतसततं विश्वमखिलं
कटाक्षैस्ते मातः सफलपदपद्मं स लभते ॥१४।
ऋतुस्त्वं हरिस्त्वं शिवस्त्वं मुरारेः ।
पुरा त्वं परा त्वं सदाशीर्मुरारेः ॥
हरस्त्वं हरिस्त्वं शिवस्त्वं शिवानां ।
गति स्त्वं गतिस्त्वं गति स्त्वं भवानि ॥१५॥

नवा ऽहं नवा त्वं नवा वा क्रियाया ।
वरस्त्वं चरुस्त्वं शरण्य धराया: ॥
नद स्त्वं नदीं त्वं गति स्त्वं निधीनां ।
सुत स्त्वं सुता त्वं पिता त्वं गृहीणाम् ॥१६॥
त्वदीय मुण्डाख्य भवानि मालां
विधाय चित्ते भव पद्मजापय: ।
सुराधिपत्वं लभते मुनीन्द्र:
शरण्यमेतत् किमयीह चान्यत् ॥१७॥
नरस्य मुण्डञ्च तथा हि खड्गं
भुजद्वये ये मनसा जपन्ति ।
सव्येतरे देवि वराभयञ्च
भवन्ति ते सिद्धजना मुनीन्द्रा: ॥१८॥
शिरोपरि त्वां हृदये निधाय
जपन्ति विद्यां हृदये कदाचित् ।
सदा भवेत्का व्यरसस्य वेत्ता
अन्ते परद्वन्द्वमुयाश्रयेत ॥१९॥
दिगम्बरा त्वां मनसा विचिन्त्य
जपेत्पराख्यां जगतां जनीति ।
जत्पेराव्यां जगतां मतिश्च
किम्वा पराख्या शरणं भवाम: ॥२०॥
शिवाविरावै: परिवेष्टितां त्वां
निधाय चित्ते सततं जपन्ति ।
भवेय देवेशि परापरादि
निरीशतां देवि परा वदन्ति ॥२१॥
त्वदीय शृङ्गाररसं निधाय
जपन्ति मन्त्रं यदि वेदमुख्या ।
भवन्ति ते देवि जनापवादं
कवि: कवीनामपि चाग्रजन्मा ॥२२॥

विकीर्णवेशां मनसा निधाय
जपन्ति विद्यां चकितं कदाचित् ।
सुधाधिपत्यं लभते नरः स
किमस्ति भूम्यां शृणु कालकालि ॥२३॥
त्वदीय बीज त्रयमातरेत
जपन्ति सिद्धास्तु विमुक्तिहेतोः ।
तदेव मास्तव पादपद्मा
भवन्ति सिद्धिश्च दिनत्रये ऽपि ॥२४॥
त्वदीय कूर्चद्वयजापकत्वात्
सुरासुरेभ्यो ऽपि भवेच्च वर्णः ।
धनित्व पाण्डित्य मयन्ति सर्वे
किम्वापरान्देवि परापराख्या ॥२५॥
त्वदीय लज्जाद्वय जापकत्वा
द्भुवेन्महेशानि चतुर्थसिद्धिः ।
त्वदीय सत्सिद्धिवरप्रसादा
त्तवाधिपत्यं लभते नरेशः ॥२६॥
ततः स्वनाम्नः शृणु मातरेतत्
फलं चतुर्वर्ग वदन्ति सन्तः ।
वीजत्रयं वै पुनरप्युपास्य
सुराधिपत्यं लभते मुनीन्द्रः ॥२७॥
पुनस्तथा कूर्च्चयुगं जपन्ति
नमन्ति सिद्धा नरसिंहरूपा ।
ततोऽपि लज्जाद्वयजापकत्वा
ल्लभन्ति सिद्धिं मनसो जनास्ते ॥२८॥
त्रिपञ्चारे चक्रे जननि सततं सद्धि सहितां ।
विचिन्वन्सञ्चिन्वन् परमममृतं दक्षिण पदम् ॥
सद्याकाली ध्यात्वा विधि विहित पूजापरिकरा ।
न तेषां संसारे विभवपरिभङ्गप्रमथने ॥२९॥

त्वं श्री स्त्वमीश्वरी काली त्वं ह्री स्त्वञ्च करालिका ।
लज्जा लक्ष्मी: सती गौरी नित्याचिन्त्या चिति: क्रिया ।।३
अकुल्याद्यै श्चित्ते प्रचयपदपद्यै: पदयुतै: ।
सदा जप्त्वा स्तुत्वा जपति हृदि मन्त्रं मनुविदा ।
न तेषां संसारे बिभवपरिभङ्गप्रमथने ।
क्षणं चित्तं देवि प्रभवति विरुद्धे परिकरम् ।।३१।।
त्रयस्त्रिंशै: श्लोकैर्यदि जपति मन्त्रं स्तवति च ।
नमच्चैतानेतान् परममृतकल्पं सुखरम् ।।
भवेत् सिद्धि शुद्धौ जगति शिरसा त्वत्पदयुगं ।
प्रणक्यं प्रकाम्यं वरसुरजनै: पूज्यविततिम् ।।३२।।

।। इति कालीक्रम स्तव समाप्तम् ।।

श्रीमद् दक्षिण कालिका कवच

कैलासशिखरारूढं भैरवं चन्द्रशेखरम् ।
वक्ष:स्थले समासीना भैरवी परिपृच्छति ।।

श्री भैरव्युवाच

देवेश परमेशान लोकानुग्रहकारक: ।
कवचं सूचितं पूर्वं किमर्थं न प्रकाशितम् ।।
यदि मे महती प्रीतिस्तवास्ति कुल भैरव ।
कवचं कालिका देव्या: कथयस्वानुकम्पया ।।

श्री भैरव उवाच

अप्रकाश्य मिदं देवि नर लोके विशेषत: ।
लक्षवारं वारितासि स्त्री स्वभावाद्धि पृच्छसि ।।

देव्युवाच

सेवका बहवो नाथ कुलधर्म परायणा: ।
यतस्ते त्यक्तजीवाशा शवोपरि चितोपरि ।।

तेषां प्रयोग सिद्धयर्थं स्वरक्षार्थं विशेषत: ।
पृच्छामि वहुशो देव कथयस्व दयानिधे ।।

श्री भैरव उवाच

कथयामि शृणु प्राज्ञे कालिका कवचं परम् ।
गोपनीयं पशोरग्रे स्वयोनिमपरे यथा ।।

भावार्थ—कैलाश शिखर पर बैठे हुए चन्द्रशेखर भैरव से उनके वक्ष:स्थल पर सुशोभित देवी भैरवी ने प्रश्न किया—हे देवेश ! हे परमेश्वर ! हे लोगों पर कृपा करने वाले ! आपने पूर्व सूचित कवच को प्रकाशित क्यों नहीं किया है ? हे कुल भैरव ! यदि मेरे ऊपर आपकी विशेष प्रीति है, तो कृपा करके कालिका देवी का कवच कहिए। श्री भैरव ने कहा—हे देवि ! यह कवच अप्रकाशनीय है—विशेषकर मनुष्य लोक में। तुमसे लाखों बार मैंने मना किया है, फिर भी तुम स्त्री स्वभाव के कारण ऐसा प्रश्न करती हो। देवी बोलीं—हे नाथ ! कुलधर्म में लगे हुए बहुत से सेवक हैं, वे सब जीवन की आशा त्यागकर शव के ऊपर तथा चिता पर स्थित हैं, अत: उनके प्रयोग की सिद्धि और विशेषकर उनकी अपनी रक्षा के लिए ही हे देव ! मैं बारम्बार पूछ रही हूं। हे दयानिधान ! आप उसे बताइये। श्री भैरव बोले—हे प्राज्ञे ! सुनो, मैं परम 'कालिका कवच' को कहता हूं। इसे पशु (अथवा पशु जैसा आचरण करने वाले मनुष्य) के समक्ष स्व योनि के समान गुप्त रखना चाहिए।

अस्य कालिका कवचस्य भैरव ऋषि: उष्णिक् छन्द: अद्वैतरूपिणी श्री दक्षिण कालिका देवता ह्रीं बीजं हूं शक्ति: क्रीं कीलकं सर्वार्थ साधन पुर: सरमन्त्र सिद्धौ विनियोग: ।

भावार्थ—इस कालिका कवच के भैरव ऋषि हैं, उष्णिक् छन्द है, अद्वैतरूपिणी श्री दक्षिण कालिका देवता हैं, ह्रीं बीज है, हूं शक्ति है, क्रीं कीलक है तथा समस्त आकांक्षाओं की पूर्ति सहित मन्त्र की सिद्धि में इसका विनियोग है।

श्री मद्दक्षिण कालिका कवच इस प्रकार है—

सहस्रारे महापद्मे कर्पूरधवलो गुरुः ।
वामोरुस्थिततच्छक्तिः सदा सर्वत्ररक्षतु ॥
परमेशः पुरः पातु परापरगुरुस्तथा ।
परमेष्ठी गुरुः पातु दिव्य सिद्धिश्च मानवः ॥
महादेवी सदा पातु महादेवः सदावतु ।
त्रिपुरो भैरवः पातु दिव्यरूपधरः सदा ॥
ब्रह्मानन्दः सदापातु पूर्णदेवः सदावतु ।
चलश्चित्तः सदापातु चेलाञ्चलश्च* पातु माम् ॥
कुमारः क्रोधनश्चैव वरदः स्मरदीपनः ।
मायामायावती चैव सिद्धौधाः पातु सर्वदा ॥
विमलो कुशलश्चैव भीमसेनः सुधाकरः ।
मीनो गोरक्षकश्चैव भोजदेवः प्रजापतिः ॥
मूलदेवो रन्तिदेवो विघ्नेश्वर हुताशनः ।
सन्तोषः समयानन्दः* पातु मां मनवा सदा ॥
सर्वेऽप्यानन्दनाथान्तः अम्बान्तां मातरः क्रमात् ।
गणनाथः सदा पातु भैरवः पातु मां सदा ॥
वटुको नः सदा पातु दुर्गा मां परिरक्षतु ।
शिरसः पादपर्यन्तं पातु मां घोर दक्षिणा ॥
तथा शिरसि मां काली हृदि मूले च रक्षतु ।
सम्पूर्ण विद्यया देवी सदा सर्वत्र रक्षतु ॥
क्रीं क्रीं क्रीं वदने पातु हृदि हूं हूं सदावतु ।
ह्रीं ह्रीं पातु सदाधारे दक्षिणे कलिके हृदि ॥
क्रीं क्रीं क्रीं पातु मे पूर्वे हूं हूं दक्षे सदावतु ।
ह्रीं ह्रीं मां पश्चिमे पातु हूं हूं पातु सदोत्तरे ॥

*पाठान्तरः—(१) चेला चलपल, (२) चेला लोचन ।

*पाठान्तरः—समरानन्दः

पृष्ठेपातु सदा स्वाहा मूला सर्वत्र रक्षतु ।
षडङ्गे युवती पातु षडङ्गेषु सदैव माम् ॥
मन्त्रराजः सदा पातु ऊर्ध्वाधो दिग्विदिक् स्थितः ।
चक्रराजे स्थिताश्चापि देवताः परिपान्तु माम् ॥
उग्रा उग्रप्रभा दीप्ता पातु पूर्वे त्रिकोणके ।
नीला घना वलाका च तथा परत्रिकोणके ॥
मात्रा मुद्रा मिता चैव तथा मध्य त्रिकोणके ।
काली कपालिनी कुल्ला कुरुकुल्ला विरोधिनी ॥
बहिः षट्कोणके पान्तु विप्रचित्ता तथा प्रिये ।
सर्वाः श्यामाः खड्गधरा वामहस्तेन तर्जनीः ॥
ब्राह्मी पूर्वदले पातु नारायणी तथाग्निके ।
माहेश्वरी दक्षदले चामुण्डा राक्षसे ऽवतु ॥
कौमारी पश्चिमे पातु वायव्ये चापराजिता ।
वाराही चोत्तरे पातु नारसिंही शिवेऽवतु ॥
ऐं ह्रीं असिताङ्गः पूर्वे भैरवः परिरक्षतु ।
ऐं ह्रीं रुरुश्चाग्निकोणे ऐं ह्रीं चण्डस्तु दक्षिणे ॥
ऐं ह्रीं क्रोधो नैर्ऋते ऽव्यात् ऐं ह्रीं उन्मत्तकस्तथा ।
पश्चिमे पातु ऐं ह्रीं मां कपाली वायु कोणके ॥
ऐं ह्रीं भीषणाख्यश्च उत्तरे ऽवतु भैरवः ।
ऐं ह्रीं संहार ऐशान्यां मातृणामङ्कगा शिवाः ॥
ऐं हेतुको बटुकः पूर्वदले पातु सदैव माम् ।
ऐं त्रिपुरान्तको बटुक आग्नेय्यां सर्वदावतु ॥
ऐं वह्नि वेतालो बटुको दक्षिणे मां सदा ऽवतु ।
ऐं अग्नि जिह्वबटुको ऽव्यात् नैर्ऋत्यांपश्चिमे तथा ॥
ऐं कालबटुकः पातु ऐं करालबटुकस्तथा ।
वायव्यां ऐं एकः पातु उत्तरे बटको ऽवतु ॥
ऐं भीम बटुकः पातु ऐशान्यां दिशि मां सदा ।
ऐं ह्रीं ह्रीं हूं फट् स्वाहान्ताश्चतुः षष्टिमातरः ॥

ऊर्ध्वाधो दक्षवामार्गे पृष्ठदेशे तु पातु माम् ।
ऐं हूं सिंह व्याघ्रमुखी पूर्वे मां परिरक्षतु ।।
ऐं कां कीं सर्पमुखी अग्निकोणे सदाऽवतु ।
ऐं मां मां मृगमेषमुखी दक्षिणे मां सदाऽवतु ।।
ऐं चौं चौं गजराजमुखी नैऋत्यां मां सदाऽवतु ।
ऐं में में विडालमुखी पश्चिमे पातु मां सदा ।।
ऐं खौं खौं क्रोष्टुमुखी वायुकोणे सदाऽवतु ।
ऐं हां हां ह्रस्वदीर्घमुखी लम्बोदर महोदरी ।।
पातुमामुत्तरे कोण ऐं ह्लीं ह्लीं शिवकोणके ।
ह्रस्वजङ्घतालजङ्घ प्रलम्बौष्ठी सदाऽवतु ।।
एताः श्मशानवासिन्यो भीषणा विकृताननाः ।
पान्तु मां सर्वदा देव्यः साधकाभीष्ट पूरिकाः ।।
इन्द्रो मां पूर्वतो रक्षेदाग्नेय्या मग्निदेवता ।
दक्षे यमः सदा पातु नैऋत्यां नैऋतिश्च माम् ।।
वरुणोऽवतु मां पश्चात् वायुर्मां वायवेऽवतु ।
कुवेरश्चोत्तरे पायात् ऐशान्यां तु सदाशिवः ।।
ऊर्ध्वं ब्रह्मा सदापातु अधश्चानन्तदेवता ।
पूर्वादिदिक् स्थिताः पान्तु वज्राद्याश्चायुधाश्चमाम् ।।
कालिका ऽवतु शिरसि हृदये कालिका ऽवतु ।
आधारे कालिका पातु पादयोः कालिका ऽवतु ।।
दिक्षु मां कालिका पातु विदिक्षु कालिका ऽवतु ।
ऊर्ध्वं मे कालिका पातु अधश्च कालिका ऽवतु ।।
चर्मासृङ्मांस मेदाऽस्थि मज्जा शुक्राणि मे ऽवतु ।
इन्द्रयाणि मनश्चैव देहं सिद्धिं च मे ऽवतु ।।
आकेशात् पादपर्यन्तं कालिका मे सदाऽवतु ।
वियति कालिका पातु पथि मां कालिका ऽवतु ।।
शयने कालिका पातु सर्वकार्येषु कालिका ।
पुत्रान् मे कालिका पातु धनं मे पातु कालिका ।।

यत्र मे संशयाविष्टास्ता नश्यन्तु शिवाज्ञया ।

भावार्थ—सहस्रार में तथा महापद्म में कर्पूर की भांति उज्ज्वल वर्ण वाले गुरु (शिवजी), जिनकी बाईं जांघ पर उनकी शक्ति विराजमान हैं, सदैव सभी स्थानों की रक्षा करें । परमेश्वर, परापर गुरु, परमेष्ठी गुरु तथा द्विव्यौघ, सिद्धौघ एवं मानवौघ गुरु सामने वाले प्रदेश की रक्षा करें । महादेवी सदैव रक्षा करे तथा महादेव सदैव रक्षा करें । दिव्यरूपधारी त्रिपुर भैरव सदैव रक्षा करें । ब्रह्मानन्द निरन्तर रक्षा करें, पूर्णदेव सदा रक्षा करें, चलचित्त सदा रक्षा करें तथा चेलाञ्चल (अथवा चलचल) मेरी रक्षा करते रहें । कुमार, क्रोधन, वरद, स्मरदीपन तथा माया और मायावती—ये सिद्धौघ गुरु सदैव रक्षा करें । विमल, कुशल, भीमसेन, सुधाकर, मीन, गौरक्षक, भोजदेव, प्रजापति, मूलदेव, रन्तिदेव, विघ्नेश्वर, हुताशन, सन्तोष और समयानन्द (अथवा समरानन्द)—ये मानवौघ गुरु मेरी सदैव रक्षा करें । जिनके नाम के अन्त में 'आनन्द नाथ' है वे सब तथा जिनके अन्त में 'अम्बा' है, वे सभी क्रम से मेरी रक्षा करें । गणनाथ सदैव रक्षा करें तथा भैरव मेरी सदैव रक्षा करें । वटुक सदैव रक्षा करें, दुर्गा मेरी रक्षा करें । शिर से पाव तक घोर दक्षिणा मेरी रक्षा करें । काली शिर, हृदय तथा मूलाधार में मेरी रक्षा करें । समस्त विद्याओं के साथ देवी सदैव सब स्थानों में मेरी रक्षा करें । क्रीं क्रीं क्रीं मुख में रक्षा करें, 'हूं हूं' सदैव हृदय में रक्षा करें, 'ह्री ह्री' सदैव मूलाधार में रक्षा करें तथा 'दक्षिण कालिका' हृदय की रक्षा करें । 'क्रीं क्रीं क्रीं' पूर्व में मेरी रक्षा करें, 'हूं हूं' दक्षिण में सदैव रक्षा करें । 'ह्रीं ह्रीं' पश्चिम में मेरी रक्षा करें, 'हूं हूं' सदैव उत्तर में रक्षा करें । स्वाहा सदैव पीठ की रक्षा करें, सब स्थानों की रक्षा मूला करें । शडङ्ग तथा सर्वाङ्गा में युवती सदैव मेरी रक्षा करें, ऊपर-नीचे तथा दिशा-विदिशाओं में विद्यमान रहकर मन्त्रराज सदैव रक्षा करें तथा चक्रराज में स्थित देवता भी मेरी रक्षा करते रहें । उग्रा, उग्रप्रभा तथा दीप्ता पूर्व दिशा के त्रिकोण में व नीला, घना तथा बलाका

उसी प्रकार दूसरे त्रिकोण में रक्षा करें। मात्रा, मुद्रा और मिता उसी तरह मध्य के त्रिकोण में तथा काली, कपालिनी, कुल्ला, कुरुकुल्ला, विरोधिनी एवं विप्रचित्ता बाहर के छहों कोणों में मेरी रक्षा करें। हे प्रिये ! ये सभी देवियां श्यामवर्ण वाली तथा खड्गधारिणी हैं और अपने बाएं हाथ की तर्जनो उंगली को दिखा रही हैं। ब्राह्मणीदेवी पूर्व दल में तथा नारायणी अग्निकोण में रक्षा करें। माहेश्वरी दक्षिण-दल में एवं चामुण्डा नैऋर्त्यकोण में रक्षा करें। ऐं ह्रीं असिताङ्ग भैरव पूर्व में, ऐं ह्रीं रुरु भैरव आग्नेय कोण में तथा ऐं ह्रीं चण्ड-भैरव दक्षिण में रक्षा करें। ऐं ह्रीं क्रोध भैरव नैऋर्त्य कोण में, ऐं ह्रीं उन्मत्त भैरव पश्चिम दिशा में तथा ऐं ह्रीं कपाली भैरव वायव्य कोण में मेरी रक्षा करें। ऐं ह्रीं भीषण नामक भैरव उत्तर दिशा में तथा ऐं ह्री संहार भैरव ईशान कोण में मेरी रक्षा करें—ये सभी भैरव माताओं की गोद में बैठे हुए हैं। ऐं वह्निवेताल वटुक दक्षिण दिशा में मेरी सदैव रक्षा करें। ऐं अग्नि जिह्व वटुक नैऋर्त्य में रक्षा करें तथा पश्चिम में ऐं कालवटुक रक्षा करें। ऐं कराल वटुक वायव्य में तथा ऐं वटुक उत्तर में मेरी रक्षा करें। ऐं भीमवटुक ईशान कोण में मेरी सदैव रक्षा करें। ऐं ह्रीं ह्रीं हूं फट् तथा स्वाहा जिनके नाम के अन्त में है, वे चौंसठ योगिनियां ऊपर-नीचे, दाएं-बाएं तथा आगे-पीछे मेरी रक्षा करें। ऐं हूं सिंह व्याघ्र मुखी पूर्व में मेरी रक्षा करें। ऐं कां कीं सपमुखो अग्नि कोण में सदैव रक्षा करें। ऐं मां मां मृगमेष-मुखी दक्षिण में सदैव मेरो रक्षा करें। ऐं चौं चौं गजराज मुखी नैऋर्त्य कोण में मेरी सदा रक्षा करें। ऐं में मैं विडालमुखी पश्चिम में मेरी सदैव रक्षा करें। ऐं खौं खौं क्रोष्टुमुखी वायुकोण में सदैव रक्षा करें। एं हां हां ह्रस्वदोर्घमुखी लम्बोदर महोदरी उत्तर दिशा में मेरी रक्षा करें। ऐं ह्रीं ह्रीं ह्रस्वजंघ तालजंघ प्रलम्बौष्ठी सदैव मेरी रक्षा करें। ये सब देवियां श्मशानवासिनो, भीषण तथा विकृत मुखों वाली हैं। साधकों की इच्छा को पूर्ण करने वाली ये देवियां मेरी सदैव रक्षा करें। पूर्व दिशा में इन्द्र, आग्नेयकोण में अग्निदेवता, दक्षिण

दिशा में यमराज़ तथा नैऋ त्यकोण में नैऋ तिदेव मेरी सदैव रक्षा करें। पीछे अर्थात् पश्चिम दिशा में वरुण, वायव्य कोण में वायु देवता, उत्तर दिशा में कुबेर तथा ईशानकोण में सदाशिव मेरी रक्षा करें। ऊपर की ओर ब्रह्मा तथा नीचे की ओर अनन्तदेव अर्थात् विष्णु मेरी रक्षा करें। पर्व आदि दिशाओं में विद्यमान वज्र आदि आयुध क्रम से मेरी रक्षा करें। कालिकादेवी शिर की रक्षा करें, कालिकादेवी हृदय की रक्षा करें, कालिकादेवी मूलाधार की रक्षा करें तथा कालिकादेवी दोनों पांवों की भी रक्षा करे। कालिकादेवी दिशाओं में मेरी रक्षा करें, कालिकादेवी उपदिशाओं में रक्षा करें। कालिकादेवी ऊपर की ओर मेरी रक्षा करें तथा कालिकादेवी नीचे की ओर मेरी रक्षा करें। मेरे चर्म, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा तथा वीर्य की रक्षा करें। मेरी इन्द्रियों, मन, देह तथा सिद्धि की भी रक्षा करे। केशों से लेकर पांवों तक कालिकादेवी मेरी सदैव रक्षा करें। कालिकादेवी आकाश में रक्षा करें, कालिकादेवी मार्ग में रक्षा करें। कालिकादेवी सोते समय रक्षा करें तथा कालिकादेवी सब कामों में रक्षा करें। कालिकादेवी मेरे पुत्रों की रक्षा करें तथा कालिकादेवी मेरे धन की रक्षा करें। जिन विषयों में मुझे सन्देह हो, वे सब देवी की आज्ञा से विनष्ट हो जायें।

इतीदं कवचं देवि ब्रह्मलोकेऽपि दुर्लभम्।
तव प्रीत्या मायाख्यातं गोपीनं स्वयोनिवत्।
तव नाम्नि स्मृते देवि सर्वज्ञ फलं लभेत्।
सर्वं पापः क्षयं यान्ति वाञ्छा सर्वत्र सिद्धयति॥
नाम्नाः शत गुणं स्तोत्रं ध्यानं तस्मात् शताधिकम्।
तस्मात् शताधिकोमन्त्रः कवचं तच्छताधिकम्॥
शुचिः समाहितो भूत्वा भक्ति श्रद्धा समन्वितः।
संस्थाप्य वामभागेतु शक्तिं स्वामि परायणाम्॥
रक्तवस्त्रपराधीनां शिवमन्त्रधरां शुभाम्।
या शक्तिः सा महादेवी हररूपश्च साधकः॥

अन्योऽन्य चिन्ताद्देवि देवत्वमुपजायते ।
शक्तियुक्तो यजेद्देवीं चक्रे वा मनसापि वा ।।
भोगैश्च मधुपर्काद्यै स्ताम्बूलैश्च सुवसितैः ।
ततस्तु कवचं दिव्यं पठदेकमनाः प्रिये ।।
तस्य सर्वार्थ सिद्धि स्यान्नात्र कार्याविचारणा ।
इदं रहस्यं परमं परं स्वस्त्ययनं महत् ।।
यः सकृत्तु पठेद्देवि कवचं देवदुर्लभम् ।
सर्वयज्ञ फलं तस्य भवेदेव न संशयः ।।
संग्रामे च जयेत् शत्रून् मातङ्गानिव केशरी ।
नास्त्राणि तस्य शस्त्राणि शरीरे प्रभवन्ति च ।।
तस्य व्याधि कदाचित् न दुःखं नास्ति कदाचन ।
गतिस्तस्यैवसर्वत्र वायुतुल्यः सदा भवेत् ।।
दीर्घायु कामभोगीशो गुरुभक्तः सदाभवेत् ।
अहो कवच माहात्म्यं पठमानस्य नित्यशः ।।
विनापि नययोगेन योगीश समतां व्रजेत् ।
सत्यं सत्यं पुनः सत्यं सत्यं सत्यं पुनः पुनः ।।
न शोक्नमि प्रभावं तु कवचस्यास्य वर्णितम् ।।

भावार्थ—हे देवि ! इस प्रकार का यह कवच ब्रह्मलोक में भी दुर्लभ है । इसे मैंने तुम्हारे प्रेम के वशीभूत होकर कहा है । इसे स्वयोनि के समान गुप्त रखना चाहिए । हे देवि ! तुम्हारा नाम स्मरण करने मात्र से ही साधक समस्त यज्ञों के फल को प्राप्त करता है, उसके सभी पाप नष्ट हो जाते हैं तथा समस्त कामनाएं पूर्ण होती हैं । नाम से स्तोत्र सौ गुना तथा स्तोत्र से ध्यान सौ गुना अधिक फलदायक होता है । ध्यान से मन्त्र सौ गुना तथा मन्त्र से कवच सौ गुना अधिक फलदायक है । पवित्र तथा एकाएकाग्रचित्त होकर भक्ति एवं श्रद्धापूर्वक अपने बाईं ओर को लाल वस्त्र पहने हुई शिवमन्त्र में दीक्षिता, कल्याणी तथा पतिव्रता शक्ति को बैठाकर, जो शक्ति कि महादेवी स्वरूपा है तथा साधक शङ्कर स्वरूप है—इस प्रकार

एक-दूसरे का ध्यान करने से हे देवि ! देवभाव की उत्पत्ति होती है। शक्तियुक्त होकर चक्र में अथवा मन में ही नैवेद्य, मधुपर्क आदि वस्तुओं तथा सुगन्धित ताम्बूलों से देवी की पूजा करनी चाहिए। हे प्रिये ! उसके पश्चात् एकाग्रचित्त होकर इस दिव्य कवच का पाठ करने से समस्त कामनाओं की पूर्ति होती है—इसमें किसी तरह का सन्देह नहीं करना चाहिए। यह परम रहस्य है, यह परम कल्याण-कारी स्तव है। हे देवि ! जो व्यक्ति इस देव-दुर्लभ कवच का पाठ करता है, उसे सम्पूर्ण यज्ञों के करने का फल प्राप्त होता है—इसमें सन्देह नहीं है। वह युद्ध क्षेत्र में अपने शत्रुओं पर उसी प्रकार विजय प्राप्त करता है, जिस प्रकार कि सिंह हाथियों पर विजय पाता है। उसके शरीर पर अस्त्र-शस्त्रों का प्रभाव नहीं होता, उसे कभी रोग नहीं होता और न दुःख ही प्राप्त होता है। सभी स्थानों में उसकी गति हो जाती है। वह सदैव वायु के समान बना रहता है अर्थात् सब जगह निर्विघ्न रूप से आ-जा सकता है। वह दीर्घायु, इच्छा-भोगी तथा सदैव गुरु का भक्त बना रहता है। इस कवच का महात्म्य अद्भुत है। जो व्यक्ति इसका प्रतिदिन पाठ करता है वह तपयोग के बिना ही योगीश्वरों की समानता प्राप्त कर लेता है। यह सत्य है, सत्य है, पुनः सत्य है, सत्य है, बारम्बार सत्य है। इस कवच के प्रभाव का वर्णन करने की सामर्थ्य मुझ में भी नहीं है।

।। इति श्री उत्तरतन्त्रे श्रीमद्दक्षिणा कालिका कवचं समाप्तम् ।।

श्री त्रैलोक्य विजय कवच

श्री सदाशिव उवाच

त्रैलोक्य विजयस्यास्य कवचस्य ऋषिः शिवः ।
छन्दोऽनुष्टु देवता च आद्याकाली प्रकीर्चिता ॥
माया बीजं बीज मिति रमा शक्तिरुदाहृता ।
क्रीं कीलकं काम्यसिद्धौ विनियोगः प्रकीर्तितः ॥

भावार्थ—इस 'त्रैलोक्य विजय कवच' के ऋषि शिव हैं, छन्द अनुष्टुप है तथा आद्याकाली देवता हैं। मायाबीज अर्थात् 'ह्रीं' इसका वीज है, रमा अर्थात् 'श्रीं' इसकी शक्ति है, 'क्रीं' इसका कीलक है तथा कामना की सिद्धि के हेतु इसका विनियोग है।

कवच इस प्रकार है—

ह्रीमाद्या मे शिरः पातु श्रीं काली वदनं मम ।
हृदयं क्रीं परा शक्तिः पायात्कण्ठं परात्परा ॥
नेत्रे पातु जगद्धात्री कर्णौ रक्षतु शङ्करी ।
घ्राणं पातु महामाया रसनां सर्वमङ्गला ॥
दन्तान्रक्षतु कौमारी कपोलौ कमलालया ।
ओष्ठाधरौ क्षमा रक्षेच्चिबुकं चारु हासिनी ॥
ग्रीवां पायात्कुलेशानी ककुत्पातु कृपामयी ।
द्वौ बाहू बाहुदा रक्षेत्करौ कैवल्यदायिनी ।
स्कन्धौ कपर्द्दिनी पातु पृष्ठं त्रैलोक्यतारिणी ।
पार्श्वे पायादपर्णा मे कटिं मे कमठासना ॥
नाभौ पातु विशालाक्षी प्रजास्थानं प्रभावतीं ।
उरू रक्षतु कल्याणी पादौ मे पार्वती सदा ॥
जय दुर्गा वतु प्राणान्सर्वाङ्गं सर्वसिद्धिदा ।

रक्षाहीनं तु यत्स्थानं वर्जितं कवचेन च ।।
तत्सर्वं मे सदा रक्षेदाद्याकाली सनातनी ।।

भावार्थ—'ह्रीं' स्वरूपा आद्या मेरे सिर की, 'श्रीं' स्वरूपा काली मेरे मुख की, 'क्रीं' स्वरूपा पराशक्ति हृदय की तथा परात्परा देवी मेरे कण्ठ की रक्षा करें। जगद्धात्री देवी नेत्रों की, शाङ्करी दोनों कानों की, महामाया नासिका की तथा सर्वमङ्गला देवी जिह्वा की रक्षा करें। कौमारी देवी दांतों की, कमलालया दोनों कपोलों की, क्षमादेवी ओष्ठ और अधर की तथा चारुहासिनी ठोढ़ी की रक्षा करें। कुलेशानी देवी ग्रीवा की, कृपामयी ककुत् अर्थात् ग्रीवा के पृष्ठ भाग वाली हड्डी की गांठ की, बाहुदा देवी दोनों बाहुओं की तथा कैवल्यदायिनी दोनों हाथों की रक्षा करें। कपर्द्दिनी देवी दोनों कंधों की, त्रैलोक्यतारिणी पीठ की, अपर्णा देवी मेरे पार्श्व की तथा कमठासना देवी मेरी कटि की रक्षा करें। विशालाक्षी देवी नाभि की, प्रभावती देवी प्रजास्थान की, कल्याणी दोनों जांघों की तथा पार्वती दोनों पांवों की रक्षा करें। जय दुर्गा प्राणों की तथा सर्वसिद्धिदा समस्त अङ्गों की रक्षा करें। जो स्थान (अङ्ग) रक्षा से रहित हैं तथा जिनका कवच में उल्लेख नहीं हुआ है, मेरे उन सभी अङ्गों की आद्याकाली सनातनी देवी सदैव रक्षा करें।

इति ते कथितं दिव्यं त्रैलोक्य विजयाभिधम्।
कवचं कालिकादेव्या आद्यायाः परमाद्भुतम् ।।
पूजाकाले पठेद्यस्तु आद्याधिकृत मानसः।
सर्वान्कामानवाप्नोति तस्याद्याशु प्रसीदति ।।
मन्त्रसिद्धिर्भवेदाशु किङ्कराः क्षुद्र सिद्धयः।
अपुत्रो लभते पुत्रं धनार्थी प्राप्नुयाद्धनम् ।।
विद्यार्थी लभते विद्यां कामी कामानवाप्नुयात्।
सहस्रावृत्त पाठेन वर्म्मणो ऽस्य पुरस्क्रिया ।।

पुरश्चरणसम्पन्नं यथोक्तफलदं भवेत् ।
चन्दनागुरुकस्तूरी कुङ्कुमै रक्त चन्दनैः ।।
भूर्जे विलिख्य गुटिकां स्वर्णस्थां धारयेद्यदि ।
शिखायां दक्षिणे बाहौ कण्ठे वा साधकः कटौ ।।
तस्याद्या कालिका वश्या वाञ्छितार्थं प्रयच्छति ।
न कुत्रापि भयं तस्य सर्वत्र विजयी कविः ।।
अरोगी चिरजीवी स्याद् बलवान्धारणक्षमः ।
सर्वविद्यासु निपुणः सर्वशास्त्रार्थ तत्त्ववित् ।।
वशे तस्य महीपाला भोग मोक्षौ करस्थितौ ।
कलिकल्मष युक्तान्तं निःश्रेयसकरं परम् ।।

भावार्थ—यह 'त्रैलोक्य विजय' नामक दिव्य कवच कहा गया है। आद्या कालिका देवी का यह कवच अत्यन्त अद्‌भुत है। जो व्यक्ति पूजा के समय आद्यादेवी का मन में ध्यान करता हुआ इस कवच का पाठ करता है, वह समस्त कामनाओं को प्राप्त कर लेता है। आद्या-देवी उस पर शीघ्र प्रसन्न होती हैं। उसके मन्त्र की सिद्धि शीघ्र होती है। सामान्य सिद्धियां तो उसकी दासी ही हो जाती हैं। पुत्रहीन को पुत्र प्राप्त होता है, धनाभिलाषी को धन मिलता है, विद्याभिलाषी को विद्या प्राप्त होती है तथा अन्य कामनाओं का इच्छुक अपनी काम-नाओं को प्राप्त करता है। एक सहस्र की संख्या में पाठ करने से इस कवच का पुरश्चरण होता है। जो व्यक्ति पुरश्चरण कर लेता है, उसे यह कवच वैसा ही फलदायक होता है, जैसा कि इसका वर्णन किया गया है। श्वेत चन्दन, अगरु, कस्तूरी, केशर और रक्त चन्दन—इन सबके मिश्रण के घोल से इस कवच को भोजपत्र पर लिखकर तथा स्वर्ण के यन्त्र (ताबीज) में भरकर जो साधक शिखा (चोटी) में, दाईं भुजा में, कण्ठ में अथवा कमर में धारण करता है, भगवती आद्या कालिका उसके वशीभूत होकर उसे इच्छित मनोकामनाएं प्रदान करती हैं। उसे कहीं भी भय नहीं रहता। वह सब जगह विजय

प्राप्त करता है। ऐसा व्यक्ति कवि, नीरोग, चिरजीवी, बलबान, सहिष्णु, समस्त विद्याओं में निपुण तथा सम्पूर्ण शास्त्रों के तत्त्व को जानने वाला होता है। राजा लोग उसके वश में रहते हैं तथा भोग और मोक्ष उसके करतल बने रहते हैं। यह कवच कलियुग के पापों से युक्त मनुष्यों का परम कल्याण करने वाला है।

।। इति श्री महानिर्वाण तन्त्रे त्रैलोक्य विजय नाम कवचम् समाप्तम् ।।

श्री जगन्मङ्गल कवच

भैरव्युवाच

काली पूजा श्रुता नाथ भावाश्च विविधाः प्रभो ।
इदानीं श्रोतु मिच्छामि कवचं पूर्व सूचितम् ॥
त्वमेव शरणं नाथ त्राहि मां दुःख संकटात् ।
सर्व दुःख प्रशमनं सर्व पाप प्रणाशनम् ॥
सर्व सिद्धि प्रदं पुण्यं कवचं परमाद्भुतम् ।
अतो वै श्रोतुमिच्छामि वद मे करुणानिधे ॥

भावार्थ—हे प्रभो ! हे नाथ ! मैंने काली के पूजन तथा विविध भावों के विषय में सुना । अब मुझे पूर्व सूचित् कवच को सुनने की इच्छा है । हे नाथ ! मैं आपकी शरण में हूं । आप मेरी दुःख और संकट से रक्षा कीजिए । हे करुणानिधे ! सब दुःखों को नष्ट करने वाले, सब पापों को दूर करने वाले तथा समस्त सिद्धियों को देने वाले परम पवित्र अद्भुत कवच को सुनने की मेरी इच्छा है । आप कृपा पूर्वक कहिए ।

श्री भैरव उवाच

रहस्यं शृणु वक्ष्यामि भैरवि प्राण वल्लभे !
श्री जगन्मङ्गलं नाम कवचं मन्त्र विग्रहम् ॥
पठयित्वा धारयित्वा त्रैलोक्यं मोहयेत्क्षणात् ।
नारायणोऽपि यद्धृत्वा नारी भूत्वा महेश्वरम् ॥
योगिनं क्षोभमनयत् यद्धृत्वा च रघूद्वहः ।
वरदीप्तां जघानैव रावणादिनिशाचरान् ॥
यस्य प्रसादादीशोऽपि त्रैलोक्य विजयी प्रभुः ।

धनाधिपः कुबेरोऽपि सुरेशोऽभूच्छचीपतिः ।
एवं च सकला देवाः सर्वसिद्धीश्वराः प्रिये ॥

संक्षिप्त भावार्थ—श्री भैरव ने कहा—'हे प्राण वल्लभे भैरवि ! मैं तुमसे जगन्मङ्गल नामक कवच को कहता हूं । इस कवच को पढ़ने तथा धारण करने वाला व्यक्ति तीनों लोकों को मोहित कर लेता है । यह कवच योगियों के मन में आनन्द भरने वाला तथा रावणादि निशाचरों को भी वर देने वाला है। इसके प्रभाव से ही विष्णु त्रैलोक विजयी हुए, कुबेर धनपति बने तथा इन्द्र देवताओं के स्वामी बने हैं । इसी कवच के प्रभाव से देवतागण समस्त सिद्धियों के स्वामी बन सके हैं ।

ॐ श्री जगन्मङ्गलस्याय कवचस्य ऋषिः शिवः ।
छन्दोऽनुष्टुप् देवता च कालिका दक्षिणेरिता ॥
जगतां मोहने दुष्ट विजये भुक्तिमुक्तिषु ।
योविदाकर्षणे चैव विनियोगः प्रकीर्तितः ॥

भावार्थ—इस श्री जगन्मङ्गल कवच के ऋषि शिव हैं । छन्द अनुष्टुप् है, देवता दक्षिणकालिका हैं । ससार को मोहित करने, दुष्टों पर विजय पाने, युक्ति-मुक्ति तथा स्त्रियों के आकर्षण में इसका विनियोग है ।

कवच

शिरो मे कालिका पातु क्रींकारैकाक्षरी परा ।
क्रीं क्रीं क्रीं मे ललाटं च कालिका खडगधारिणी ॥
हूं हूं पातु नेत्रयुग्मं ह्रीं ह्रीं पातु श्रुति द्वयम् ।
दक्षिणे कालिके पातु घ्राणयुग्मं महेश्वरि ॥
क्रीं क्रीं क्रीं रसनां पातु हूं हूं पातु कपोलकम् ।
वदनं सकलं पातु ह्रीं ह्रीं स्वाहा स्वरूपिणी ॥
द्वाविंशत्यक्षरी स्कन्धौ महाविद्याखिलप्रदा ।
खड्गमुण्डधरा काली सर्वाङ्गमभितोऽवतु ॥

क्रीं हूं ह्रीं त्र्यक्षरी पातु चामुण्डा हृदयं मम ।
ऐं हूं ऊं ऐं स्तन द्वन्द्व ह्रीं फट् स्वाहा ककुत्स्थलम् ।।
अष्टाक्षरी महाविद्या भुजौ पातु सकर्तृका ।
क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं पातु करौ षडक्षरी मम ।।
क्रीं नाभिं मध्यदेशं च दक्षिणे कालिकेऽवतु ।
क्रीं स्वाहा पातु पृष्ठं च कालिका सा दशाक्षरी ।।
क्रीं मे गुह्यं सदापातु कालिकायै नमस्ततः ।
सप्ताक्षरी महाविद्या सर्वतन्त्रेषु गोपिता ।।
ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके हूं हूं पातु कटिद्वयम् ।
काली दशाक्षरीविद्या स्वाहान्ता चोरुयुग्मकम् ।।
ॐ ह्रीं क्रीं में स्वाहा पातु जानुनी कालिका सदा ।
काली हृन्नामविधेयं चतुवर्गफलप्रदा ।।
क्रीं हूं ह्रीं पातु सा गुल्फं दक्षिणे कालिकेऽवतु ।
क्रीं हूं ह्रीं स्वाहा पदं पातु चतुर्दशाक्षरीमम ।।
खड्गमुण्डधरा काली वरदाभयधारिणी ।
विद्याभिः सकलाभिः सा सर्वाङ्गमभितोऽवतु ।।
काली कपालिनी कुल्ला कुरुकुल्ला विरोधिनी ।
विपचित्ता तथोग्रोग्रप्रभा दीप्ता घनत्विषः ।।
नीला घना वलाका च मात्रा मुद्रा मिता च माम् ।
एताः सर्वाः खड्गधरा मुण्डमाला विभूषणाः ।।
रक्षन्तु मां दिग्विदिक्षु ब्राह्मी नारायणी तथा ।
माहेश्वरी च चामुण्डा कौमारी चा पराजिता ।।
वाराही नारसिंही च सर्वाश्रयामित भूषणाः ।
रक्षन्तु स्वायुधैर्दिक्षु मां यथा तथा ।।

भावार्थ—स्पष्ट है। इसमें श्री मद्दक्षिण कालिका से रक्षा की प्राथना की गई है।

इति ते कथित दिव्यं कवचं परमाद्भुतम् ।
श्री जगन्मङ्गलं नाम महामन्त्रौघविग्रहम् ।।

त्रैलोक्याकर्षणं ब्रह्मकवचं मन्मुखोदितम् ।
गुरु पूजां विधायाथ विधिवत्प्रपठेत्ततः ॥
कवचं त्रिःसकृद्वापि यावज्ज्ञानं च वा पुनः ।
एतच्छतार्धमावृत्य त्रैलोक्य विजयी भवेत् ॥
त्रैलोक्यं क्षोभयत्येव कवचस्य प्रसादतः ।
महाकविर्भवेन्मासात् सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ॥
पुष्पाञ्जलीन् कालिका यै मूलेनैव पठेत्सकृत् ।
शतवर्षसहस्राणां पूजायाः फलमाप्नुयात् ॥
भूर्जे विलिखितं चैतत् स्वर्णस्थं धारयेद्यदि ।
शिखायां दक्षिणे बाहौ कण्ठे वा धारणाद्बुधः ॥
त्रैलोक्यं मोहयेत्क्रोधात् त्रैलोक्यं चूर्णयेत्क्षणात् ।
पुत्रवान् धनवान् श्रीमान् नानाविद्यानिधिर्भवेत् ॥
ब्रह्मास्त्रादीनि शस्त्राणि तद्गात्र स्पर्शवात्ततः ।
नाशमायान्ति सर्वत्र कवचस्यास्य कीर्तनात् ॥
मृतवत्सा च या नारी वन्ध्या वा मृतपुत्रिणी ।
कण्ठे वा वामबाहौ वा कवचस्यास्यधारणात् ॥
वह्वपत्या जीववत्साभवत्येव न संशयः ।
न देयं परशिष्येभ्यो ह्यभक्तेभ्यो विशेषतः ॥
शिष्येभ्यो भक्तियुक्तेभ्यो ह्यन्यथा मृत्युमाप्नुयात्
स्पर्धामुद्धूय कमला वाग्देवी मन्दिरे मुखे ॥
पौत्रान्तं स्थैर्यमास्थाय निवसत्येव निश्चितम् ।
इदं कवचमज्ञात्वा यो जपद्दक्षकालिकाम् ॥
शतलक्षं प्रजप्त्वापि तस्य विद्या न सिद्ध्यति ।
सहस्रघातमाप्नोति सोऽचिरान्मृत्युमाप्नुयात् ॥
जपेदादौ जपेदन्ते सप्तवाराण्यनुक्रमात् ।
नोधृत्य यत्र कुत्रापि गोपनीयं प्रयत्नतः ॥
लिखित्वा स्वर्णपात्रे वै पूजाकाले तु साधकः ।
मूर्ध्नि धार्यं प्रयत्नेन विद्यारत्नं प्रपूजयेत ॥

संक्षिप्त भावार्थ—यह श्री जगन्मङ्गल नामक देवो का कवच परम अद्भुत है। यह तीनों लोकों का आकर्षण करने वाला है। गुरु की पूजा करने के उपरान्त इसका पाठ करना चाहिए। इस कवच का पाठ करने वाला व्यक्ति त्रैलोक्य विजयी होता है। वह त्रैलोक्य को मोहित करने वाला, महाकवि तथा समस्त सिद्धियों का स्वामी होता है। कालिका देवी को पुष्पांजलि समर्पित करके जो व्यक्ति इस कवच का पाठ करता है, वह एक लाख वर्षों तक पूजा करने का फल प्राप्त करता है। इस कवच को भोजपत्र पर लिखकर तथा स्वर्ण के ताबीज में भरकर शिखा, दाईं भुजा अथवा कण्ठ में धारण करने वाला व्यक्ति तीनों लोकों को मोहित कर लेता है और वह पुत्रवाव, धनवान, श्रीमान् तथा अनेक विद्याओं एवं सम्पत्तियों का भण्डार हो जाता है। ब्रह्मास्त्र आदि शस्त्र उसके शरीर का स्पर्श नहीं करते, वे इस कवच का पाठ करने मात्र से ही नष्ट हो जाते हैं। जो मृतवत्सा, वन्धया अथवा अपुत्रिणी स्त्री इस कवच को बाईं भुजा अथवा कण्ठ में धारण करती है, वह अनेक पुत्रों की माता होती है—इसमें सन्देह नहीं है। यह कवच पराये शिष्य को नहीं देना चाहिए। विशेष कर अभक्तों को तो देना ही नहीं चाहिए। इस कवच को जाने बिना यदि दक्षिण कालिका के मन्त्र का एक लाख बार भी जप किया जाय तो भी सिद्धि प्राप्त नहीं होती। ऐसा व्यक्ति सहस्रों आघातों को सहन करता है तथा असमय में ही मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। इसका आदि तथा अन्त में सात बार जप करना चाहिए। यह कवच जिस किसी को नहीं बताना चाहिए तथा इसे प्रयत्नपूर्वक गुप्त रखना चाहिए। साधक को चाहिए कि वह इस कवच को स्वर्ण-पत्र पर लिखकर पूजा के समय रख ले। इसे मस्तक पर धारने से साधक को श्रेष्ठ विद्याओं की प्राप्ति होती है।

श्री काली हृदय

श्री गणेशायनम:

ॐ अस्य श्री दक्षिणकालिका हृदयमन्त्रस्य महाकाल ऋषि: उष्णिक् छन्द: श्री दक्षिण कालिका देवता ह्रीं वीजं हूं शक्ति: क्रीं कीलकं श्री महाषोढारूपिणी महाकाल महिषा दक्षिणकालिकाप्रसन्नार्थे पाठे विनियोग: ।

भावार्थ—इस श्री दक्षिण महाकालिका हृदय मन्त्र के महाकाल ऋषि हैं, उष्णिक् छन्द है, श्री दक्षिण कालिका देवता हैं, 'ह्रीं' वीज है, 'हूं' शक्ति है, 'क्रीं' कीलक है तथा महाषोढारूपिणी महाकाल महिषी दक्षिण कालिका की प्रसन्नता के लिए इसके पाठ का विनियोग है ।

ध्यान

चुच्छयामां कोटराक्षीं प्रलयघन घटां
घोररूपां प्रचण्डां ।
दिग्वस्त्रां पिंगकेशीं डमरुसृणिधृतां
खड्गपाशाभयानि ।।
नागं घंटां कपालं करसरसीरुहै
कालिकां कृष्णवर्णां ।
ध्यायामि ध्येयमानां सकलसुखकरीं
कालिकां तां नमामि ।।

भावार्थ—श्यामवर्ण वाली, कोटराक्षी, प्रलयकालीन मेघों के समान घोर रूप वाली, प्रचण्डा, दिग्वस्त्रा, पिंगकेशी, डमरुसृणि को धारण करने वाली, खड्ग, पाश, अभय, नाग, घण्टा तथा कपाल को अपने करकमलों में धारण करने वाली कृष्णवर्णा, समस्त सुखों की

दात्री भगवती कालिका देवी का ध्यान करता हुआ मैं उन्हें नमस्कार करता हूं।

हृदय-स्तोत्र

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हंसः सोहं अं आं ब्रह्मग्रन्थिं भेदय भेदय इं ईं विष्णुग्रन्थिं भेदय भेदय उं ऊं रुद्रग्रंन्थिं भेदय भेदय अं क्रीं आं क्रीं इं क्रीं ईं हूं उं हूं ऊं हूं ऋं ह्रीं ॠं दं लृं क्षि लॄं णें एं कां ऐं लि ओं कें औं क्रीं अं क्रीं अः क्रीं अं हूं आं हूं इं ह्रीं ईं ह्रीं उं स्वां ऊं हां यं हूं रं हूं लं मं वं हां सं कां षं लं सं प्रं हं सीं लं दं क्षं प्रं यं सीं रं दं लं ह्रीं वं ह्रीं शं स्वां षं हां शं हं लं क्षं महाकालभैरवि महाकालरूपिणि क्रीं अनिरुद्धसरस्वति हूं हूं ब्रह्मग्रहबन्धिनि विष्णु-ग्रहबन्धिनि रुद्रग्रहबन्धिनि गोचरग्रहबन्धिनि अधिव्याधिग्रहबन्धिनि सर्वदुष्टग्रहबन्धिनि सर्वदानवग्रहबन्धनि सर्वदेवताग्रहबन्धिनि सर्वगोत्र-देवताग्रहबन्धिनि सर्वग्रहोपग्रहबन्धिनि क्रीं कालि क्रीं कपालिनि क्रीं कुल्ले हूं कुरुकुल्ले हूं विरोधिनी ह्रीं विप्रचित्ते ह्रीं उग्रे [illegible] उग्रप्रभे क्रीं दीप्ते क्रीं नीले हूं घने हूं बलाके ह्रीं मात्रे ह्रीं मुद्रे

ॐ मिते असिते असितकुसुमोपमे हूं हुंकारि कां कां काकिनि लां लां लाकिनि हां हां हाकिनि क्षिस क्षिस भ्रम भ्रम उत्तरतत्त्वविग्रह स्वरूपे अमले विमले अजिते अपाराजिते क्रीं क्रीं स्त्रीं हूं हूं फ्रें फ्रें दुष्ट विद्राविणि आं ब्राह्मि ईं वैष्णवि ऊं माहेशि ॠं चामुण्डे लॄं कौमारि ऐं अपराजिते औं वाराहि अं नारसिंहि ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे श्रीं महालक्ष्मि हूं हूं पञ्चप्रेतोपरिस्थितायै शवालङ्कारायै चिन्तान्तस्थायै भैं भद्रकालिके दुष्टान विदारय विदारय दारिद्रयं हन हन पापं मथमथ आरोग्यं कुरु कुरु विरूपाक्षि विरूपाक्षवरदायिनि अष्टभैरवरूपे ह्रीं नवनाथात्मिके

ॐ ह्रीं ह्रीं शक्ति रां रां राकिनि लां लां लाकिनि ह्रां ह्रां हाकिनि कां कां काकिनि क्षिस क्षिस वद वद उत्तरतत्त्वविग्रहे कराल-

स्वरूपे आदिविद्ये महाकालमहिषि क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॐ क्रीं हूं ह्रीं मम पुत्रान् रक्ष रक्ष ममोपरि दुष्टबुद्धिम् दुष्ट प्रयोगान् कुर्व्वन्ति कारयन्ति करिष्यन्ति तान् हन हन मम मन्त्रसिद्धि कुरु कुरु मम दुष्टं विदारय विदारय दारिद्रयं हन हन पापं मथ मथ आरोग्यं कुरु कुरु आत्मतत्वं देहि देहि हंसः सोहम् क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रींह्रीं स्वाहा नवकोटि-स्वरूपे आद्ये आदिविद्ये अनिरुद्धसरस्वति स्वात्मचैतन्यं देहि देहि मम हृदये तिष्ठ तिष्ठ मम मनोरथं कुरु कुरु स्वाहा ।

माहात्म्य

इदं तु हृदयं द्विव्यं महापापौघनाशनं ।
सर्वदुःखौघशमनं सर्वव्याधि विनाशनम् ।।
सर्वशत्रुक्षयकरं सर्वसंकटमोचनं ।
ब्रह्महत्या सुरापानंस्तेयं गुर्वङ्गनागमः ।।
सर्वमाशु हरत्येव हृदयस्यप्रसादतः ।
भौमवारे च संक्रान्तौ अष्टम्यां रविवासरे ।।
चतुर्द्दश्यां च षष्ट्याम्वा शनिवारे च साधकः ।
हृदयानेन संस्तुत्य किं न साधयते नरः ।।
अप्रकाश्यमिदं देवि हृदयं देवदुर्लभं ।
सत्यं सत्यं पुनः सत्यं यदीच्छेच्छुभमात्मनः ।।
प्रकाशयति देवेशि हृदयं मन्त्रविग्रहं ।
प्रकाशात्सिद्धिहानिः स्यादवश्यं नरकं व्रजेत् ।।
दरिद्रस्तु चतुर्दश्यां योषितासङ्गमैः सह ।
वारत्रयं पठेद्देवि प्रभाते साधकोत्तमः ।।
षण्मासेन महादेवि कुबेर सदृशो भवेत् ।
विद्यार्थी प्रजयेन्मन्त्रं पूर्णिमायां सुधाकरे ।।
सुधा सर्वतनुं ध्याये द्देवीमावरणैः सह ।
शतमष्टोत्तरं मन्त्रं कविर्भवति वत्सरात् ।।
अर्कवारेऽर्क बिम्बस्थां ध्यायेद्देवी समाहितः ।

सहस्रं प्रजपेन्मन्त्रं देवतादर्शनं कलौ ।।
भवत्येव महेशानि कालिमन्त्र प्रभावत: ।
मकारपञ्चकैर्देवीं तोषयित्वा यथाविधि: ।।
सहस्रं प्रजपेन्मन्त्रमिदं तु हृदयं पठेत् ।
सकृदुच्चारमात्रेण पलायन्ते महापद: ।।
उपपातक दौर्भाग्यशमनं भुक्तिमुक्तिदं ।
क्षयरोगादिकुष्टघ्नं मृत्युसंहार कारकं ।।
सप्तकोटि महामन्त्र पारायण फलप्रदं ।
कोट्यश्वमेधफलदं जरामृत्यु निवारणम् ।।
किं पुनर्बहुनोक्तेन सत्यं सत्यं महेश्वरी ।
मद्यमांसासवैर्दे वि मत्स्यभाक्षिक पायसै: ।।
शिवाबलि: प्रकर्त्तव्या इदंतु हृदयं पठेत् ।
इहलोके भवेद्राजा मृतो मोक्षमवाप्नुयात् ।।
शतावधानो भवति मासमात्रेण साधक: ।
सम्वत्सरप्रयोगेण साक्षाच्छिवमयो भवेत् ।।
महादारिद्रयनिर्मुक्त: शापानुग्रहणक्षम: ।
काशीयात्रा सहस्राणि गंगास्नान शतानि च ।।
ब्रह्महत्यादिभि: पापैर्महापातक कोटय: ।
सद्य: फलयतां यान्ति मेरुमन्दिर सन्निभ: ।।
भक्तियुक्तेन मनसा साधयेत्साधकोत्तम: ।
साधकाय प्रदातव्यं भक्तियुक्ताय चेतसे ।।
अन्यथा दापयेद्यस्तु स नर: शिवहा भवेत् ।
अभक्ते वञ्चके धूर्त्ते मूढे पण्डितमानिने ।।
न देयं यस्य कस्यापि शिवस्य वचनं यथा ।
इदं सदाशिव प्रोक्तं साक्षात्कारं महेश्वरी ।
परमं पदमासाद्य खेचरोजायते नर: ।।

संक्षिप्त भावार्थ—देवी का यह हृदय महापापों को नष्ट करने वाला, सब दु:खों को दूर करने वाला, समस्त व्याधियों का विनाशक

सब शत्रुओं का क्षय करने वाला, सब संकटों से छुड़ाने वाला तथा ब्रह्महत्या, सुरापान, चोरी, गुरु-पत्नी-गमन आदि पापों को दूर करने वाला है।

मंगलवार, संक्रान्ति, अष्टमी, रविवार, चतुर्दशी, षष्ठी अथवा शनिवार के दिन जो साधक इस हृदय द्वारा देवी की स्तुति करता है, वह किस वस्तु को प्राप्त नहीं कर लेता। यह हृदय देवताओं को भी दुर्लभ है। यह सत्य है, सत्य है, सत्य है। जो व्यक्ति अपना कल्याण चाहता हो, उसे चाहिए कि वह इसे सबके सामने प्रकट न करे। सबके समक्ष प्रकट करने से सिद्धि की हानि होती है तथा नरक प्राप्त होता है।

दरिद्र व्यक्ति चतुर्दशी तिथि को अपनी पत्नी के साथ बैठकर प्रातःकाल के समय इस हृदय का तीन बार पाठ करे तो वह छै महीने के भीतर ही कुबेर के समान धनी हो जाता है।

विद्यार्थी को पूर्णिमा की रात्रि में देवी-पूजन करके मन्त्र के साथ ही एक सौ आठ बार इस हृदय का पाठ करना चाहिए। उसे एक वर्ष के भीतर कवित्व की प्राप्ति होती है।

रविवार के दिन सूर्यमण्डल में स्थित देवी का ध्यान करके एक सहस्र बार मन्त्र का जप करने से इस कलियुग में भी देवता के दर्शन प्राप्त होते हैं।

पंचमकारों द्वारा देवी को यथाविधि सन्तुष्ट कर एक सहस्र बार मन्त्र जप कर इस हृदय का पाठ करने पर सभी पाप भाग जाते हैं, उपपातक तथा दुर्भाग्यों का नाश हो जाता है, क्षय रोग, कुष्ठ, अप-मृत्यु आदि का भय दूर हो जाता है।

सात करोड़ मन्त्र का जप करने से करोड़ अश्वमेध यज्ञों का फल प्राप्त होता है तथा जरा-मृत्यु का भय दूर हो जाता है। और अधिक क्या कहा जाय? हे महेश्वरी! यह सत्य है, सत्य है।

मद्य, मांस, मत्स्य, मधु तथा खीर से शिवबलि देकर जो व्यक्ति इस हृदय का पाठ करता है, वह इस लोक में राजा होता है तथा मृत्यु के पश्चात् मोक्ष प्राप्त करता है।

एक मास तक ऐसा साधन करने वाला साधक शतावधानी होता है और वर्ष भर तक ऐसा प्रयोग करने वाला व्यक्ति साक्षात् शिवरूप हो जाता है। उसका महादारिद्रय हो जाता है, उसमें शाप देने तथा अनुग्रह करने की क्षमता प्राप्त हो जाती है, सहस्रों काशी-यात्रा तथा सैकड़ों गंगा-स्नान का फल उसे मिलता है। ब्रह्महत्या आदि करोड़ों महापाप नष्ट हो जाते हैं तथा हर प्रकार की मनोकामनाएं पूर्ण होती हैं।

जो व्यक्ति अभक्त, वञ्चभ, धूर्त, मूढ़ अथवा अपने पाण्डित्य का अभिमान करने वाला हो, उसे यह हृदय कभी नहीं देना चाहिए— ऐसा शिवजी का कथन है। यह हृदय साक्षात् शिवजी द्वारा वर्णित है तथा हे महेश्वरी ! यह देवी का साक्षात्कार कराने वाला है। जो व्यक्ति इस हृदय का पाठ करता है, वह परमपद को पा लेता है।

॥ इति श्रीकाली हृदयम् समाप्तम् ॥

श्री कालिका हृदय स्तोत्र

विनियोग

ॐ अस्य श्री दक्षिणकालिकाम्बा हृदयस्तोत्रमहामन्त्रस्य महाकाल-भैरव-ऋषिः उष्णिक् छन्दः ह्रीं बीजं हूं शक्तिः क्रीं कीलकं महाषोढा स्वरूपिणी महाकाल महिषी श्री दक्षिणाकालिकाम्बादेवता प्रसादात् धर्मार्थकाममोक्षार्थे पाठे विनियोगः ।

भावार्थ—इस श्री दक्षिणाकालिका अम्बा के हृदय स्तोत्र रूपी महामन्त्र के महाकालभैरव ऋषि हैं, उष्णिक छन्द है, ह्रीं बीज है, हूं शक्ति है, क्रीं कीलक है, महाषोढा स्वरूपिणी महाकालमहिषी श्रीदक्षिणा कालिका अम्बा देवता हैं तथा उन्हीं की प्रसन्नता के लिए धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष के हेतु पाठ में इसका विनियोग है ।

षडङ्गन्यास

ॐ क्रां ॐ क्रीं ॐ क्रूं ॐ क्रैं ॐ क्रौं ॐ क्रः—इत्यनेन कर षडङ्गः ।

भावार्थ—ॐ क्रां, ॐ क्रीं, ॐ क्रू, ॐ क्रैं, ॐ क्रा तथा ॐ क्रः—इनके द्वारा क्रमशः करादि षडङ्गन्यास करना चाहिए ।

ध्यानम्

शूच्छामां कोटराक्षीं प्रलयघनघटां घोर रूपां प्रचण्डा ।
दिग्वस्त्रां पिङ्गकेशीं डमरुमथ श्रणीं खड्गपाशान पानि ॥
नागंघंटां कपालं करसरसिरुहां कालिकां कृष्णवर्णां ।
ध्यायामि ध्येयमातां सकल सुख करीं कालिकां तां नमामि ॥

भावार्थ—जो देवी अत्यन्त श्याम वर्ण वाली, धंसी हुई आंखों वाली, प्रलयकालीन मेघों के समान घोर रूप वाली तथा प्रचण्ड हैं,

दिशाएं ही जिनके वस्त्र हैं, जो पिङ्गलवर्ण केशों वाली, डमरू, त्रिशूल, खड्ग, पाश, अभय, नाग, घण्टा तथा कपाल को अपने कर-कमलों में धारण करने वाली, कृष्णवर्णा कालिका हैं, उन समस्त सुखों को देने वाली माता कालिका का ध्यान करके, मैं उन्हें नमन करता हूं।

हृदयम्

ॐ क्रीं क्रीं क्रूं हूं हूं हूं ह्रीं ह्रीं ॐ ॐ ॐ ॐ हंसः सोहं ॐ हंसः ॐ ह्रीं श्रीं ऐं क्रीं हूं ह्रीं स्वाहास्वरूपिणी। अं आं रूपयोग्रेण योग-सूत्रग्रंन्थि भेदय भेदय ईं ई रुद्र ग्रंन्थ भेदय भेदय उं ऊं विष्णु ग्रंन्थि भेदय भेदयॐअं क्रीं आं क्रीं ईं क्रों ईं क्रों उं हूं ऊं हूं ऋं ह्रीं ॠं ह्रीं लृं द लॄं क्षि एं णे ऐं कालि ओं के औं क्रीं ॐ अं क्रीं क्रीं अः हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा महाभैरवी हूं हूं महाकालरूपिणी ह्रीं ह्रीं प्रसीद प्रसीद-रूपिणी ह्रीं ह्रीं ठः ठः क्रीं अनिरुद्धा सरस्वती हूं हूं ब्रह्मविष्णु ग्रह-बन्धनी रुद्रग्रहबन्धनी गोत्रदेवता ग्रह बन्धनी आधि व्याधि ग्रहबन्धनी सन्निपात ग्रहबन्धनी सर्वदुष्ट ग्रहबन्धनी सर्वदानव ग्रहबन्धनी सर्वदेव ग्रहबन्धनी सर्वगोत्रदेवता ग्रहबन्धनी सर्वग्रहान् नेडि नेडि विक्पट विक्पट क्रीं कालिके ह्रीं कपालिनि हूं कुल्ले ह्रीं कुरुकुल्ले हूं विरो-धिनि ह्रीं विप्रचित्ते स्फ्रें ह्रौं उग्रे उग्रप्रभे ह्रीं उं दीप्ते ह्रीं घने हूं त्विषे ह्रीं नीले च्लूं च्लूं नीलपताके ॐ ह्रीं घने घनाशने ह्रीं वलाके ह्रीं ह्रीं ह्रीं मिते आसिते असित कुसुमोपमे हूं हूं हूंकारि हां हां हांकारि कां कां काकिनि रां रां राकिनि लां लां लाकिनि हां हां हाकिनि क्षिस् क्षिस् भ्रम भ्रम उत्त उत्त तत्त्वविग्रहे अरूपे अमले विमले अजिते अपराजिते क्रीं स्त्रीम् स्त्रीम् हूं हूं फ्रें फ्रें दुष्टविद्राविणी आं ब्राह्मीं ईं माहेश्वरी ऊं कौमारी ॠं वैष्णवी लॄं वाराही ऐं इन्द्राणी ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै औं महालक्ष्यै अः हूं हूं पंचप्रेतोपरिसंस्थितायै शवालंका-रायै चितान्तस्थायै भैं भैं भद्रकालिके दुष्टान् दारय दारय दारिद्रं हन हन पाप मथ मथ आरोग्यं कुरु कुरु विरूपाक्षी विरूपाक्ष वरदायिनि अष्टभैरवीरूपे ह्रीं नवनाथात्मिके ॐ ह्रीं ह्रीं सत्ये रां रां राकिनि लां लां लाकिनि हां हां हाकिनि कां कां काकिनि क्षिस् क्षिस् वद् वद्

उत्त उत्त तत्त्वविग्रहे अरूपे स्वरूपे आद्यमाये महाकालमहिषि ह्रीं ह्रीं ह्रीं ॐ ॐ ॐ ॐ क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं महामाये दक्षिण कालिके ह्रीं ह्रीं हूं हूं क्रीं क्रीं क्रीं मां रक्ष रक्ष मम पुत्रान् रक्ष रक्ष मम स्त्रीं रक्ष रक्ष ममोपरि दुष्टबुद्धि दुष्ट प्रयोगान् कुर्वन्ति कारयन्ति करिष्यन्ति तान् हन हन मम मन्त्रसिद्धि कुरु कुरु दुष्टान् दारय दारय दारिद्रं हन हन पापं मथ मथ आरोग्यं कुरु कुरु आत्मतत्त्वं देहि देहि हंस: सोहं ॐ क्रीं क्रीं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ सप्तकोटि स्वरूपे आद्ये आद्यविद्ये अनिरुद्धा सरस्वति स्वात्मचैतन्यं देहि देहि मम हृदये तिष्ठ तिष्ठ मम मनोरथं कुरु कुरु स्वाहा।

इति हृदयम्

इदन्तु हृदयं दिव्यं महापापौघनाशनम्।
सर्वदु:खोदशमं सर्वव्याधि विनाशनं॥
सर्वशत्रु क्षयङ्करं सर्वसङ्कट नाशनं।
ब्रह्महत्यासुरापानं स्तेयं गुर्वङ्गनागमम्॥
सर्वशत्रुहरं त्वेव हृदयस्य प्रसादत:।
भौमवारे च संक्रांतौ अष्टम्यां जन्मवासरे॥
चतुर्दश्यां च षष्ठ्यां च शनिवारे च साधक:।
हृदयानेन संकीर्त्य किं न साधयते नर:॥
अप्रकाश्यमिदं देवि हृदयं देव दुर्लभम्।
सत्यं सत्यं पुन: सत्यं यदिच्छेच्छुभमात्मन:॥
प्रकाशयति देवेशि हृदयं मन्त्रविग्रहम्।
प्रकाशात् सिद्धहानि: स्यात् शिवस्य निरयं व्रजेत॥
दारिद्रं तु चतुर्दश्यां योषित: संगमै: सह।
वारत्रयं पठेद्देवि प्रभाते साधकोत्तम:॥
षण्मासेन महादेवि कुवेर सदृशो भवेत्।
विद्यार्थी प्रजपेन्मन्त्रं पौर्णिमायां सुधाकरे॥
सुधीसंवर्त्तनां ध्यायेद्देविमावर्णै: सह।

शतमष्टोत्तरं मन्त्रं कविर्भवति वत्सरात् ॥
अर्कवारेऽर्क विम्बस्थां ध्यायेद्देवी समाहित: ।
सहस्रं प्रजपेन्मन्त्रं देवतादर्शनं कलौ ॥
भवत्येव महेशानि कालीमन्त्र प्रभावत: ।
मकारपञ्चकं देवि तोषयित्वा यथाविधि ॥
सहस्रं प्रजपेन्मन्त्रं इदन्तु हृदयं पठेत् ।
सकृदुच्चारमात्रेण पलायन्ते महापद: ॥
उपपातकदौर्भाग्य शमनं भुक्ति मुक्तिदम् ।
क्षयरोगाग्निकुष्टघ्नं मृत्युसंहार कारकम् ॥
सप्तकोटिमहामन्त्र पारायण फल प्रदम् ।
कोटयश्वमेधफलदं जरामृत्यु निवारकम् ॥
किं पुनर्बहुनोक्तेन सत्यं सत्यं महेश्वरी ।
मद्यमांसासवैर्देवि मत्स्यमाक्षिकपायसै: ॥
शिवाबलिं प्रकर्तव्य मिदन्तु हृदयं पठेत् ।
इहलोके भवेद्राजा मृतो मोक्षमवाप्नुयात् ॥
शतावधानो भवति मासमात्रेण साधक: ।
संवत्सर प्रयोगेन साक्षात् शिवमयो भवेत् ॥
महादारिद्रं निर्मुक्तं शापानुग्रहेण क्षम: ।
काशीयात्रा सहस्राणि गंगास्नान शतानि च ॥
महात्यादिभिर्पापै: महापातक कोटय: ।
सद्य: प्रलयतां याति मेरुमन्दिर सन्निभम् ॥
भक्तियुक्तेन मनसा साधयेत् साधकोत्तम: ।
साधकाय प्रदातव्यं भक्तियुक्ताय चेतसे ॥
अन्यथा दापयेद्यस्तु स नरो शिवहा भवेत् ।
अभक्ते वञ्चके धूर्ते मूढे पण्डितमानिने ॥
न देयं यस्य कस्यापि शिवस्य वचनं यथा ।
इदं सदाशिवेनोक्तं साक्षात्कारं महेश्वरि ॥

भावार्थ—यह दिव्य हृदय महान् पापों को नष्ट करने वाला,

समस्त दु:खों को शान्त करने वाला तथा सम्पूर्ण रोगों को नष्ट करने वाला है। यह समस्त शत्रुओं का क्षय करने वाला, सब संकटों को नष्ट करने वाला एवं ब्रह्म-हत्या, सुरा-पान, चोरी तथा गुरु-पत्नी-गमन जैसे पापों को दूर करने वाला है। इस हृदय की कृपा से समस्त शत्रुओं का नाश होता है। मंगलवार, संक्रान्ति, अष्टमी तिथि अथवा अपने जन्मदिन के अवसर अथवा चतुर्दशी, षष्ठी तिथि अथवा शनिवार के दिन जो साधक इस हृदय स्तोत्र का पाठ करता है, वह किस सिद्धि को प्राप्त नहीं कर लेता ? अर्थात् उसकी सभी कामनाएं सिद्ध होती हैं। हे देवी ! यदि अपने कल्याण की इच्छा हो तो यह सत्य है, सत्य है और पुन: सत्य है कि इस देव-दुर्लभ हृदय को किसी के समक्ष प्रकट नहीं करना चाहिए। हे देवेशि ! मन्त्र-विग्रह रूप इस हृदय को कोई व्यक्ति यदि प्रकट करता है तो उसकी सिद्धि नष्ट हो जाती है और वह नरक में वास पाता है।

दारिद्र्य को दूर करने के हेतु चतुर्दशी तिथि में जो श्रेष्ठ साधक प्रातःकाल के समय अपनी पत्नी के साथ तीन बार इस हृदय-स्तोत्र का पाठ करता है, हे महादेवि वह छह महीने में ही कुबेर के समान हो जाता है।

विद्या-प्राप्त करने की इच्छा रखने वाले व्यक्ति को पूर्णिमा तिथि में इस हृदय-मन्त्र का जप करना चाहिए। हे देवि ! मातृकावर्णों के साथ सुधा-सानर का ध्यान करके एक सौ आठ वार मन्त्र का जप करने वाला व्यक्ति कवि होता है।

रविवार के दिन सूर्यमण्डल में स्थित देवी का एकाग्र होकर ध्यान करने तथा एक सहस्र बार मन्त्र का जप करने से कलियुग में देवता का दर्शन भी हे महेशानि ! इस-काली-मन्त्र के प्रभाव से होता है।

हे देवि ! पञ्च मकारों से यथाविधि सन्तुष्ट करके काली-मन्त्र का एक सहस्र बार जप करके इस हृदय का पाठ करने पर एक बार के मन्त्रोच्चारण मात्र से ही बड़ी-से-बड़ी विपत्ति दूर भाग जाती है।

यह हृदय-स्तोत्र छोटे-बड़े समस्त पापों तथा दुर्भाग्य को नष्ट करने वाला, भुक्ति-मुक्ति देने वाला, क्षय, कुष्ठ आदि रोगों को नष्ट करने वाला तथा मृत्यु को दूर करने वाला है।

यह सात करोड़ महामन्त्रों के पारायण का फल देने वाला, एक करोड़ अश्वमेघ यज्ञों का फल देने वाला तथा वृद्धावस्था एवं मृत्यु का निवारण करने वाला है।

अधिक कहने की क्या आवश्यकता है ? हे महेश्वरी ! यह सत्य है, सत्य है। मद्य, मांस, मत्स्य, शहद तथा खीर से शिवा वलि करके सो साधक इस हृदय का पाठ करता है, वह इस लोक में राजा होता है तथा मृत्यु के पश्चात् मोक्ष प्राप्त करता है। ऐसा साधक एक महीने में शतावधानी होता है तथा एक वर्ष तक यही प्रयोग करने से साक्षात् शिवमय हो जाता है। उसे महादरिद्रता से मुक्ति मिलती है और शाप देने अथवा कृपा करने की सामर्थ्य प्राप्त होती है। सहस्त्रों काशी-यात्रा तथा सैकड़ों गङ्गा-स्नान का फल प्राप्त होता है। महा-हत्या आदि पाप तथा अन्य प्रकार के करोड़ों पाप तुरन्त नष्ट हो जाते हैं।

श्रेष्ठ साधक को चाहिए कि वह भक्तियुक्ति हृदय से इसकी साधना करे तथा केवल भक्ति-सम्पन्न बुद्धि वाले साधक को ही इसे प्रदान करे। इसके अतिरिक्त अभक्त, वंचक, धूर्त, मूढ़ तथा अभि-मानी व्यक्ति को यदि इसे दिया जाय तो वह मनुष्य नष्ट हो जाता है। शिवजी का वचन है कि हृदय-स्तोत्र जिस किसी भी व्यक्ति को देने योग्य नहीं है। हे महेश्वरी ! इस हृदय-स्तोत्र को साक्षात् शिवजी ने ही कहा है।

।। इति श्री देवीयामले श्री कालिकाहृदयस्तोत्रम् समाप्तम् ।।

महाकौतूहल दक्षिणाकाली हृदय स्तोत्रम

श्री महाकाल उवाच

महाकौतूहल स्तोत्रं हृदयाख्यं महोत्तमम्।
श्रणु प्रिये महागोप्यं दक्षिणाय: सुणोपितम्।।
अवाच्येमपि वक्ष्यामि तव प्रीत्या प्रकाशितं।
अन्येभ्य: कुरु गोप्यं च सत्यं सत्यं च शैलजे।।

श्री देव्युवाच

कस्मिन् युगे समुत्पन्नं केन स्तोत्रं कृतं पुरा।
तत्सर्वं कथ्यतां शंभो दयानिधि महेश्वर।।

श्री महाकाल उवाच

पुरा प्रजापते शीर्षच्छेदनं न कृदवानहम्।
ब्रह्महत्या कृते: पापैर्भैरवत्वं ममागतम्।।
ब्रह्महत्वा विनाशायकं कृतं स्तोत्रं मयाप्रिये।
कृत्या विनाशकं स्तोत्रं ब्रह्महत्यापहारकम्।।

भावार्थ—श्री महाकाल ने कहा—हे प्रिये! दक्षिणा काली के हृदय नामक अत्यन्त उत्तम तथा परम गुप्त महाकौतूहल स्तोत्र को सुनो, जो कि अत्यन्त गोपनीय है। न बताने योग्य होते हुए भी मैं उसे कहता हूं, यह पूर्णत: सत्य है। हे शैलजे! इसे दूसरों से गुप्त रखना।

श्री देवी ने कहा—हे शम्भो! हे दयानिधे! हे महेश्वर! यह स्तोत्र किस युग में उत्पन्न हुआ और इसको रचना पहले किसने की, यह आप मुझे बताइए?

श्री महाकाल बोले—प्राचीन काल में मैंने प्रजापति का मस्तका काट डाला था, उस ब्रह्महत्या के पाप से मुझमें भैरवत्व उत्पन्न

हो गया। हे प्रिये ! उस ब्रह्महत्या के पाप को नष्ट करने के लिए ही मैंने इस स्तोत्र की रचना की थी। यह स्तोत्र कृत्या (मारण प्रयोग) को नष्ट करने वाला तथा ब्रह्महत्या को दूर करने वाला है।

ॐ अस्य श्री दक्षिणकाल्या हृदय स्तोत्र मंत्रस्य श्री महाकाल ऋषिरुष्णिक्छन्दः श्री दक्षिण कालिका देवता क्रीं बीजं ह्रीं शक्तिः नमः कीलकं सर्वत्र सर्वदा जपे विनियोगः।

भावार्थ—इस दक्षिण काली काली हृदय स्तोत्र के श्री महाकाल ऋषि हैं, उष्णिक् छन्द है, श्री दक्षिण कालिका देवता है, 'क्रीं' बीज है, 'ह्रीं' शक्ति है, 'नमः' कीलक है तथा इसका विनियोग सर्वत्र सर्वदा जप में है।

ॐ क्रां हृदयाय नमः। ॐ क्रीं शिरसे स्वाहा। ॐ क्रूं शिखायै वषट्, ॐ क्रैं कवचाय हुं, ॐ क्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ क्रः अस्त्राय फट्। इति हृदयादि न्यासः।

भावार्थ—इसका हृदयादि न्यास प्रस प्रकार है—

ॐ क्रां हृदयाय नमः।
ॐ क्रीं शिरसे स्वाहा।
ॐ क्रूं शिखायै वषट्।
ॐ क्रैं कवचाय हुं।
ॐ क्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्।
ॐ क्रः अस्त्राय फट्।

अथ ध्यानम्

ॐ ध्यायेत्काली महामायां त्रिनेत्रां बहुरूपिणीं।
चतुर्भुजां ललज्जिह्वां पूर्णचन्द्रनिभाननाम्।।
नीलोत्पलदल प्रख्यां शत्रुसंघ विदारिणीम्।
नरमुण्डं तथा खड्गं कमलं वरदं तथा।।
बिभ्राणां रक्तवदनां दंष्ट्रालीं घोररूपिणीम्।

अट्टाट्टहासनिरतां सर्वदा च दिगम्बराम् ।।
शवासन स्थितां देवीं मुण्डमाला विभूषिताम् ।।

भावार्थ—मैं उन काली देवी का ध्यान करता हूं, जो महामाया, तीन नेत्रों वाली, बहुरूपिणी, चार भुजाओं वाली, लपलपाती जिह्वा वाली तथा पूर्ण चन्द्र के समान सुन्दर मुख वाली हैं। वे नील कमल की पंखुरियों जैसी आभा वाली, शत्रुसमूह का नाश करने वाली, नरमुण्ड, खड्ग, कमल तथा वरमुद्रा को धारण करने वाली हैं। उनका मुखमण्डल लाल वर्ण का है, उनके भयानक दांत हैं और उनका घोर स्वरूप है । वे सदैव अट्टहास करती रहती हैं तथा दिगम्बर हैं। वे देवी शव के आसन पर स्थित तथा मुण्डों की माला से विभूषित हैं।

अथ हृदय स्तोत्रम्

ॐ कालिका घोररूपाढ्या सर्व काम फलप्रदा ।
सर्वदेवस्तुता देवी शत्रुनाशं करोतु मे ।।
ह्रीं ह्रीं स्वरूपिणी श्रेष्ठा त्रिषु लोकेषु दुर्लभा ।
तव स्नेहान्मया ख्यातं न देयं यस्य कस्यचित् ।।
अथ ध्यानं प्रवक्ष्यामि निशामय परात्मिके ।
यस्य विज्ञानमात्रेण जीवन्मुक्तो भविष्यति ।।

भावार्थ—घोर रूप वाली, समस्त कामनाओं को देने वाली तथा समस्त देवताओं द्वारा स्तुत्य कालिका देवी मेरे शत्रुओं का नाश करें। 'ह्रीं ह्रीं' स्वरूप वाली देवी श्रेष्ठ तथा तीनों लोकों में दुर्लभ हैं। मैंने तुम्हारे स्नेह के कारण उनका वर्णन किया है, यह जिस किसी को नहीं बताना चाहिए। हे परमात्मिके ! अब मैं उस ध्यान के विषय में कहूंगा, जिसके जानने मात्र से ही मनुष्य जीवन मुक्त हो जाता है, सुनो—

नागयज्ञोपवीताञ्च चन्द्रार्द्धकृत शेखराम् ।
जटाजूटाञ्च संचिन्त्य महाकाल समीपगाम् ।।

एवं न्यासादयः सर्वे ये प्रकुर्वन्ति मानवाः ।
प्राप्नुवन्ति च ते मोक्षं सत्यं सत्यं वरानने ॥

भावार्थ—जो सर्प का यज्ञोपवीत तथा मस्तक पर अर्द्धचन्द्र का मुकुट एवं जटाजूट धारण किये हुए हैं, जो महाकाल के समीप स्थित हैं, ऐसी देवी का ध्यान करके जो मनुष्य न्यासादि कर्मों को करते हैं, उन्हें मोक्ष प्राप्त होता है। हे वरानने ! यह सर्वथा सत्य है।

यन्त्रं शृणु परं देव्याः सर्वार्थ सिद्धिदायकम् ।
गोप्यं गोप्यतरं गोप्यं गोप्यं गोप्यतरं महत् ॥
त्रिकोणं पञ्चकं चाष्ट कमलं भूपुरान्वितम् ।
मुण्ड पंक्तिं च ज्वालं च काली यन्त्रं सुसिद्धिदम् ॥

भावार्थ—देवी के सर्वार्थसिद्धिदायक यन्त्र के विषय में सुनो; यह गोपनीय, गोपनीय से भी अधिक गोपनीय, गोपनीय तथा अत्यधिक गोपनीय है। पांच त्रिकोण, अष्टदल कमल तथा भूपुर से युक्त मुण्ड पंक्ति एवं ज्वाला से सुशोभित कालीयन्त्र सुन्दर सिद्धियों को देने वाला है।

टिप्पणी—'कालीयन्त्र' का स्वरूप पुस्तक के अन्तिम परिशिष्ट में देखिए।

मन्त्रं तु पूर्व कथितं धारयस्व सदा प्रिये।
देव्या दक्षिण काल्यास्तु नाम मालां निशामय ॥

भावार्थ—हे प्रिये ! जिस मन्त्र को पहले कहा जा चुका है, उसे सदैव धारण करना चाहिए। अब देवी दक्षिण कालिका की नाम माला को सुनो—

काली दक्षिण काली च कृष्णरूपा परात्मिका ।
मुण्डमाला विशालाक्षी सृष्टि संहारकारिका ॥
स्थितिरूपा महामाया योगनिद्रा भगात्मिका ।
भगसर्पिः पानरता भगोद्योता भगाङ्गजा ॥

आद्या सदा नवा घोरा महातेजाः करालिका।
प्रेतवाहा सिद्धि लक्ष्मीरनिरुद्धा सरस्वती ।।

भावार्थ—काली, दक्षिणा काली, कृष्णरूपा, परानित्मका, मुंड-माला, विशालाक्षी, सृष्टि संहारकारिका, स्थिति रूपा, महामाया, योगनिद्रा, भगात्मिका, भगसर्पिः, पानरता, भगोद्योता, भगाङ्गजा, सदानवा, घोरा, महातेजाः, करालिका, प्रेतवाहा, सिद्धि लक्ष्मी, अनिरुद्धा और सरस्वती।

एतानि नाममाल्यानि ये पठन्ति दिने दिने।
तेषां दासस्य दासोऽहं सत्यं सत्यं महेश्वरि ।।

भावार्थ—इस नाम माला का जो व्यक्ति प्रतिदिन पाठ करते हैं, मैं अनेक सेवक का भी सेवक बना रहता हूं। हे महेश्वरि ! यह सत्य है, सत्य है।

ॐ कालीं कालहरां देवीं कङ्काल बीज रूपिणीम्।
कालरूपां कलातीतां कालिकां दक्षिणां भजे ।।
कुण्डगोलप्रियां देवीं स्वयम्भू कुसुमे रताम्।
रतिप्रियां महारौद्रीं कालिकां प्रणमाम्यहम् ।।
दूती प्रियां महादूतीं दूती योगेश्वरीं पराम् ।।
दूती योगोद्भवरतां दूतीरूपां नमाम्यहम् ।।

भावार्थ—मैं उन दक्षिण कालिका देवी का भजन करता हूं जो काल का भी हरण करने वाली, कङ्कालवीज रूपिणी, कालरूपा तथा कलातीता हैं। उन देवी को प्रणाम करता हूं, जिन्हें कुण्ड गोलक प्रिय है, जो स्वयम्भू कुसुम में मग्न हैं, जिन्हें रति प्रिय है और जो महारौद्र वाली हैं। मैं उन देवी को नमस्कार करता हूं जो दूतीप्रिया, महादूती, दूतीयोग की ईश्वरी, परा, दूतीयोग से उत्पन्न तथा दूती रूपा हैं।

क्रीं मंत्रेण जलं जप्त्वा सप्तधा से चनेन तु।
सर्वे रोगा विनश्यन्ति नात्र कार्या विचारणा ।।

क्रीं स्वाहान्तैर्महामन्त्रैश्चन्दनं साधयेत्ततः ।
तिलकं क्रियते प्राज्ञैर्लोको वश्यो भवेत्सदा ॥
क्रीं हूं ह्रीं मन्त्रजप्तैश्च ह्यक्षतैः सप्तभिः प्रिये ।
महाभयविनाशश्च जायते नात्र संशयः ॥
क्रीं ह्रीं हूं स्वाहा मंत्रेण श्मशानाग्नि च मंत्रयेत् ।
शत्रोर्गृहे प्रतिक्षिप्त्वा शत्रोर्मृत्युर्भविष्यति ॥
हूं ह्रीं क्रीं चैव उच्चाटे पुष्पं संशोध्य सप्तधा ।
रिपूणां चैव चोच्चाटं नयत्येव न संशयः ॥
आकर्षणे च क्रीं क्रीं क्रीं जप्त्वाक्षतान् प्रतिक्षिपेत् ।
सहस्रयोजनस्था च शीघ्रमागच्छति प्रिये ॥
क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं च कज्जलं शोधितं तथा ।
तिलकेन जगन्मोहः सप्तधा मन्त्रमाचरेत् ॥

भावार्थ—'क्रीं' मन्त्र से जल को अभिमन्त्रित कर, उसके सात बार सिंचन से सभी रोग नष्ट हो जाते हैं, इसमें सन्देह नहीं है। 'क्रीं स्वाहा' इस महामन्त्र द्वारा चन्दन तैयार करके उसे जो बुद्धिमान् पुरुष लगाता है, संसार उसके सदैव वशीभूत होता है। हे प्रिये! 'क्रीं हूं ह्रीं' इस मन्त्र से अभिमन्त्रित सात अक्षतों को छोड़ने पर बड़े से बड़ा भय नष्ट हो जाता है, इसमें सन्देह नहीं है। 'क्रीं ह्रीं हूं स्वाहा'—इस मन्त्र श्मशान को अग्नि को अभिमन्त्रित कर, उसे शत्रु के घर की ओर फेंकने से शत्रु की मृत्यु हो जाती है। 'हूं ह्रीं क्रीं'—इस मन्त्र से ात बार पुष्प का संशोधन करके उसे उच्चाटन कर्म में प्रयुक्त करना चाहिए। इससे शत्रुओं का उच्चाटन होता है, इसमें सन्देह नहीं है। आकर्षण कार्य में 'क्रीं क्रीं क्रीं'—इस मन्त्र से अभिमन्त्रित अक्षतों को फेंकना चाहिए। हे प्रिये! इसके प्रभाव से सहस्र योजन की दूरी पर स्थित व्यक्ति भी शीघ्र आ जाता है। 'क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं'—इस मन्त्र द्वारा शोधित काजल का तिलक करने से संसार का मोहन होता है। इस मन्त्र का सात बार व्यवहार (उच्चारण) करना चाहिए।

हृदयं परमेशानि सर्वपापहरं परम्।
अश्वमेधादियज्ञानां कोटि कोटिगुणोत्तरम्॥
कन्यादानादिदनानां कोटि कोटि गुणं फलम्।
दूती यागादियागानां कोटि कोटि फलं स्मृतम्॥
गङ्गादि सर्वतीर्थानां फलं कोटि गुणं स्मृतम्।
एकधा पाठमात्रेण सत्यं सत्यं मयोदितम्॥
कौमारीस्वेष्टरूपेण पूजां कृत्वा विधानतः।
पठेत्स्तोत्रं महेशानि जीवन्मुक्तः स उच्यते॥
रजस्वलाभगं दृष्टवा पठदेकाग्रमानसः।
लभते परमं स्थान देवी लोकं वरानने॥
महादुःखे महारोगे महासंकटके दिने।
महाभये महाघोरे पठेत्स्तोत्रं महोत्तमम्॥
सत्यं सत्यं पुनः सत्यं गोपयेन्मातृजारवत्॥

भावार्थ—हे परमेश्वरि! यह हृदयस्तोत्र सब पापों को नष्ट करने में श्रेष्ठ है। यह अश्वमेध आदि यज्ञों से भी करोड़ों गुना अधिक फल देने वाला है। इसका फल कन्यादान आदि दानों से कोटिगुना अधिक है और यह दूतीयाग आदि यागों से भो कोटिगुना अधिक फल देने वाला है। यह स्तोत्र एक बार पाठ करने मात्र से ही गङ्गा आदि सभी तीर्थों के फल से करोड़ों गुना अधिक फल प्रदान करता है। यह मैंने सत्य कहा है, सत्य कहा है। हे महेशानि! जो व्यक्ति कौमारी की अपने दृष्ट देवता के रूप में विधि-पूर्वक पूजा करके इस स्तोत्र का पाठ करता है, वह जीवन्मुक्त हो जाता है। हे वरानने! जो व्यक्ति रजस्वला-भग को देखते हुए, एकाग्रचित्त से इसका पाठ करता है, वह देवलोक में परमस्थान को प्राप्त करता है। महादुःख में, महारोग में, महासङ्कट के दिनों में, महाभय में तथा महा भयानक स्थिति में इस परम श्रेष्ठ स्तोत्र का पाठ करना चाहिए। यह सत्य है, सत्य है और पुनः सत्य है कि इसे माता के जार के समान गुप्त रखना चाहिए।

॥इति श्री महाकौतूहल श्रीमान दक्षिणा काली हृदयस्तोत्रम् समाप्त म्॥

श्री काली क्षमापराध स्तोत्र

प्राग्देहस्थोय दाहं तव चरण युगा—

म्नश्रितो नार्चितोहं ।

तेनाद्या कीर्तिवर्गेर्ज्जठरजदहने

र्बाद्धयमानो बलिष्ठैः ॥

क्षिप्त्वाजन्मान्तरान्नः पुनरिहभविता

क्वाश्रयः क्वापि सेवा ।

क्षन्तव्योमेपराधः प्रकटित वदने

कामरूपे कराले ॥१॥

वाल्येवालाभिलायैर्ज्जडित जडमति

र्बाललीला प्रसक्तो ।

नत्वांजानामिमातः कलिकलुषहरा

भोगमोक्ष प्रदात्रीम् ॥

नाचारो नैव पूजा न च यजन कथा

न स्मृतिर्नैव सेवा ।

क्षन्तव्येमेपराधः प्रकटित्त वदने

कामरूपे कराले ॥२॥

प्राप्तोहं यौवनञ्चे द्विषधर सदृशै

रिन्द्रियैर्द्दष्ट गात्रो ।

नष्ट प्रज्ञः परस्त्री परधन हरणे

सर्व्वदा साभिलाषः ॥

त्वत्पादम्भोज युग्मङ् क्षणमपि मनसा

न स्मृतोहं कदापि ।

क्षन्तव्ये मे पराधः प्रकटित वदने

कामरूपे कराले ॥३॥

प्रौढ़ोभिक्षाभिलाषी सुत दुहितृ कल-
त्रार्थ मन्नादि चेष्ट ।
स्व प्राप्स्ये कुत्रयामी त्यनुदिन मनिश-
-ञ्चिन्तयामग्न देह: ॥
नोतेध्यानन्त चास्था न च भजन विधि-
-न्नाम सङ्कीर्तनंव्वा ।
क्षन्तव्यो मे पराध: प्रकटित वदने
कामरूपे कराले ॥४॥
वृद्धत्वे बुद्धिहीन: कृश विवशतनु
श्श्वासकासातिसारै: ।
कर्म्मनिर्हो ऽक्षिहीन: प्रगलित दशन:
क्षुत्पिपासाभिभूत: ॥
पश्चात्तपेनदग्धो मरण मनुदिन-
-न्ध्येय मात्रन्नचान्यत् ।
क्षन्तव्यो मेपराध: प्रकटित वदने
कामरूपे कराले ॥५॥
कृत्वास्नानं दिनादौ क्वचिदपि सलिलं
नोकृतं नैव पुष्प ।
त्ते नैवेद्यादिकञ्च क्वचिदपि न कृतं
नापिभावोन भक्ति: ॥
न्न्यासो नैव पूजा न च गुण कथनं
नापि चार्च्चाकृताते ।
क्षन्तव्यो मे पराध: प्रकटित वदने
कामरूपे कराले ॥६॥
जानामि त्वां न चाहं भवभयहरणीं
सर्व्व सिद्धि प्रदात्रीं ।
न्नित्यानन्दोदयाढ्यान्त्रितय गुणमयी
न्नित्य शुद्धोदयाढ्याम् ॥

मिथ्याकर्म्माभिलाषैरनुदिनमभितः
पीडितो दुःख सङ्घैः ।
क्षन्तव्योमेपराधः प्रकटित वदने
कामरूपे कराले ।।७।।

कालाभ्रां श्यामालाङ्गीं विगलित चिकुरा
खड्गमुण्डाभिरामा ।
त्त्रास त्राणेष्टदात्रीम् कुणपगणशिरो
मालिनीन्दीर्घनेत्राम् ।।
संसारस्यैक सारामभवजन नहरा-
-म्भावितोभावनाभिः ।
क्षन्तव्यो मे पराधः प्रकटित वदने
कामरूपे कराले ।।८।।

ब्रह्मा विष्णु स्तथेशः परिणमति सदा
त्वत्पदाम्भोज युक्त ।
म्भाग्याभावान्न चाहम्भव जननि भव
त्पाद युग्मम्भजामि ।।
नित्यंल्लोभ प्रलोभैः कृतविशमतिः
कामुकस्त्वाम्प्रयाषे।
क्षन्तव्यो मे पराधः प्रकटित वदने
कामरूपे कराले ।।९।।

रागद्वेषैः प्रमत्तः कलुष युत तनुः
कामनाभोग लुब्धः ।
कार्य्याकार्य्या विचारी कुलमति रहितः
कौलसङ्घैर्विहीनः ।।
क्वध्यानन्ते क्वचार्च्चा क्वमनुजपन
न्नैव किञ्चित् कृतोहम् ।
क्षन्तव्यो मे पराधः प्रकटित वदने
कामरूपे कराले ।।१०।।

रोगी दु:खी दरिद्र: परवशकृपण:
पांशुल: पाप चेता।
निद्रालस्य प्रसक्तबास्सुजठरभरणे
व्याकुल: कल्पितात्मा॥
किन्ने पूजा विधानन्त्वयिक्वचनुमति:
क्वानुराग: क्वचास्था।
क्षन्तव्यो मे पराध: प्रकटित वदने
कामरूपे कराले॥११॥
मिथ्या व्यामोह रागै: परिवृतमनस:
क्लेशसङ्घान्वितस्य
क्षुन्निद्रौघान्वितस्य स्मरण विरहिण:
पापकर्म्भ प्रवृत्ते:॥
दारिद्रयस्य क्वधर्म: क्वचजननिरुचि:
क्वस्थितिस्साधु सङ्गै:
क्षन्तव्यो मे पराध: प्रकटित वदने
कामरूपे कराले॥१२॥
मातस्तातस्यदेहाज्जननि जठरग:
संस्थितस्त्वद्व गेहन्।
त्वं हर्त्रा कारयित्रीकर गुणमयी
कर्महेतु स्वरूपा॥
त्वम्बुद्धिश्चित्त संस्थाप्यहमतिभवती
सर्व्वमेतत्क्षमस्व।
क्षन्तव्योमेपराध: प्रकटित वदने
कामरूपे कराले॥१३॥
त्वम्भूमिस्त्वञ्जलञ्च त्वमसि हुतवह
स्त्वञ्जगद्वायुरूपा
त्वञ्चाकाषम्मनश्च प्रकतिरसि मह-
त्पूर्व्विका पूर्व्वपूर्व्वा॥
आत्मात्वञ्चासिमात: परमसिभवती
त्वत्परन्नैव किञ्चित्।

क्षन्तव्यो मे पराधः प्रकटित वदने
कामरूपे कराले ॥१४॥
त्वङ्काली त्वञ्चतारात्वमसि गिरिसुता
सुन्दरी भैरवी त्वं ।
त्वन्दुर्गा छिन्नमस्ता त्वमसि च भुवना ।
त्वम् हि लक्ष्मीः शिवा त्वम् ॥
धूमा मातङ्गिनीत्वन्त्वमसि च बगला
मङ्गलादिस्तवाख्या ।
क्षन्तव्यो मे पराधः प्रकटित वदने
कामरूपे कराले ॥१५॥
स्तोत्रेणानेन देवीम्परिणमति जनो
यः सदाभक्तियुक्तो ।
दुष्कृत्यादुर्गा सङ्घम्परितरति शतं
विघ्नतानाशमेति ॥
नाधिर्व्याधिः कदाचिद्भवति यदि पुन-
स्सर्वदा सापराधः
स्सर्वन्तत्कामरूपे त्रिभुवन जननि
क्षामये पुत्र बुद्धया ॥१६॥
ज्ञाता वक्ता कवीशो भवति धनपति-
र्दानशीलो दयात्मा ।
निः पापी निः कलङ्की कुलपति कुशल
स्सत्यवाग्धार्म्मिकश्च ॥
नित्यानन्दो दयाढ्यः पशुगणविमुख
स्सत्पथा चारुशीलः ।
संसाराब्धि सुखेन प्रतरति गिरिजा
पादयुग्मा वलम्बात् ॥१७॥
॥ इति श्री कालीक्षयापराध स्तोत्रम् समाप्तम् ॥

श्री कालिका खड्गमाला स्तोत्र

विनियोग

ॐ अस्य श्रीदक्षिण कालिका खड्गमाला मन्त्रस्य श्री भगवान् महाकालभैरव ऋषि: उष्णिक् छन्द: शुद्ध: ककार त्रिपञ्चभट्टारक-पीठस्थित महाकालेश्वराङ्कनिलया महाकालेश्वरी त्रिगुणात्मिका श्री मद्दक्षिणा कालिका महाभयहरिकादेवता क्रीं बीजं ह्रीं शक्ति: हूं कीलकं मम सर्वाभीष्ट सिद्ध्यर्थे खड्गमाला मन्त्र जपे विनियोग: ।

भावार्थ—इस मद्दक्षिणकालिका खड्गमाला मन्त्र के श्री भगवान् महाकाल भैरव ऋषि हैं, उष्णिक छन्द है, महान भय को दूर करने वाली, शुद्ध ककार त्रिपञ्चभट्टारकपीठ स्थित महाकालेश्वर के अङ्क में विराजमान त्रिगुणात्मिका श्री मद्दक्षिण कालिका देवता हैं, 'क्रीं' बीज है, 'ह्रीं' शक्ति है, 'हूं' कीलक है तथा सभी अभीष्टों की सिद्धि के लिए खड्गमालामन्त्र के जप का विनियोग होता है ।

विशेष—उक्त विनियोग को पढ़ने के बाद मूलमन्त्र से प्राणायाम करना चाहिए । तत्पश्चात् क्रमश: ऋष्यादि न्यास, कराङ्ग न्यास एवं षडङ्ग न्यास करना चाहिए । न्यास करने की विधि पहले बताई जा चुकी है । न्यासोपरान्त ध्यान करके मानसोपचारों से देवता का पूजन करना चाहिए । फिर अपने ही शरीर का श्रीचक्र के स्वरूप में ध्यान करना चाहिए । ध्यान का स्वरूप इस प्रकार है—

नागाध्वाकारनिर्मुक्त ज्वलत् कालाग्नि सदृश बिन्दु का ब्रह्म रन्ध्र में, प्रथम त्रिकोण का मस्तक में, द्वितीय त्रिकोण का भ्रूमध्य में, तृतीय त्रिकोण का कण्ठ में, चतुर्थ त्रिकोणका हृदय में, पञ्चम त्रिकोण का मणिपूरक (नाभि) में, अष्टदल का स्वाधिष्ठान (लिङ्ग मूल के ऊपर) में तथा भूपुर का मूलाधार (लिङ्ग तथा गुदा के मध्यवर्ती भाग) में ध्यान करना चाहिए ।

प्रथम आवरण (बिन्दु में)

निम्नलिखित प्रत्येक आवरण देवता के आरम्भ में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्रीं हूं ह्रीं तथा अन्त में श्रीं पादुकां पूजयामि नमः तर्पयामि स्वाहा जोड़ कर पूजन तर्पण करना चाहिए जैसे—

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्रीं हूं ह्रीं श्री मद्दक्षिणकालिका खड्गमुण्डवराभयकरा महाकालभैरव सहिता श्री पादुकां पूजयामि नमः तर्पयामि स्वाहा।

श्री हृदय देवी सिद्धिकालिकामयी।
श्री शिरो देवी महाकालिकामयी।
श्री शिखा देवी गुह्य कालिकामयी।
श्री कवच देवी श्मशान कालिकामयी।
श्री नेत्र देवी भद्रकालिकामयी।
श्री अस्त्र देवी श्रीमद्दक्षिण कालिकामयी।

सर्वसंपत्प्रदायक चक्रस्वामिनि नमस्ते नमस्ते स्वाहा।

द्वितीय आवरण (बिन्दु को चारों दिशाओं में)

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्रीं हूं ह्रीं जया सिद्धिमयी श्री पादुकां पूजयामि नमः तर्पयामि स्वाहा।

अपराजिता सिद्धिमयी।
नित्या सिद्धिमयी।
अघोरा सिद्धिमयी।

सर्वमङ्गलमयि चक्रस्वामिनि नमस्ते स्वाहा।

तृतीय आवरण (बिन्दु के बायें प्रथम गुरु पंक्ति में गुरु-चतुष्टय)

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्रीं हूं ह्रीं श्री गुरुमयी श्री पादुकां पूजयामि नमः तर्पयामि स्वाहा।

श्री परमगुरुमयी ।
श्री परात्परगुरुमयी ।
श्री परमेष्ठिगुरुमयी ।

सर्व संपत्प्रदायक चक्र स्वामिनि नमस्ते नमस्ते स्वाहा ।

चतुर्थ आवरण (द्वितीय पंक्ति में दिव्यौघ)

ॐ ऐं ह्लीं श्रीं क्रीं हूं ह्रीं महादेव्यम्बामयी श्री पादुकां पूजयामि मम: तर्पयामि स्वाहा ।

नहादेवानन्दनाथमयी ।
त्रिपुराम्बामयी ।
त्रिपुरभैरवानन्दनाथमयी ।

(तृतीय पंक्ति में सिद्धौघ)

ब्रह्मानन्दनाथमयी ।
पूर्वदेवानन्दनाथमयी ।
चलच्चितानन्दनाथमयी ।
लोचनानन्दनाथमयी ।
कुमारानन्दनाथमयी ।
क्रोधानन्दनाथमयी ।
वरदानन्दनाथमयी ।
स्मरद्वीयानन्दनाथमवी ।
मायाम्बामयी ।
मायावत्यम्बामयी ।

(चतुर्थ पंक्ति में मानवौघ)

विमलानन्दनाथमयी ।
कुशलानन्दनाथमयी ।
भीमसुरानन्दनाथयंयी ।

सुधाकरानन्दनाथमयी ।
मीनानन्दनाथमयी ।
गोरक्षकानन्दनाथमयी ।
भजदेवानन्दनाथमयी ।
प्रजापत्यानन्दनाथमयी ।
मूलदेवनन्दनाथमयी ।
रन्तिदेवानन्दनाथमयी ।
विघ्नेश्वरानन्दनाथमयी ।
हुताशनानन्दनाथमयी ।
समरानन्दनाथमयी ।
संतोषानन्दनाथमयी ।

सर्वसम्पत्प्रदायक चक्र स्वामिनि नमस्ते नमस्ते स्वाहा ।

पञ्चम आवरण (पांचों त्रिकोणों में क्रमशः तीन-तीन करके)

पहले की ही भांति आवरण देवताओं के नाम के आगे उक्त सात बीजों को जोड़ें तथा अन्त में **देवी नित्यामयी श्री पादुकां पूजयामि नमः तर्पयामि स्वाहा** जोड़ दें । जैसे—

(१) ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्रीं हूं ह्रीं **श्री काला देवीमयी श्री पादुकां पूजयामि नमः तर्पयामि स्वाहा** । जोड़ दें । जैसे—

कपालिनी । कुल्ला ।
(२) कुरुकुल्ला । विरोधिनी । विप्रचित्ता ।
(३) उग्रा । उग्रप्रभा । दीप्ता ।
(४) नीला । घना । वलाका ।
(५) मात्रा । मुद्रा । मिता ।*

*पाठ भेद—मित्रा ।

सर्वेप्सितफलप्रदायक चक्र स्वामिनि नमस्ते नमस्ते स्वाहा ।

षष्ठ आवरण (अष्ट दलों में)

पहले की ही भांति निम्नलिखत आवरण देवताओं के नाम के आगे उक्त सात बीजों को जोड़ें तथा अन्त में देवीमयी श्री पादुकां पूजयामि नमः तर्पयामि स्वाहा । जोड़ दें । जैसे—

ॐ ऐं ह्लीं श्रीं क्रीं हूं ह्लीं ब्राह्मीदेवीमयी श्री पादुकां पूजयामि नमः तर्पयामि स्वाहा ।

नारायणी ।
माहेश्वरी ।
चामुण्डा ।
कौमारी ।
अपराजिता ।
वाराहठी ।
नारसिंही ।

त्रैलोक्य मोहन चक्रस्वामिमि नमस्ते नमस्ते स्वाहा ।

सप्तम आवरण (अष्टदलों के मध्य भाग में)

पहले की ही भांति निम्नलिखित आवरण देवताओं के नाम के आगे उक्त सात बीजों को जोड़ें तथा अन्त में भैरवमयी श्री पादुकां पूजयामि नमः तर्पयामि स्वाहा जोड़ दें । जैसे—

ॐ ऐं ह्लीं श्रीं क्रीं हूं ह्लीं असिताङ्ग भैरवमयी श्री पादुकां पूजयामि नमः तर्पयामिस्वाहा ।

रुरु ।
चण्ड ।
क्रोध ।
उन्मत्त ।

कपाली ।
भीषण ।
संहार ।

सर्वसंक्षोभणचक्रस्वामिनि नमस्ते नमस्ते स्वाहा ।

अष्टम आवरण (अष्टदलों के अग्र भाग में)

पहले की ही भांति निम्नलिखित आवरण देवताओं के नाम के आगे उक्त सात बीजों को जोड़ें तथा अन्त में **वटुकानन्दनाथमयी श्री पादुकां पूजयामि नमः तर्पयामि स्वाहा** जोड़ दें जैसे—

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्रीं हूं ह्रीं हेतुवटुकानन्दनाथमयी श्री पादुकां पूजयामि नमः तर्पयामि स्वाहा ।

त्रिपुरान्तक ।
वह्निजिह्व ।
कराल ।
भीम ।
वेताल ।
काल ।
एकपाद ।

सर्व सौभाग्यदायक चक्र स्वामिनि नमस्ते नमस्ते स्वाहा ।

नवम् आवरण (अष्टदलों के बाहर)

निम्नलिखित आवरण देवताओं के नाम के आरम्भ में ॐ ऐं ह्रीं क्लीं हूं फट् स्वाहा जोड़ें तथा अन्त में **योगिनी देवीमयी श्री पादुकां पूजयामि नमः तर्पयामि स्वाहा** जोड़ दें । जैसे—

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं हूं फट् स्वाहा सिंह व्याघ्रमुखी योगिनिदेवीमयी श्री पादुकां पूजयामि नमः तर्पयामि स्वाहा ।

सर्पासुमुखी ।
गजवाजिमुखी ।
क्रोष्टाखमुखी ।
मृगमेषमुखी ।
विडालमुखी ।
लम्बोदरी ।

ह्रस्वजंघा तालजंघा-प्रलम्बोणी ।
सर्वार्थदायक चक्र स्वामिनि नमस्ते नमस्ते स्वाहा ।

दशम आवरण (भूपुर में पूर्व आदि दिशाओं में)

पहले की भांति निम्नलिखित आवरण देवताओ के नाम के आरंभ में पूर्वोक्त सात बीजों को जोड़ें तथा अन्त में **मयीदेवी श्री पादुकां पूजयामि नमः तर्पयामि स्वाहा** जोड़ दें । जैसे—

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्रीं हुं ह्रीं इन्द्रमयीदेवी श्री पादुकां पूजयामि नमः तर्पयामि स्वाहा ।

अग्नि ।	यम ।
निऋति ।	वरुण ।
वायु ।	कुबेर ।
ईशान ।	ब्रह्मा ।*
अनन्त ।	वज्र ।
शक्ति ।	दण्ड ।
खड्ग ।	पाश ।
अंकुश ।	गदा ।
त्रिशूल :	पद्म ।
चक्र ।**	

सर्वरक्षाकर चक्र स्वामिनि नमस्ते नमस्ते स्वाहा ।

एकादश आवरण (बिन्दु में)

पहले की ही भांति निम्नलिखित आवरण के देवताओं के नाम के आरम्भ में उक्त सात बीजों को जोड़ दें तथा अन्त में **मयीदेवी श्री पादुकां पूजयामि नमः तर्पयामि स्वाहा** जोड़ दें । जैसे—

*निऋति तथा वरुण के मध्यम में

**ईशान तथा इन्द्र के मध्य में ।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्रीं हूं ह्रीं खड्गमयी देवी श्री पादुकां पूजयामि नमः तर्पयामि स्वाहा ।

मुण्ड । वर ।
अभय ।

सर्वाशापरिपूरक चक्र स्वामिनि नमस्ते नमस्ते स्वाहा ।

द्वादश आवरण (भूपुर के वहिर्द्वारों पर पूर्वादि क्रम से)

पहले की ही भांति निम्नलिखित आवरण देवताओं के नाम के आरम्भ में उक्त सात बीजों को जोड़ें और अन्त में मयीदेवी श्री पादुकां पूजयामि नमः तर्पयामि स्वाहा जोड़ दें। जैसे—

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्रीं हूं ह्रीं वटुकानन्दनाथमयीदेवी श्री पादुकां पूजयामि नमः तर्पयामि स्वाहा ।

योगिनी । क्षेत्रपालानन्दनाथ ।
गणनाथानन्दनाथ । सर्वभूतानन्दनाथ ।

सर्वसंक्षोभण चक्र स्वामिनि नमस्ते नमस्ते स्वाहा ।

विशेष—इस प्रकार आवरण पूजन करने के उपरान्त हाथ में पुष्प तथा अक्षत (चावल) लेकर, उन्हें निम्नलिखित श्लोकों का पाठ करते हुए श्रीचक्र के बाहर छोड़े—

चतुरस्राद्बहिः सभ्यक्संस्थिताश्च समन्ततः ।
ते च सम्पूजिताः सन्तुदेवाः देवि गृहे स्थिताः ॥
सिद्धाः साध्या भैरवाः गन्धर्वाश्च वसवोऽश्विनो ।
मुनयो ग्रहा तुष्यन्तु विश्वेदेवाश्च उष्मयाः ॥
रुद्रादित्याश्च पितरः पन्नगाः यक्ष चारणाः ।
योगेश्वरोपासका ये तुष्यन्ति नर किन्नराः ॥
नागा वा दानवेन्द्राश्च भूतप्रेत पिशाचकाः ।
अस्त्राणि सर्वशास्त्राणि मन्त्रयन्त्रार्चन क्रियाः ॥

शान्ति कुरु महामाये सर्वसिद्धिप्रदायिके ।
सर्वसिद्धिमचक्रस्वामिनि नमस्ते नमस्ते स्वाहा ॥

सर्वज्ञे सर्वशक्ते सर्वार्थप्रदे शिवे सर्वमङ्गलमये सर्वव्याधिविनाशिनि । सर्वाधार स्वरूपे सर्वपापहरे सर्वरक्षास्वरूपिणि सर्वेप्सितफलप्रदे सर्वमङ्गलदायक चक्रस्वामिनि नमस्ते नमस्ते स्वाहा ।

क्रीं ह्रीं हूं क्ष्मीं महाकालाय ह्रौं महादेवाय क्रीं कालिकायै ह्रौं महादेव महाकाल सर्वसिद्धिप्रदायक देवी भगवती चण्डचण्डिका चण्डचितात्मा प्रीणातु दक्षिणकालिकायै सर्वज्ञे सर्वशक्ते श्रीमहाकालसहिते श्रीदक्षिण कालिकायै नमस्ते नमस्ते स्वाहा ।

एषा विद्या महासिद्धिदायिनि स्मृति मन्त्रतः ।
अग्नौ वाते महाक्षोभे राज्ञो राष्ट्रस्य विप्लवे ॥
एकवारं जपेदेनं चक्रपूजा फलं लभेत् ।
आपत्काले नित्यपूजां विस्तरात्कर्तु मक्षमः ॥
खड्गं सम्पूज्य विधिवद्येन हस्ते धृतेन वै ।
अष्टादश मह्राद्वीपे साम्राट् भोक्ता भविष्वति ॥
नरवश्यं नरेन्द्राणां वश्यं नारी वशङ्करी ।
पठेत्त्रिंशत् सहस्राणि त्रैलोक्य मोहने क्षमः ॥

भावार्थ—यह विद्या स्मरणमात्र से ही महासिद्धि देने वाली है । अग्नि, वायु, महासङ्कट, राजा तथा राष्ट्र के विप्लव में इसका एक बार जप करने से ही चक्रपूजा का फल प्राप्त होता है । आपत्तिकाल में नित्य पूजा को विस्तारपूर्वक करने में अक्षम होने पर इसका जप करना चाहिए । इस खड्ग का विधिवत् पूजन करके, जो व्यक्ति अपने हाथ में धारण करता है, वह अठारह महाद्वीपों के साम्राज्य-सुख का उपभोग करता है । यह स्तोत्र मनुष्य, राजा तथा स्त्रियों को वश में करने वाला है । जो व्यक्ति इस स्तोत्र का तीस सहस्र बार पाठ करता है, उसे त्रैलोक्य को मोहित करने की सामर्थ्य प्राप्त हो जाती है ।

॥ इति श्रीरुद्रयामले दक्षिणकालिका खड्गमाला स्तोत्र समाप्तम् ॥

सुधाधारा काली स्तोत्र

महाकालरुद्र उवाच

ॐ अचिन्त्यामिताकारशक्तिस्वरूपा
प्रतिव्यक्त्यधिष्ठानसत्त्वैक मूर्तिः ।
गुणातीत निर्द्वन्द्वबोधैकगम्या,
त्वमेका परब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥१॥

अगोत्रा कृतित्वादनैकान्तिकत्वा-
दलक्ष्यागमत्वादशेषाकरत्वात् ।
प्रपञ्चालसत्वादनारम्भकत्वात्
त्वमेका परब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥२॥

असाधारणत्वादसम्बन्धकत्वा-
दभिन्नाश्रयत्वादनाकारकत्वात् ।
अविद्यात्मकत्वादनाद्यन्तकत्वात्
त्वमेका परब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥३॥

यदा नैव धाता न विष्णुर्न रुद्रो,
न कालो न वा पञ्चभूतानि नाशा ।
तदा कारणीभूत सत्त्वैकमूर्त्ति
स्त्वमेका परब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥४॥

न मीमांसका नैव कालादितर्का
न सांख्या न योगा न वेदान्तवेदाः ।
न देवा विदुस्ते निराकारभावं
त्वमेका परब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥५॥

न ते नामगोत्रे न ते सन्म मृत्यू
न ते धामचेष्टे न ते दुःख सौख्ये ।
न ते मित्र शत्रू न ते बन्ध मोक्षौ
त्वमेका परब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥६॥

न बाला न च त्वं वयस्था न वृद्धा
न च स्त्री द षण्ठः पुमान्नैव च त्वम् ।
न च त्वं सुरो नासुरो नो नरो वा
त्वमेका परब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥७॥
जले शीतलत्वं शुचौदाहकत्वं
विधौ निर्मलत्वं रवौ तापकत्वम् ।
तवैवाम्बिके यस्य कस्यापि शक्ति-
स्त्वमेका परब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥८॥
पपौ क्ष्वेडमुग्रं पुरा यन्महेशः
पुनः संहरत्यन्तकाजे जगच्च ।
तवैव प्रसादान्न च स्वस्य शक्त्या
त्वमेका परब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥९॥
करालाकृतीन्याननानि श्रयन्ती
भजंती करास्त्रादि बाहुल्य मित्थम् ।
जगत्पालनाया सुराणां बधाय
त्वमेका परब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥१०॥
रुवन्ती शिवाभिर्वहन्ती कपालं
जयन्ती सुरारीन् वधन्ती प्रसन्ना ।
नटन्ती पतन्ती चलन्ती हसन्ती
त्वमेका परब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥११॥
अपादापि वाताधिकं धावसि त्वं
श्रुतिभ्यां विहीनापि शब्दं शृणोषि ।
अनासापि जिघ्रस्य नेत्रापि पश्य-
स्वजिह्वापि नानारसास्वाद विज्ञा ॥१२॥
यथाबिम्बमेकं रवेरम्बरस्थं
प्रतिच्छायया यावदेकोदकेषु ।
समुद्भासतेऽनेकरूपं यथावत्
त्वमेका परब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥१३॥

यथा भ्रामयित्वा मृदं चक्रमध्ये
कुलालो विधत्ते शरावं घटं च।
महामोह यन्त्रेषु भूतान्यशेषान्
तथा मानुषांस्त्वं सृजस्यादि सर्गे ॥१४॥
यथा रङ्गरज्वर्कवृष्टिष्वकस्मा-
न्नृणां रूपदर्वीकराम्बुभ्रमः स्यात्।
जगत्यत्र तत्तन्मये तद्वदेव
त्वमेकैव तत्तन्नितत्तौ समस्तम् ॥१५॥
महाज्योति एकार सिंहासनं वत्
स्वकीयान् सुरान् वाहयस्युग्रमूर्ते।
अवष्टभ्य पद्भ्यां शिवं भैरवं च
स्थिता तेन मध्ये भवत्येव मुख्या ॥१६॥
कुयोगासने योगमुद्राभिनीतिः
कुगोमायुपोतस्य वालाननं च।
जगन्मातरादृक् तवापूर्वलीला
कथंकारमस्मद्विधैर्देवि गम्या ॥१७॥
विशुद्धपरा चिन्मयी स्वप्रकाशा-
मृतानन्दरूपा जगद्व्यापिका च।
तवेदृग्विधा या निजाकार मूर्तिः
किमस्माभिरन्तर्हृदि ध्यायितव्या ॥१८॥
महाघोर कालानल ज्वालज्वाला-
हितत्यन्तवासा महाट्टाट्टहासा।
जटाभारकाला महामुण्डमाला
विशाला त्वमीदृग् मयाध्यायशऽम्ब ॥१९॥
तपो नैव कुर्वन् वपुः सदयामि
व्रजन्नापि तीर्थं पदे खञ्जयामि।
पठन्नापि वेदान् वनि यापयामि
त्वदंघ्रिद्वयं मङ्गलं साधयामि ॥२०॥

तिरस्कुर्वतोऽन्यामारोपासनार्चं
परित्यक्तधर्माध्वरस्यास्य जन्तोः।
त्वदाराधनान्यस्त चित्तस्य किं मे
करिष्यन्त्यमी धर्मराजस्य दूताः ॥२१॥

न मन्ये हरिं नो विधातारमीशं
न वह्निं न ह्यर्कं न चेन्द्रादि देवान्।
शिवोदीरितानेक वाक्यप्रबन्धै-
स्त्वदर्चाविधानं विज्ञात्वम्ब मत्याम् ॥२२॥

नरा मां विनिन्दन्तु नाम
त्यजेद्वान्धवा ज्ञातयः सन्त्यजन्तु।
यमीया भटा नारके पातयन्तु
त्वमेका गतिर्मे त्वमेका गतिर्मे ॥२३॥

भावार्थ—हे माता ! तुम्हारे आकार, शक्ति और स्वरूप का परिमाण करने में कोई भी समर्थ नहीं है, वह अचिन्तनीय है। तुम प्रत्येक व्यक्ति में सत्व रूप में अधिष्ठित हो। तुम तीनों गुणों से परे, अद्वैतज्ञान से प्राप्त होने वाली तथा परब्रह्मरूप में ही सिद्ध हो ॥१॥

तुम गोत्र से रहित और आकार से रहित हो। तुम अस्थिर हो, तुम्हारी गति को लक्ष्य करने में कोई समर्थ नहीं है। तुम अखिल वस्तु की आकार हो, जगत् प्रपञ्च में तुम्हारा विकास नहीं है। तुम परब्रह्मरूप में ही सिद्ध हो ॥२॥

तुम सामान्य पदार्थों से भिन्न हो, तुम सबसे असम्बद्ध हो, साथ ही कोई भी पदार्थ तुमसे प्रथक् नहीं है। तुम निराकार, अविद्यारूप वाली, अनादि तथा अनन्त हो। तुम परब्रह्मरूप में ही सिद्ध हो ॥३॥

जब ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, काल, पञ्चभूत तथा दिक् कुछ भी नहीं थे, तब तुम्हीं सबके कारण रूप में सत्वमूर्त्ति से विद्यमान थीं। तुम परब्रह्मरूप में ही सिद्ध हो ॥४॥

तुम मीमांसकों से अविदित हो, काल, तर्क, सांख्य, योग, वेदान्त, वेद तथा देवतागण भी तुम्हरे निराकार रूप का वर्णन कर पाने में समर्थ नहीं हैं। तुम परब्रह्मरूप में ही सिद्ध हो ।।५।।

न तुम्हारा कोई नाम है, न गोत्र है, न जन्म है, न मृत्यु है, न घर है, न चेष्टाएं हैं, न दुःख-सुख है, न मित्र-शत्रु है और न बन्धन-मोक्ष ही हैं। तुम परब्रह्मरूप में ही सिद्ध हो ।।६।।

न तुम बाला हो, न वयस्का हो, न वृद्धा हो, न स्त्री हो, न नपुंसक हो और न पुरुष ही हो। न तुम देवता हो, न असुर हो और न मनुष्य हो। तुम परब्रह्मरूप में ही सिद्ध हो ।।७।।

हे अम्बिके ! जल में शीतलता, अग्नि में दाहकता, चन्द्रमा में निर्मलता तथा रवि में तप्तता के रूप में तुम्हीं हो। तुम्हीं सब पदार्थों की शक्ति हो। तुम परब्रह्मरूप में ही सिद्ध हो ।।८।।

पूर्वकाल में महादेवजी ने जो हलाहल विष का पान किया था तथा प्रलय काल में वे जो संसार का संहार-कार्य करते हैं, वह सब तुम्हारी प्रसन्नता से ही करते हैं, अपनी सामर्थ्य से नहीं करते। तुम परब्रह्म-रूप में ही सिद्ध हो ।।९।।

तुम विश्व का पालन तथा असुरों का संहार करने के लिए हाथ में अस्त्र-शस्त्र लिए रहती हो। तुम कराल वदना हो। तुम परब्रह्म-रूप में ही सिद्ध हो ।।१०।।

तुम महाचण्ड योगेश्वरी, गुह्यकाली, कराली, महाडायरी, अट्ट-हास करने वाली, ब्रह्माण्ड को उद्भासित करने वाली, चण्डिकामूर्त्ति तथा सबका पालन करने वाली हो। तुम परब्रह्मरूप में ही सिद्ध हो ।।११।।

तुम शिवामूर्त्ति से विकट-शब्द करने वाली, कपाल को धारण करने वाली, देव-शत्रुओं का वध करने वाली, प्रसन्न रहने वाली, नृत्य करने वाली तथा गिरते और चलते हुए हंसने वाली हो। तुम परब्रह्मरूप में ही सिद्ध हो ।।१२।।

तुम पद-विहीन होने पर भी वायु-वेग से भी अधिक वेग से दौड़ने वाली, कर्ण-विहीन होने पर भी सब शब्दों को सुनने वाली, नासिका-विहीन होने पर भी सब पदार्थों की गन्ध लेने वाली, नेत्र-विहीन होने पर भी सबको देखने वाली तथा जिह्वा-विहीन होने पर भी विभिन्न रसों का आस्वादन करने वाली हो ॥१३॥

जिस प्रकार एक ही सूर्यबिम्ब की छाया जल में प्रतिबिम्बित होकर विभिन्न जलाशयों में अनेक रूप वाली प्रतीत होती है, उसी प्रकार तुम भी एक होकर भी अनेक रूपों में प्रतिभासित होती हो। तुम परब्रह्मरूप में ही सिद्ध हो ॥१४॥

जिस प्रकार कुम्हार मिट्टी को चाक पर घुमाकर उसके द्वारा शकोरे, घट आदि विभिन्न वस्तुएं बनाता है, उसी प्रकार तुम भी सृष्टि के प्रारंभिक काल में पंचमहाभूतों को महामोहयंत्र में घुमाकर अनेक प्रकार के मनुष्यों की सृष्टि करती हो ॥१५॥

जिस प्रकार मनुष्य को रांगे में चांदी का, रस्सी में सांप का तथा सूर्य-किरणों में जल का भ्रम हो जाता है, उसी प्रकार इस संसार में भी एकमात्र तुम्हीं हो और तुम्हीं में प्रत्येक वस्तु का भ्रम होता रहता है। उन सब भ्रम युक्त वस्तुओं का अवसान होने पर एक मात्र तुम्हीं विद्यमान रहती हो ॥१६॥

तुम्हीं देवताओं को महाज्योतिमय सिंहासन पर बैठाने वाली हो और तुम्हीं उग्रमूर्ति धारण कर शिव भैरव को अपने दोनों पांवों से दबाकर अपूर्वरूप से शोभित होती हो ॥१७॥

हे जगन्माता ! कुयोगासन पर योगमुद्रा का अभिनय तथा कुत्सित शृगाल शावकों के क्षुद्रमुण्ड—ये सब तुम्हारी अपूर्व लीलाएं हैं। वे मुझ जैसे व्यक्ति की समझ में किस प्रकार आ सकती हैं ॥१८॥

तुम विशुद्धा, परा, चिन्मयी, स्वप्रकाश्य, अमृतानन्दरूपा तथा जगद्व्यापिनी हो। तुम्हारा ऐसा जो अपना रूप है, उसका ध्यान हम अपने हृदय में किस प्रकार करें ? ॥१९॥

हे अम्बा ! तुम महाघोर कालानल की शिखा के मध्य में महान् अट्टहास करती हुई जटाधारिणी, कृष्णवर्णा, मुण्डमाला धारण किये विशाल मूर्त्ति के रूप में स्थित हो। मैं तुम्हारे इसी स्वरूप का ध्यान करता हूं ।।२०।।

मैं तपस्या करके शरीर का क्षय नहीं करना चाहता, तीर्थों में भ्रमण करके अपने पांवों को लूला करना नहीं चाहता तथा वेद पाठ करते हुए जीवन-यापन करने की इच्छा भी मेरी नहीं है। मैं तो सभी मङ्गल कर्मों की साधना स्वरूप तुहारे दोनों चरणों की ही सेवा करता हूं ।।२१।।

मैं अन्य सब देवताओं की उपासना, अर्चना को छोड़कर, सब धर्मयज्ञों का परित्याग करके अपने मन को तुम्हारी ही आराधना में लगाये हुए हूं। धर्मराज के दूत मेरा क्या कर सकते हैं ? ।।२२।।

हे अम्बा ! मैं न हरि को मानता हूं, न ब्रह्मा को, न ईशान को मानता हूं, न वह्नि को, न सूर्य को मानता हूं और न इन्द्र आदि देवताओं को ही। मेरा तो शिव द्वारा कथित तन्त्र वाक्यों में एकान्तिक विश्वास है। उसी के परिणाम स्वरूप तुम्हारी अर्चना विधि मेरे मन में प्रविष्ट हो ।।२३।।

ॐ महाकाल रुद्रोदित स्तोत्रमेतत
सदाभक्तिभावेन यो ऽध्येति भक्तः ।
न चापन्न शोको न रोगो न मृत्यु
र्भवेत् सिद्धिरन्ते च कैवल्यलाभः ।।२५।।

भावार्थ—जो कोई भक्त महाकाल रुद्र द्वारा वर्णित इस स्तोत्र का भक्ति पूर्वक पाठ करता है, वह शोक, रोग एवं अकाल मृत्यु से मुक्ति पा लेता है। उसे सिद्धि प्राप्त होती है तथा अन्त में कैवल्य लाभ होता है ।।२५।।

इदं शिवायाः कथितं सुधाधाराख्यं स्तवम् ।
एतस्य सतताभ्यासात् सिद्धिः करतले स्थिता ।।२६।।

भावार्थ—इस सुधाधारा नामक शिवा स्तोत्र का जो व्यक्ति निरन्तर अभ्यास करता है, सिद्धि उसके करतलगत हो जाती है ॥२६॥

एतत् स्तोत्रं च कवचं पद्यं त्रितयमव्ययः ।
पठनीयं प्रयत्नेन नैमित्तिक समर्द्दणे ॥२७॥

भावार्थ—नैमित्तिक-अर्चन में इस स्तोत्र, कवच और निम्नलिखित पद—इन तीनों का प्रयत्न पूर्वक पाठ करना चाहिए—

सौम्येन्दीवरनीलनीरदघटा
प्रोद्दामदेहच्छटा ।
लास्योन्माद निनादमङ्गल चयैः
श्रोण्यन्तदोलज्जटा ॥
साकाली करवाल कालकलना
हन्त्वश्रियं चण्डिका ॥२८॥

कालीक्रोध कराल कालभयदोन्माद प्रमोदालया,
नेत्रोपान्त कृतान्तदैत्य निवहा प्रोद्दाम देहाभया ।
पायाद्वो जयकालिका प्रबलिका हूङ्कारघोरानना,
भक्तानामभयप्रदा विजयदा विश्वेशसिद्धासन ॥२९॥

करालोन्मुखी कालिका भीमकान्ता
कटिव्याघ्र चर्मावृता दानवान्ता ।
हूं हूं कड्मडीनादिनी कालिका तु
प्रसन्ना सदाः नः प्रसन्नान् पुनातु ॥३०॥

भावार्थ—जिनके शरीर की छटा नील-कमल तथा मेघ के समान है, उन्मत्तभाव से मङ्गलध्वनि पूर्वक नृत्य करते समय जिनके नितम्ब प्रदेश पर जटाएं झूलती रहती हैं, वे भीषण खड्ग को घुमाने वाली प्रचण्ड मूर्त्ति काली हमारे अशुभों का नाश करें ॥२८॥

जो क्रोधावेश में करालकाल को भी भय देने वाली भीषणमूर्त्ति धारण करके हर्ष में उन्मत्त हो उठती हैं, जो अपने कटाक्ष मात्र से ही दैत्यों को नष्ट कर देती हैं, जिनकी भयानक मूर्त्ति भक्तों को अभय

प्रदान करती है, हूंकार ध्वनि से युक्त जिनका मुखमण्डल अत्यन्त भीषण है, स्वयं विश्वेश्वर जिनके सिद्धासन हैं, जो अपने भक्तों को अभय तथा विजय देने वाली हैं, वे जयकाली हमारी रक्षा करें ॥२६॥

जो करालोन्मुखी कालिका देवी भीमकान्त रूप धरकर, कटि प्रदेश में व्याघ्र चर्म पहने दानवों का संहार करती हैं तथा हूं हूं कड-मड़ शब्द का उच्चारण करती हैं, वे कालिका देवी प्रसन्न होकर हम लोगों को सदैव प्रसन्न तथा पवित्र करती रहें ॥३०॥

॥इति श्रीमहाकालरुद्र विरचित सुधाधाराख्य काली स्तोत्रम् समाप्तम्॥

श्री काली कर्पूर स्तोत्रम्

कर्पूरंमध्यमान्त्यस्वरपरिरहितं
सेन्दुवामाक्षि युक्तं ।
बीजं ते मातरेतत्त्रिपुरहर बधु
त्रिःकृतं ये जपन्ति ॥
तेषां गद्यानि पद्यानि च मुख कुहरा-
दुल्लसन्त्येव वाचः ॥
स्वच्छन्दं ध्वान्तधाराधररुचि रुचिरे
सर्वसिद्धि गतानाम् ॥१॥

ईशानः सेन्दुवामश्रवणपरिगतो
बीजमन्यन्महेशि ।
द्वन्द्वं ते मन्दचेता यदि जपति जना
वार मेकं कदाचित् ॥
जित्वा वाचामधीशं धनदमपिचिरं
मोह यन्नम्बुजाक्षी ।
वृन्दं चन्द्रार्द्ध चूड़े प्रभवति स महा-
घोर बाणावतंसे ॥२॥

ईशोवैश्वानरस्थः शशधर विलसद्
वाम नेत्रेण युक्तो ।
बीजं ते द्वन्द्वमन्यद्विगलित चिकुरे
कालिके ये जपन्ति ॥
द्वेष्टारं घ्नन्ति ते च त्रिभुवनमपि ते
वश्यभावं नयन्ति ।
सृक्वद्वन्द्वास्त्रधाराद्वयधरवदने
दक्षिणे कालिके ति ॥३॥

ऊर्ध्वे वामे कृपाणं करकमलतले
छिन्नमुण्डं तथाधः ।
सव्ये चाभीर्वरं च त्रिजगदघहरे
दक्षिणे कालिके च ॥
जप्त्वैतन्नाम ये वा तव मनुविभवं
भावयन्त्येतदम्ब ।
तेषामष्टौ करस्थाः प्रकटितरदने
सिद्धयस्त्र्यम्बकस्य ॥४॥
वर्गाद्यं वह्निसंस्थं विधुरति वलितं
तत्त्रयं कूर्च युग्मं ।
लज्जाद्वन्द्वं च पश्चात् स्मितमुखितदध-
ष्ठ द्वयं योजयित्वा ॥
मातर्ये ये जपन्ति स्मरहरमहिले
भावयन्तः वरूपं ॥
ते लक्ष्मी लास्य लीला कमल दलदृशः
कामरूपा भवन्ति ॥५॥
प्रत्येकं वा त्रयं वा द्वयमपि च परं
वीजमत्यन्त गुह्यं ।
त्वन्नामना योजयित्वा सकलमपि सदा
भावयन्तो जपन्ति ॥
तेषां नेत्रारविन्दे विहरति कमला
ववत्रशुभ्रांशुबिम्बे ।
वाग्देवी देव मुण्डस्रगतिशयलसत्
कण्ठि पीनस्तनाढये ॥६॥
गतासूनां बाहु प्रकरकृतकाञ्ची परिलस-
न्नितम्बां दिग्वस्त्रां त्रिभवन विधात्रीं त्रिनयनाम् ।
श्मशानस्थे तल्पे शवहृदि मकालसुरत-
प्रसक्तांत्वां ध्यायन् जननि जडचेता अपि कविः ॥७॥

शिवाभिर्घोराभिः शवनिवहमुण्डास्थिनिकरैः,
परं सङ्कीर्णायां प्रकटित चितायां हरवधूम्।
प्रविष्टां सन्तुष्टामुपरिसुरतेनाति युवती,
सदात्वां ध्यायन्ति क्वचिदपि न तेषां परिभवः ॥८॥

वदामस्ते किं वा जननि वयमुच्चैर्जडधियो
न धाता नापीशो हरिरपि नतेवेत्ति परयम्।
तथापि त्वद्भक्तिर्मुखरयति चास्माकमसिते,
तदेतत् क्षन्तव्यं न खलु पशुरोषः समुचितः ॥९॥

समन्तादापीनस्तनजघनधृग्यौवनवती,
रतासक्तो नक्तं यदि जपति भक्तस्तव मनुम्।
विवासास्त्वां ध्यायन् गलित चिकुरस्तस्त वशगाः,
समस्ताः सिद्धौघा भुवि चिरतरं जीवति कविः ॥१०॥

समाः सुस्थीभूतां जपति विपरीतां यदि सदा,
विचिन्त्य त्वां ध्यायन्नतिशयमहाकाल सुरताम्।
तदा तस्य क्षौणीतल विहारमाणस्य विदुषः,
कराम्भोजे वश्या हरवधु महासिद्धि निवहाः ॥११॥

प्रसूते संसारं जननि जगतीं पालयति च,
समस्तं क्षित्यादि प्रलय समये संहरति च।
अतस्त्वं धातापि त्रिभुवनपतिः श्रीपतिरहो,
महेशोऽपि प्रायः सकलमपि किं स्तौमि भवतीं ॥१२॥

अनेके सेवन्ते भवदधिक गीर्वाणनिवहान्,
विमूढास्ते मातः किमपि नहि जानन्ति परमम्।
समाराध्यामाद्यां हरिहरविरिञ्च्यादि विबुधैः,
प्रपन्नोऽस्मि स्वैरं रतिरसमहानन्द निरताम् ॥१३॥

धरित्री कीलालं शुचिरपि समीरोऽपि गगनं,
त्वमेका कल्याणजी गिरिशरमणी कालि सकलम्।

स्तुतिः का ते मातस्तव करुणया मामगतिकं,
प्रसन्ना त्वं भूया भवमनु न भूयान्मम जनुः ॥१४॥

श्मशानस्थः सुस्थो गलित चिकुरो दिक्पटधरः,
सहस्रस्त्वर्काणां निजगलितवीर्येण कुसुमम् ।
जपंस्त्वप्रत्येकं मनुमपि तव ध्यान निरतो,
महाकालि स्वैरं स भवति धरित्रीपरिवृढ़ः ॥१५॥

गृहे सम्मार्जन्या परिगलित वीर्यं हि चिकुरं,
समूलं मध्याह्ने वितरति चितायां कुजदिने ।
समुच्चार्य प्रेम्ना मनुपपि सकृत् कालि सततं,
गजारूढो याति क्षिति परिवृढ़ः सत्कविवरः ॥१६॥

सुपुष्पैराकीर्णं कुसुमधनुषो मन्दिर महो,
पुरोध्यायं ध्यायं यदि जपति भक्तस्तव मनुम् ।
स गंधर्व श्रेणीपतिरपि कवित्वामृतनदी-
नदीनः पर्यन्ते · परमपदलीनः प्रभवति ॥१७॥

त्रिपञ्चारे पीठ शवशिवहृदि स्मेरवदनां,
महाकालेनोच्चैर्मदनरसलावण्यनियताम् ।
समासक्तो नक्तं स्वयमपि रतानन्दनिरतो,
जनो यो ध्यायेत्त्वामयि जननि स स्यात् स्मरहरः ॥१८॥

सलोमस्थि स्वैरं पललमपि मार्जारमसिते,
परञ्चौष्ट्रं मैषं नरमहिष योश्छागमपि वा ।
बलिं ते पूजायामपि वितरतां मर्त्यवसतां,
सतां सिद्धिः सर्वा प्रतिपदमपूर्वा प्रभवति ॥१९॥

वशी लक्षं मन्त्रं प्रजापति हविष्याशनरतो
दिवा मातर्युष्मच्चरण युगलध्यान निपुणः ।
परं नक्तं नग्नो निधुवनविनोदेन च मनुं,
छवेल्लक्षं स स्यात् स्मरहर समानः क्षितितले ॥२०॥

इदं स्तोत्रं मातस्तव मनुसमुद्धारण जनुः,
स्वरूपाख्यं पादाम्बुजयुगलपूजाविधियुतम् ।
निशार्द्धं वा पूजासमयमधि वा यस्तु पठति,
प्रलापस्तस्यापि प्रसरति कवित्वामृतरसः ॥२१॥

कुरङ्गाक्षीवृन्दं तमनुसरसि प्रेमतरलं,
वशस्तस्य क्षौणीपतिरपि कुबेरप्रतिनिधिः ।
रिपुः कारागारं कलयति च तं केलिकलया,
चिरं जीवन्मुक्तः स भवति च भक्तः प्रतिजनुः ॥२२॥

॥इति श्री महाकाल विरचितं स्वरूपाख्यं श्री काली कर्पूर स्तोत्रम् समाप्तम् ॥

श्री काली स्तव

नमामि कृष्ण रूपिणीं कृष्णाङ्ग्यष्टिधारिणीम् ।
समग्रतत्त्वसागरमपारपारगह्वराम् ॥१॥
शिवाप्रभां समुज्ज्वलां स्फुरच्छशाङ्कशेखराम् ।
ललाटरत्नभास्करां जगत्प्रदीप्तिभास्कराम् ॥२॥
महेन्द्रकश्यपार्चितां सनत्कुमारसंस्तुताम् ।
सुरासुरेन्द्रवन्दितां यथार्थनिर्मलाद्भुताम् ॥३॥
अतर्क्यरोचिरूर्जितां विकारदोषवर्जिताम् ।
मुमुक्षुभिर्विचिन्तितां विशेषतत्त्वसूचिताम् ॥४॥
मृतास्थिनिर्मितस्रजां मृगेन्द्रवाहनाग्रजाम् ।
सुशुद्धतत्त्वतोषणां त्रिवेदपारभूषणाम् ॥५॥
भुजङ्गहारहारिणीं कपालखण्डधारिणीम् ।
सुधार्मिकौपकारिणीं सुरेन्द्रवैरिघातिनीम् ॥६॥
कुठारपाशचापिनीं कृतान्तकामभेदिनीम् ।
शुभां कपालमालिनीं सुवर्णकल्पशाखिनीम् ॥७॥
श्मशानभूमि वासिनीं द्विजेन्द्रमौलिभाविनीम् ।
तमोऽन्धकारयामिनीं शिवस्वभाव कामिनीम् ॥८॥
सहस्रसूर्य्यराजिकां धनञ्जयोग्रकारिकाम् ।
सुशुद्ध काल कन्दलां सुभृङ्गवृन्दमञ्जुलाम् ॥९॥
प्रजायिनीं प्रजावतीं नमामि मातरं सतीम् ।
स्वकर्मकारणे गतिं हरप्रियाञ्च पार्वतीम् ॥१०॥
अनन्तशक्तिकान्तिदां यशोऽर्थभुक्तिमुक्तिदाम् ।
पुनः पुनर्जगद्धितां नमाम्यहं सुरार्चिताम् ॥११॥
जयेश्वरि त्रिलोचने प्रसीद देवि पाहिमाम् ।

जयन्ति ते स्तुवन्ति ये शुभं लभन्त्यमोक्षतः ॥१२॥
सदैव ते हतद्विषः परं भवन्ति सज्जुषः।
जराः परे शिवेऽधुना प्रसाधि मां करोमि किम् ॥१३॥
अतीव मोहितात्मनो वृथा विचेष्टितस्य मे.
कुरु प्रसादितं मनो यथास्मि जन्मभञ्जनः ॥१४॥
तथा भवन्तु तावका यथैव घोषितालकाः।
इमां स्तुतिं ममेरितां पठन्ति कालिसाधकाः॥
न ते पुनः सुदुस्तरे पतन्ति मोहगह्वरे ॥१५॥

भावार्थ—मैं कृष्णरूपा कालिका को नमस्कार करता हूं, उनकी अङ्गयष्टि कृष्णवर्ण की है। वे समस्त तत्त्वों की सागर स्वरूपा हैं। वे अपारा हैं अर्थात् उन्हें सहज ही प्राप्त नहीं किया जा सकता है। वे पारा हैं अर्थात् भक्तजन उन्हें सरलता से प्राप्त कर लेते है। वे गह्वरा हैं अर्थात् बड़ी दुर्विज्ञेया हैं ॥१॥

वे कल्याण स्वरूपा, उज्ज्वला तथा मस्तक पर प्रकाशित चन्द्रमा को धारण करने वाली हैं। वे सबके ललाट रूपी रत्न को प्रकाशित करने वाली हैं और वे ही सम्पूर्ण संसार को प्रकाशित करने वाली सूर्य के समान हैं ॥२॥

वे महेन्द्र तथा कश्यप द्वारा पूजित हैं, वे सनत्कुमार द्वारा संस्तुत हैं, वे देवता तथा दानवों से वन्दित हैं और वे यथार्थतः निर्मला एवं अद्भुता हैं ॥३॥

उन्हें तर्क द्वारा नहीं समझा जा सकता। वे ज्योतिः रूपा, ऊर्जिता (ओज को प्रदान करने वाली), विकार तथा दोषों से रहित, मोक्षार्थियों द्वारा चिन्तन की जाने वाली तथा विशेष तत्त्वज्ञान द्वारा पहचानी जाने वाली हैं ॥४॥

उनकी माला मृत-शरीर की हड्डियों से निर्मित है, उनका वाहन सिंह है, वे अग्रजा हैं अर्थात् उनका जन्म सबसे पहले हुआ है, वे

विशुद्ध तत्त्व होने से प्रसन्न होने वाली हैं और वे तीनों वेदों से परे होकर सुशोभित हैं ॥५॥

वे सर्पों का हार धारण करने वाली, हाथ में कपालखण्ड को धारण करने वाली, धार्मिकों का उपकार करने वाली तथा देवताओं के शत्रुओं का नाश करने वाली हैं ॥६॥

वे कुठार, पाश तथा धनुष को धारण किये हुए हैं। वे यम की कामना अर्थात् मृत्यु का निवारण करने वाली हैं। वे शुभ करने वाली, कपाल-माला को धारण करने वाली तथा सुन्दर वर्ण वाली हैं ॥७॥

वे श्मशानभूमि में निवास करने वाली, श्रेष्ठ ब्राह्मणों द्वारा चिन्तन की जाने वाली, तमोऽन्धकार रूपिणी रात्रि के समान तथा कल्याणकर स्वभाव वाली कामिनी हैं ॥८॥

वे सहस्त्रों सूर्य के समान उज्ज्वलस्वरूप वाली, धनंजय को उग्र करने वाली, विशुद्ध काल की मूलभूता तथा सुन्दर भ्रमरों के समान मनोरम वर्ण वाली हैं ॥९॥

वे प्रजा को उत्पन्न करने वाली तथा पालन करने वाली हैं। ऐसी सती माता को मैं नमस्कार करता हूं। वे अपने कर्म के कारण गति स्वरूपा तथा शिवजी की प्रिया पार्वती हैं ॥१०॥

वे अनन्त शक्ति तथा कान्ति को देने वाली, यश, धन, भोग तथा मोक्ष को देने वाली, संसार का बारम्बार कल्याण करने वाली तथा देवताओं द्वारा पूजित हैं—मैं उन्हें नमस्कार करता हूं ॥११॥

हे ईश्वरी ! तुम्हारी जय हो। हे त्रिलोचने ! तुम मुझ पर कृपा करो। हे देवि ! मेरी रक्षा करो। जो लोग तुम्हारी स्तुति करते हैं, उन्हें विजय प्राप्त होती है, वे कल्याण तथा मोक्ष को पा लेते हैं ॥१२॥

उनके शत्रुओं का सदैव नाश होता है और वे यशस्वी होते हैं। हे शिवे ! तुम मेरी उन्नति करो। मैं क्या करूं ॥१३॥

मैं अत्यधिक मोह में ग्रस्त हूं, मेरे सभी प्रयास व्यर्थ हो रहे हैं। तुम मुझ पर प्रसन्न होओ, ताकि मैं जन्म के बन्धन से मुक्त हो सकूं ॥१४॥

तुम्हारे सब भक्त वैसे ही हों, जैसा कि घोषित है। मेरी इस स्तुति का भगवती काली के जो भी उपासक पाठ करते हैं, वे फिर अत्यन्त गहरे मोह के गड्ढे में नहीं गिरते ॥१५॥

॥ इति श्रीब्रह्मकृत् कालीस्तवः समाप्तम् ॥

श्री कालिका स्तवन

अयि गिरि नन्दिनि नन्दित मेदिनि,
विश्व विनोदिनि नन्दिनुते।
गिरिवर विन्ध्यशिरोधिनिवासिनि,
विष्णु विलासिनि जिष्णुनुते ॥
भगवति हे शितकण्ठ कुटुम्बिनि,
भूरि कुटुम्बिनि भूत कृते।
जय जय हे महिषासुर मर्दिनि,
रम्य कपर्दिनि शैल सुते ॥
अयि जगदम्ब कदम्ब वन प्रिय-
वासिनि वासिनि वासरते।
शिखर शिरोमणि तुङ्ग हिमालय,
शृङ्गनिजालय मध्यगते ॥
मधुमधुरे मधुरे मधुरे,
मधुकैटभ भञ्जनि रासरते।
जय जय हे महिषासुर मर्दिनि,
रम्य कपर्दिनि शैलसुते ॥
सुर वर वर्षिणि दुर्धरधर्षिणि,
दुर्मुखमर्षिणि घोषरते।
दनुजन रोषिणि दुर्मुखशोषिणि,
भवभयमोचनि सिन्धु सुते ॥
त्रिभुवन पोषिणि शङ्कर तोषिणि
किल्विषमोचनि हर्षरते।
जय जय हे महिषासुर मर्दिनि,

रम्य कर्पादिनि शैलसुते ॥
अयि शतखण्ड विखण्डितरुण्ड-
वितुण्डित शुण्ड गजाधिपते ।
रिपुगजदंडविदारण खंड,
पराक्रम चण्ड मठाधिपते ॥
जय जय हे महिषासुर र्मादनि,
रम्य कर्पादिनि शैलसुते ॥
अयि सुमन: सुमन: सुमन:,
सुमन: सुमनोरम कान्तियुते ।
श्रुति रजनी रजनी रजनी,
रजनी रजनीकर चारुयुते ॥
सुनयन विभ्रमरभ्रमरभ्रभर
भ्रमरभ्रमराधिपते ।
जय जय हे महिषासुर र्मादनि,
रम्य कर्पादिन शैलसुते ॥
सुरललना प्रतिथे वितथे,
वितथेनियमोत्तर नृत्यरते ।
धुधुकट धुङ्गड़धुङ्गड़दायक,
दानकुतूहल गान रते ॥
धुंकुट धुंकुट धिद्धिमितिध्वनि,
धीर मृतङ्ग निनादरते ।
जय जय हे महिषासुरर्मादनि,
रम्य कर्पादनि शैल सुते ॥
जय जय जाप्यजये जयशब्द
परिस्तुति तत्पर विश्वनुते ।
झिणि झिणि झिणि झिणि झिंकृत नूपुर,
झिञ्जित मोहित मूत रते ॥
धुनटित नाटार्द्धनटी नट नायक,

नायक नाटितनुपुरुते ।
जय जय हे महिसाषुर मर्दिन,
रम्य कपर्दिनि शैलसुते ॥
महित महाहवमल्लिम तल्लिम,
दल्लित वल्लज भल्लरते ।
विरचित पल्लिक पुल्लिक मल्लिक,
झल्लिकभल्लिक वर्गयुते ॥
कृत कृत कुल्ल समुल्लस तारण,
तल्लिज वल्लव साललते ।
जय जय हे महिषासुर मर्दिनि,
रम्य कपर्दिनि शैल सुत ॥

यामाता मधुकैटभ प्रमथिनी या माहिषोन्मूलनी ।
या धूम्रेक्षण चण्डमुण्ड मथिनी या रक्तबीजाशनी ॥
शक्ति: शुम्भ निशुम्भ दैत्य दलिनी या सिद्धि लक्ष्मी परा ।
सा चण्डी नवकोटि शक्ति सहिता मां पातु विश्वेश्वरी ॥

श्री कालिकाष्टक

ध्यान

गलद्रक्तमुण्डावलीकण्ठमाला,
महाघोररावा सुदंष्ट्रा कराला ।
विवस्त्रा श्मशानालया मुक्तकेशी,
महाकालकामाकुला कालिकेयम् ।।१।।

भुजेवामयुग्मे शिरोसिं दधाना,
वरं दक्षयुग्मेभयं वै तथैव ।
सुमध्यापि तुङ्गस्तना भारनम्रा,
लसद्रक्तसृक्कद्वया सुस्मितास्या ।।२।।

शवद्वन्द्वकर्णावतंसा सुकेशी,
लसत्प्रेतपाणिं प्रयुक्तैककांची ।
शवाकारमञ्चाधिरूढा शिवाभि-
श्चतुर्दिक्षु शब्दायमानाभिरेजे ।।३।।

भावार्थ—वे भगवती काली अपने कण्ठ में रक्त टपकते हुए मुण्डों की माला को पहने हैं, वे अत्यन्त घोर शब्द कर रही हैं, उनकी सुन्दर दाढ़ें भयानक हैं, वे वस्त्रहीना हैं, वे श्मशान में निवास करती हैं, उनके केश बिखरे हुए हैं और वे महाकाल के साथ कामातुरा हो रही हैं ।।१।।

वे अपने दोनों बाएं हाथों में नरमुण्ड तथा खड्ग को धारण किये हैं तथा दोनों दाएं हाथों में वर तथा अभयमुद्रा लिए हैं। वे सुन्दर कटि वाली, उत्तुङ्गस्तनों के भार से झुकी हुई सी, दो रक्तमाल्लाओं से सुशोभित तथा मधुर-मुस्कान से युक्त हैं ।।२।।

उनके कानों में दो शवरूपी आभूषण हैं, उनके केश सुन्दर हैं, वे शवों के हाथों से सुशोभित करधनी को धारण किये हुए हैं, वे शव

रूपी मञ्च पर आरूढ़ हैं तथा उनके चारों ओर शिवाओं का शब्द गूंज रहा है ॥३॥

स्तुति

विरंच्यादिदेवास्त्रयस्ते गुणास्त्रीम्,
समाराध्य कालीं प्रधाना बभूवुः ।
अनादिं सुरादिं मखादिं भवादिं,
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥१॥

जगन्मोहिनीयम् तु वाग्वादिनीयम्,
सुहृद्पोषिणी शत्रुसंहारणीयम् ।
वचस्तम्भनीयम् किमुच्चाटनीयम्,
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥२॥

इयं स्वर्गदात्री पुनः कल्पवल्ली,
मनोजाँस्तु कामान्यथार्थं प्रकुर्यात ।
तथा ते कृतार्था भवन्तीति नित्यं,
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥३॥

सुरापानमत्ता सुभक्तानुरक्ता,
लसत्पूतचित्ते सदाविर्भवस्ते ।
जपध्यान पूजासुधाधौतपंका,
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥४॥

चिदानन्दकन्दं हसन्मन्दमन्दं,
शरच्चन्द्र कोटिप्रभापुञ्जबिम्बम् ।
मुनीनां कवीनां हृदि द्योतयन्तं,
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥५॥

महामेघकाली सुरक्तापि शुभ्रा,
कदाचिद्विचित्रा कृतिर्योगमाया ।
न बाला न वृद्धा न कामातुरापि,
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥६॥

क्षमस्वापराधं महागुप्तभावं,
मयालोकमध्ये प्रकाशीकृतं यत् ।
तव ध्यानपूतेन चापल्यभावात्,
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ।।७।।

यदि ध्यान युक्तं पठेद्यो मनुष्य
स्तदा सर्वलोके विशालो भवेच्च ।
गृहे चाष्टसिद्धिर्मृते चापि मुक्ति-
स्वरूपं त्वनीयं न विन्दन्ति देवाः । ८।।

भावार्थ—हे देवि ! तुम्हारे त्रिगुणात्मक रूप से उत्पन्न ब्रह्मा आदि तीनों देवता तुम्हारी ही आराधना करके प्रधान हुए हैं। तुम्हारा स्वरूप अनादि, सुरादि तथा विश्व का मूलभूत है, उसे देवता भी नहीं जानते हैं ।।१।।

तुम्हारी मूर्त्ति संसार को मोहित करने वाली, वाणी द्वारा स्तुति किये जाने योग्य, सुहृदों का पालन करने वाली, शत्रुओं का संहार करने वाली, वचन का स्तम्भन करने वाली तथा दुष्टों का उच्चाटन करने वाली है, तुम्हारे इस स्वरूप को देवता भी नहीं जानते हैं।।२।।

यह मूर्त्ति स्वर्ग को देने वाली, कल्पलता के समान और भक्तों की मनोकामनाओं को पूर्ण करने वाली है, जिससे वे सदैव कृतार्थ बने रहते हैं। तुम्हारे इस स्वरूप को देवता भी नहीं जानते हैं ।।३।।

तुम सुरापान से मस्त रहती हो तथा अपने भक्तों पर कृपा बखेरती हो, जप-ध्यान-पूजा रूपी अमृत से निर्मल तथा पवित्र हृदय में तम्हारा आविर्भाव सुशोभित होता है। तुम्हारे इस स्वरूप को देवता भी नहीं जानते हैं ।।४।।

तुम चिदानन्द की मूल, मन्द-मन्द मुस्कराने वाली, करोड़ों शरद् चन्द्रमाओं की प्रभा से युक्त मुख वाली एवं मुनियों तथा कवियों के हृदय को प्रकाशित करने वाली हो। तुम्हारे इस स्वरूप को देवता भी नहीं जानते हैं ।।५।।

तुम महामेघों के समान कृष्णवर्णा, रक्तवर्णा तथा शुभ्रवर्णा भी हो। तुम कभी-कभी विचित्र आकृति को धारण करने वाली योगमाया हो। तुम न बाला हो, न वृद्धा हो और न कामातुरा हो। तुम्हारे स्वरूप को देवता भी नहीं जानते हैं ॥६॥

मैंने तुम्हारे ध्यान से पवित्र चापल्यभाव से तुम्हारे अत्यन्त गुप्त भाव को जो संसार में प्रकट कर दिया है, उस अपराध के लिए तुम मुझे क्षमा करो। तुम्हारे स्वरूप को देवता भी नहीं जानते हैं ॥७॥

जो मनुष्य ध्यान युक्त होकर इस अष्टक का पाठ करता है, वह सम्पूर्ण संसार में उच्चपद प्राप्त करता है। उसके घर में आठों सिद्धियां बनी रहती हैं तथा मृत्यु के पश्चात् मुक्ति प्राप्त होती है। हे देवि! तुम्हारे स्वरूप को देवता भी नहीं जानते हैं ॥८॥

॥ इति श्री मच्छङ्कराचार्य विरचितं श्रीकालिकाष्टम् समाप्तम् ॥

श्री काली शतनाम् स्तोत्र

श्रृणु देवि जगद्वन्द्ये स्तोत्रमेतदनुमत्तमम् ।
पठनाच्छ्रवणादस्य सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ॥
असौभाग्य प्रशमनं सुखसम्पद्विवर्धनम् ।
अकालमृत्युहरणं सर्वापद्विनिवारणम् ॥
श्रीमदाद्या कालिकायाः सुखसान्निध्यकारणम् ।
स्तवस्यास्य प्रसीदेन त्रिपुरारिरहं प्रिये ॥
स्तोत्रस्याय ऋषिर्देवि ! सदाशिव उदाहृतः ।
छन्दो ऽनुष्टुप्देवताद्या कालिका परिकीर्तिता ॥
धर्मकामार्थमोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्तितः ॥

संक्षिप्त भावार्थ—हे देवि ! तुम उत्तम स्तोत्र को सुनो, जिसे पढ़ने तथा सुनने मात्र से ही मनुष्य सब सिद्धियों का स्वामी हो जाता है। यह स्तोत्र दुर्भाग्य को नष्ट करने वाला, सुख-सम्पत्ति को बढ़ाने वाला, अकाल मृत्यु को दूर करने वाला तथा समस्त विपत्तियों का निवारण करने वाला है। इस स्तोत्र के पाठ से श्री आद्याकालो की कृपा द्वारा सुख की प्राप्ति होती है तथा इससे शिवजी भी प्रसन्न होते ।

इस स्तोत्र के ऋषि 'सदाशिव' हैं, छन्द 'अनुष्टुप' है, देवता आद्याकाली हैं तथा धर्म, काम, अर्थ और मोक्ष की प्राप्ति में इसका विनियोग है।

स्तोत्र

ह्रीं काली श्रीं कराली च क्रीं कल्याणी कलावती ।
कमला कलिदर्पघ्नी कपर्दीश कृपान्विता ॥
कालिका कालमाता च कालानल समद्युतिः ।

कर्पादिनी करालास्या करुणामृतसागरा ॥
कृपामयी कृपाधारा कृपापारा कृपागमा ।
कृशानुः कपिला कृष्णा कृष्णानन्दविवर्द्धिनी ॥
कालरात्रिः कामरूपा कामपाश विमोचिनी ।
कादम्बिनी कलाधारा कलिकल्मषनाशिनी ।
कुमारी पूजन प्रीता कुमारी पूजकाल्या ।
कुमारीभोजनानन्दा कुमारीरूपधारिणी ॥
कदम्बवनसञ्चारा कदम्बवनवासिनी ।
कदम्बपुष्पसन्तोषा कदम्बपुष्पमालिनी ॥
किशोरी कलकण्ठा च कलनादनिनादिनी ।
कादम्बरीपानरता तथा कादम्बरीप्रिया ॥
कपालपात्रनिरता कंकालमाल्यधारिणी ।
कमलासनसन्तुष्टा कमलासनवासिनी ॥
कमलालयमध्यस्था कमलामोदमोदिनी ।
कलहंसगतिः क्लैव्यनाशिनी कामरूपिणी ॥
कामरूपकृतावासा कामपीठविलासिनी ।
कमनीया कल्पलता कमनीयविभूषणा ॥
कमनीयगुणाराध्या कोमलाङ्गी कृशोदरी ।
कारणामृत सन्तोषा कारणानन्दसिद्धिदा ॥
कारणानन्दजापेष्टा कारणार्चनहर्षिता ।
कारणार्णवसम्मग्ना कारणव्रतपालिनी ॥
कस्तूरीसौरभा मोदा कस्तूरी तिलकोज्ज्वला ।
कस्तूरीपूजनरता कस्तूरीपूजनप्रिया ॥
कस्तूरीदाहजननी कस्तूरीमृगतोषिणी ।
कस्तूरीभोजनप्रीता कर्पूरामोदमोदिता ॥
कर्पूरमालाभरणा कर्पूरचदनोक्षिता ।
कर्पूरकारणाह्लादा कर्पूरामृतपायिनी ॥
कर्पूर सागरस्नाता कर्पूरसागरालया ।

कूर्चबीजजपप्रीता कूर्चजापपरायणा ॥
कुलीना कौलिकाराध्या कौलिकप्रियकारिणी ।
कुलाचारा कौतुकिनी कुलमार्ग प्रदर्शिनी ॥
काशीश्वरी कष्टहर्त्री काशश्विरदायिनी ।
काशीश्वरीकृतामोदा काशीवरमनोरमा ॥
कलमञ्जीरचरणा क्वणत्काञ्चीविभूषणा ।
काञ्चनाद्रिकृतागारा काञ्चनाचल कौमुदी ॥
कामबीजजपानन्दा कामबीजस्वरूपिणी ।
कुमतिघ्नी कुलीनार्तिनाशिनी कुल कामिनी ॥
क्रीं ह्रीं श्रीं मन्त्रवर्णेन कालकण्टकघातिनी ॥

भावार्थ—उक्त स्तोत्र में काली के ककारादि शतनामों का वर्णन किया गया है।

इत्याद्याकालिकादेव्याः शतनाम प्रकीर्तितम् ।
ककारकूटघटितम् कालीरूप स्वरूपकम् ॥
पूजाकाले पठेद्यस्तु कालिकाकृतमानसः ।
मन्त्रसिद्धिर्भवेदाशु तस्य काली प्रसीदात ॥
बुद्धि विद्या च लभते गुरोरादेशमात्रतः ।
धनवान् कीर्तिमान् भूयाद्दानशीलो दयान्वितः ॥
पुत्रपौत्रसुखैश्वर्यमोदते साधको भुवि ।
भौमावास्या निशाभागेमपञ्चक समन्वितः ॥
पूजयित्वा महाकालीमाद्यां त्रिभुवनेश्वरीम् ।
पठित्वा शतनामानि साक्षात्कालीमयो भवेत् ॥
नासाध्य विद्यते तस्य त्रिषु लोकेषु किञ्चन ।
विद्यायां वाक्पतिः साक्षात् धने धनपतिर्भवेत् ॥
समुद्र इव गाम्भीर्ये बले च पवनोपमः ।
तिग्मांशुरिव दुष्प्रक्ष्यः शशिवच्छुभदर्शनः ॥
रूपे मूर्तिधार कामी योषिता हृदयङ्गमः ।

सर्वत्र जयमाप्नोति स्तवस्यास्य प्रसादतः ॥
यं यं कामं पुरस्कृत्य स्तोत्रमेतदुदीरयेत् ।
तं तं काममवाप्नोति श्रीमदाद्याप्रसादतः ॥
रणे राजकुले द्यूते विवादे प्राणसंकटे ।
दस्युग्रस्ते ग्रामदाहे सिंहव्याघ्रावृते तथा ॥
अरण्ये प्रान्तरे दुर्गे ग्रहराज भये ऽपि वा ।
ज्वरदाहे चिरव्याधौ महारोगादि संकुले ॥
बालग्रहादि रोगे च तथा दुःस्वप्नदर्शने ।
दुस्तरे सलिले वापि पोते वातविपद्गते ॥
विचिन्त्य परमां मायामाद्यां कालीं परात्पराम् ।
यः पठेच्छतनामानि दृढ़भक्तिसमन्वितः ॥
सर्वापद्भ्यो विमुच्येत देवि सत्यं न संशयः ।
न पापेभ्यो भयं तस्य न रोगेभ्यो भयं क्वचित् ॥
सर्वत्र विजयस्तस्य न कुत्रापि पराभवः ।
तस्यदर्शनमात्रेण पलायन्ते विपद्गणाः ॥
स वक्ता सर्वशास्त्राणां स भोक्ता सर्वसम्पदाम् ।
स कर्ता जाति धर्माणां ज्ञातीनां प्रभुरेव सः ॥
वाणी तस्य वसेद्वक्त्रे कमला निश्चला गृहे ।
तन्नाम्ना मानवाः सर्वे प्रणमन्ति ससम्भ्रमा ॥
दृष्ट्या तस्य तृणायन्ते ह्यणिमाद्यष्टसिद्धयः ।
आद्याकाली स्वरूपाख्यं शतनाम प्रकीर्तितम् ॥
अष्टोत्तरशतावृत्या पुरश्चयस्यि गीयते ।
पुरस्क्रियान्वितं स्तोत्रं सर्वाभीष्टफलप्रदम् ॥
शतनामस्तुतिमिमामाद्याकाली स्वरूपिणीम् ।
पठेद्वा पाठयेद्वापि शृणुयाच्छ्रावयेदपि ॥
सर्वपापविनिर्मुक्तो ब्रह्मसायुज्यमाप्नुयात् ॥

भावार्थ—यह आद्याकाली देवी के ककारादि शतनाम काली के ही स्वरूप हैं। भगवती काली का हृदय में ध्यान करते हुए पूजा के

समय इन नामों का पाठ करने से मन्त्र की सिद्धि शीघ्र होती है तथा काली देवी प्रसन्न होती हैं। ऐसा व्यक्ति गुरु के आदेश मात्र से ही बुद्धि तथा विद्या को प्राप्त कर लेता है। वह धनवान्, कीर्तिमान्, दानी, दयालु, पुत्र-पौत्र-सुख तथा ऐश्वर्य से सम्पन्न होकर पृथ्वी पर प्रसन्नता पूर्वक विचरण करता है।

मङ्गलवार की अमावास्या की रात्रि में पंचमकार द्वारा भुवनेश्वरी आद्याकाली का पूजन करके इस शतनाम स्तोत्र का पाठ करने वाला व्यक्ति साक्षात काली के समान ही हो जाता है। तीनों लोकों में उसके लिए कुछ भी असाध्य नहीं रह जाता। वह विद्या में वाक्पति, धन में धनपति, गंभीरता में समुद्र तथा बल में पवन के समान हो जाता है। वह सूर्य के समान प्रकाशवान् तथा चन्द्रमा के समान शुभ-दर्शन होता है। वह कामदेव के समान सुन्दर स्वरूप प्राप्त करके स्त्रियों के हृदय में निवास करता है। इस स्तव के प्रताप से उसे सर्वत्र विजय प्राप्त होती है। वह जिस किसी भी कामना को करता है भगवती आद्याकाली की कृपा से वह पूर्ण होती है। युद्ध, राजकुल, द्यूत, विवाद, प्राण सङ्कट, दस्यु-ग्रस्तता, ग्राम-दाह, सिंह तथा व्याघ्र द्वारा घेरा जाना, वन, प्रान्तर, दुर्ग, ग्रह, ज्वरदाह, चिरव्याधि, महा-रोग, बालग्रहादि रोग तथा दुःस्वप्न दर्शन आदि के सभी कष्ट दूर हो जाते हैं। विपत्ति रूपी दुस्तर समुद्र को पार करने के लिए यह स्तोत्र जहाज के समान काम देता है।

जो व्यक्ति परमा आद्याकाली देवी का चिन्तन करके दृढ़ भक्ति पूर्वक इस स्तोत्र का पाठ करता है, उसकी समस्त विपत्तियां दूर हो जाती हैं, इसमें सन्देह नहीं है। उसे पापों तथा रोगों का भय नहीं रहता। उसे सर्वत्र विजय मिलती है, कहीं पराभव नहीं होता। उसके दर्शन मात्र से ही विपत्तियां भाग जाती हैं। वह सब शास्त्रों का वक्ता, समस्त सम्पदाओं का उपभोक्ता, समस्त जाति धर्मों का कर्ता तथा स्वजाति में सर्वोच्च स्थान प्राप्त करने वाला होता है। उसकी

वाणी सफल होती है और उसके घर में निश्चला लक्ष्मी निवास करती हैं। उसका नाम सुनते ही सब लोग सम्भ्रम होकर प्रणाम करते हैं। उसके देखते ही अणिमादि अष्टसिद्धियां लज्जित हो जाती हैं। यह शतनाम स्तोत्र आद्याकाली का स्वरूप ही है। इस स्तोत्र का एक सौ आठ बार पुरश्चरण करने से समस्त अभीष्ट फल प्राप्त होते हैं। इस कालिका स्वरूपा शतनाम स्तोत्र को जो व्यक्ति पढ़ता है अथवा पढ़ाता है, सुनता है अथवा सुनाता है, वह सब पापों से मुक्त होकर ब्रह्मसायुज्य को प्राप्त कर लेता है।

।। इति श्री काली शतनाम स्तोत्रम् समाप्तम् ।।

श्री काली अष्टोत्तरशत नाम स्तोत्र

श्री भैरव उवाच

शतनाम प्रवक्ष्यामि कालिकाया वरानने।
यस्य प्रपठनाद्वाग्मी सर्वत्र विजयी भवेत्॥

भावार्थ—श्री भैरव जी ने कहा—हे वरानने! मैं कालिका शतनाम का वर्णन करता हूं, जिसके पढ़ने मात्र से ही साधक वाणी सिद्ध होकर सर्वत्र विजय प्राप्त करता है।

स्तोत्र

काली कपालिनी कान्ता कामदा कामसुन्दरी।
कालरात्रिः कालिका च कालभैरव पूजिता॥
कुरुकुल्ला कामिनी च कमनीय स्वभाविनी।
कुलीना कुलकर्त्री च कुलवर्त्म प्रकाशिनी॥
कस्तूरिरसनीला च काम्या कामस्वरूपिणी।
ककारवर्णनिलया कामधेनुः करालिका॥
कुलकान्ता करालस्या कामार्त्ता च कलावती।
कृशोदरी च कामाख्या कौमारी कुलपालिनी॥
कुलजा कुलमन्या च कलहा कुलपूजिता।
कामेश्वरी कामकान्ता कुञ्जरेश्वरगामिनी॥
कामदात्री कामहर्त्री कृष्णा चैव कपर्दिनी।
कुमुदा कृष्णदेहा च कालिन्दी कुलपूजिता॥
काश्यपी कृष्णमाता च कुलिशाङ्गी कला तथा।
क्रीं रूपा कुलगम्या च कमला कृष्णपूजिता॥
कृशाङ्गी किन्नरी कर्त्री कलकण्ठी च कार्तिकी।
कम्बुकण्ठी कौलिनी च कुमुदा कामजीविनी॥

कलस्त्री कीर्तिका कृत्या कीर्तिश्च कुलपालिका ।
कामदेवकला कल्पलता कामाङ्गवर्द्धिनी ॥
कुन्ता च कुमुदप्रीता कदम्बकुसुमोत्सुका ।
कादम्बिनी कमलिनी कृष्णानन्दप्रदायिनी ॥
कुमारीपूजनरता कुमारीगणशोभिता ।
कुमारीरञ्जनरता कुमारीव्रतधारिणी ॥
कङ्काली कमनीया च कामशास्त्रविशारदा ।
कपालखट्वाङ्गधारा कालभैरवरूपिणी ॥
कोटरी कोटराक्षी च काशीकैलासवासिनी ।
कात्यायनी कार्य्यकरी काव्यशास्त्रप्रमोदिनी ॥
कामाकर्षणरूपा च कामपीठनिवासिनी ।
कङ्किनी काकिनी क्रीडा कुत्सिता कलहप्रिया ॥
कुण्डगोलोद्भवप्राणा कौशिकी कीर्तिवर्द्धिनी ।
कुम्भस्तनी कलाक्षा च काव्या कोकनदप्रिया ॥
कान्तारवासि कान्तिः कठिना कृष्णवल्लभा ।

भावार्थ—काली के उक्त १०८ नाम श्लोकों में स्पष्ट हैं ।

इति ते कथितम्. देवि गुह्याद्गुह्यतरम् परम् ।
प्रपठेद्य इदम् नित्यम् कालीनाम शताष्टकम् ॥
त्रिषु लोकेषु देवेशि तस्यासाध्यम् न विद्यते ।
प्रातः काले च मध्याह्ने सायाह्ने च सदा निशि ॥
यः पठेत्परया भक्त्या कालीनाम शताष्टकम् ।
कालिका तस्य गेहे च संस्थानम् कुरुते सदा ॥
शून्यागारे श्मशाने वा प्रान्तरे जलमध्यतः ।
वह्निमध्ये च संग्रामे तथा प्राणस्य संशये ॥
शताष्टकम् जपेन्मन्त्री लभते क्षेम मुत्तमम् ।
कालीं संस्थाप्य विधिवत्स्तुत्वा नामशताष्टकैः ॥
साधकः सिद्धिमाप्नोति कालिकायाः प्रसादतः ॥

भावार्थ—हे देवि ! यह गुह्यातिगुह्यतर परम स्तोत्र तुमसे कहा

है। जो व्यक्ति इस काली के एक सौ आठ नाम वाले स्तोत्र का प्रतिदिन पाठ करता है. उसे तीनों लोकों में कुछ भी असाध्य नहीं रहता।

प्रातःकाल, मध्याह्न, सायंकाल अथवा रात्रि में जो व्यक्ति सदैव भक्तिपूर्वक काली के एक सौ आठ नामों वाले इस स्तोत्र का पाठ करता है, उसके घर में कालिकादेवी सदैवी निवास करती हैं।

शून्य घर, श्मशान आदि, जल अथवा अग्नि के बीच, युद्ध क्षेत्र में अथवा प्राणों पर संकट उपस्थित होते समय जो मन्त्रज्ञ व्यक्ति इस अष्टोत्तर शतनाम स्तोत्र का पाठ करता है, उसे कल्याण की प्राप्ति है।

जो व्यक्ति काली देवी को स्थापनाकर विधि पूर्वक इन एक सौ आठ नामों से उनकी स्तुति करता है, काली देवी की प्रसन्नता से वह साधक सिद्धि को प्राप्त करता है।

।।इति श्री काली अष्टोत्तर शतनाम स्तोत्रम् समाप्तम्।।

श्री कालिका सहस्रनाम स्तोत्र

श्री शिव उवाच

कथितोऽयं महामन्त्रः सर्वमन्त्रोत्तमोत्तमः ।
यामासाद्य मया प्राप्तमैश्वर्यपदमुत्तमम् ।।
संयुक्तः परया भक्त्या यथोक्त विधिना भवान् ।
कुरुतामर्चनं देव्यास्त्रैलोक्यविजिगीषया ।।

भावार्थ—श्री शिवजी ने कहा—सब मन्त्रों में उत्तमोत्तम यह महामन्त्र है, जिसे पाकर मैंने ऐश्वर्यपूर्ण उत्तम पद को प्राप्त किया है। आप परम भक्तिपूर्वक यथोक्तविधि से त्रैलोक्य पर विजय पाने की इच्छा से देवी का पूजन करें।

श्री राम उवाच

प्रसन्नो यदि मे देव परमेश पुरातन ।
रहस्यं परमं देव्याः कृपया कथय प्रभो ।।
विनार्चनं विना होमं विना न्यासं विना बलिं ।
विना गंधं विना पुष्पं विना नित्योदितां क्रियां ।।
प्राणायामं विनाध्यानं विना भूतविशोधनम् ।
विनादानं विना जापं येन काली प्रसीदति ।।

श्री राम ने कहा—हे देव ! हे परमेश ! हे पुरातन ! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो हे प्रभो ! देवी के परम रहस्य को कृपा पूर्वक कहिए।

पूजन, होम, न्यास, बलि, गन्ध, पुष्प, नित्यकर्म, प्राणायाम, ध्यान, भूत शुद्धि, दान, जप आदि के बिना काली देवी जिस प्रकार प्रसन्न होती है, उसे बताने की कृपा करें।

शिव उवाच

पृष्टं त्वयोत्तमं प्राज्ञ भृगुवंश समुद्भव।
भक्तानामपि भक्तोसि त्वमेव साधयिष्यसि ॥
देवीं दानव कोटिघ्नीं लीलया रुधिर प्रियाम्।
सदा स्तोत्र प्रियामुग्रां कामकौतुक लालसां ॥
सर्वदानन्द हृदयामासवोत्सव मानसाम्।
माध्वी कमत्स्यमांसानुरागिणीं वैष्णवीं पराम् ॥
श्मशानवासिनीं प्रेतगण नृत्यमहोत्सवाम्।
योगप्रभावां योगेशीं योगीन्द्र हृदयस्थिताम् ॥
तामुग्रकालिकां राम प्रसीदयितुमर्हसि।
तस्याः स्तोत्रं परं पुण्यं स्वयं काल्या प्रकाशितम् ॥
तव तत् कथयिष्यामि श्रुत्वा वत्सावधारय।
गोपनीयं प्रयत्नेत पठनीयं परात्परम् ॥
यस्यैक कालपठनात् सर्वे विघ्नाः समाकुलाः।
नश्यन्ति दहने दीप्ते पतङ्गा इव सर्वतः ॥
गद्यपद्यमयी वाणी तस्य गङ्गाप्रवाहवत्।
तस्यदर्शनमात्रेण वादिनो निष्प्रभां गताः ॥
तस्य हस्ते सदैवास्ति सर्वसिद्धिर्न संशयः।
राजानो ऽपि च दासत्वं भजंते किं परे जनाः ॥
निशीथे मुक्तकेशस्तुः नग्नः शक्ति समाहितः।
मनसा चिन्तयेत् कालीं महाकालेन चालितां ॥
पठेत् सहस्रनामाख्यं स्तोत्रं मोक्षस्य साधनम्।
प्रसन्ना कालिका तस्य पुत्रत्वेनानु कम्पते ॥
यथा ब्रह्ममृतैर्ब्रह्मकुसुमैः पूजिता परा।
प्रसीदति तथानेन स्तुता काली प्रसीदति ॥

भावार्थ—शिवजी ने कहा—हे भृगुवंश में उत्पन्न बुद्धिमान् राम! तुमने उत्तम प्रश्न किया है। तुम भक्तों में श्रेष्ठ हो, तुम्हीं साधना करोगे।

खेल ही खेल में करोड़ों दानवों का वध करने वाली, रुधिर-प्रिया, सदैव स्तोत्र को चाहने वाली, काम-कौतुक की लालसा वाली, सदैव आनन्दित-हृदय वाली, माधवी नामक सुरा तथा मत्स्य-मांस की अनुरागिणी, परा वैष्णवी, श्मशान वासिनी, प्रेतगणों के साथ नृत्य-महोत्सव करने वाली, योग-सिद्धि से युक्त योगीश्वरी तथा योगियों के हृदय में निवास करने वाली उस उग्रकालिका देवी को हे राम! तुम्हें प्रसन्न करना चाहिए। उसका स्तोत्र अत्यन्त पुण्यमय है, जिसे उस काली ने स्वयं ही प्रकट किया है। मैं तुमसे उसे कहूंगा। हे वत्स! तुम उसे सुनकर हृदयङ्गम करो। उसे प्रयत्नपूर्वक गुप्त रखना चाहिए तथा श्रेष्ठ से भी श्रेष्ठ जानकर उसका पाठ करना चाहिए।

इस स्तोत्र का एक ही बार पाठ करने से समस्त विघ्न उसी प्रकार नष्ट हो जाते हैं, जिस प्रकार कि प्रज्ज्वलित अग्नि में सभी पतंगे भस्म हो जाते हैं। इस स्तोत्र का पाठ करने वाले साधक की वाणी गंगा के प्रवाह की भांति गद्यपद्यमयी हो जाती है और उसके दर्शनमात्र से ही वादी लोग निष्प्रभ हो जाते हैं। उसके हाथ में सभी सिद्धियां बनी रहती हैं, इसमें सन्देह नहीं है। राजा लोग भी उसकी दासता मानते हैं, फिर अन्य लोगों की तो बात ही क्या है।

रात्रि के समय खुले केश तथा नग्न होकर शक्ति के साथ महाकाल द्वारा प्रसन्न की गई काली का मन में ध्यान करे तथा मोक्ष के साधन स्वरूप सहस्रनाम वाले स्तोत्र का पाठ करे, तो ऐसे भक्त पर काली देवी प्रसन्न होकर पुत्रभाव से कृपा करती हैं।

जिस प्रकार ब्रह्मामृत तथा ब्रह्मकुसुमों से पूजित होकर पराशक्ति प्रसन्न होती है, उसी प्रकार इस स्तोत्र का पाठ किये जाने पर भी कालीदेवी प्रसन्न होती हैं।

विनियोग

अस्य श्री दक्षिण कालिका सहस्रनाम स्तोत्रस्य महाकालभैरव

ऋषिस्त्रिष्टुप् छन्दः श्मशानकाली देवता धर्मार्थकाममोक्षार्थं विनियोगः।

भावार्थ—इस श्री दक्षिण कालिका सहस्रनाम स्तोत्र के महाकाल भैरव ऋषि हैं, त्रिष्टुप् छन्द है तथा श्मशानकाली देवता हैं। धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष के लिए इसका विनियोग है।

कालिका सहस्रनाम स्तोत्र

श्मशानकालिका काली भद्रकाली कपालिनी।
गुह्यकाली महाकाली कुरुकुल्ला विरोधिनी॥
कालिका कालरात्रिश्च महाकालनितम्बिनी।
कालभैरव भार्या च कुलवर्त्मप्रकाशिनी॥
कामदा कामिनी कन्या कमनीयस्वरूपिणी।
कस्तूरीरस लिप्ताङ्गी कुञ्जरेश्वर गामिनी॥
ककारवर्ण सर्वाङ्गी कामिनी कामसुन्दरी।
कामार्त्ता कामरूपा च कामधेनुः कलावती॥
कांता कामस्वरूपा च कामाख्या कुलकामिनी।
कुलीना कुलवत्यम्बा दुर्गा दुर्गति नाशिनी॥
कौमारी कलजा कृष्णा कृष्णदेहा कृशोदरी।
कृशाङ्गी कुलिशांगी जो क्रीङ्कारी कमला कला॥
करालास्या कराली च कुलकांतापराजिता।
उग्रा उग्रप्रभा दीप्ता विप्रचित्ता महाबला॥
नीला घना मेघनादा मात्रा मुद्रा मितामिता।
ब्राह्मी नारायणी भद्रा सुभद्रा भक्तवत्सला॥
माहेश्वरी च चामुण्डा वाराही नारसिंहिका।
वज्राङ्गी वज्रकङ्काला नृमुण्डस्त्रग्विणी शिवा॥
मालिनी नरमुण्डाली गलद्रक्त विभूषणा।
रक्तचन्दन सिक्ताङ्गी सिंदूरारुण मस्तका॥
घोररूपा घोरदंष्ट्रा घोरा घोरतरा शुभा।

महादंष्ट्रा महामाया सुदन्ती युगदन्तुरा ।।
सुलोचना विरूपाक्षी विशालाक्षी त्रिलोचना ।
शारदेन्दु प्रसन्नास्या स्फुरत् स्मेताम्बुजेक्षणा ।।
अट्टहासा प्रफुल्लास्या स्मेरवक्त्रा सुभाषिणी ।
प्रफुल्लपद्मवदना स्मितास्या प्रियभाषिणी ।
कोटराक्षी कुलश्रेष्ठा महती बहुभाषिणी ।
सुमतिः कुमतिश्चण्डा चण्डमुण्डातिवेगिनी ।।
सुकेशी मुक्तकेशी च दीर्घकेशी महाकचा ।
प्रेतदेहाकर्णपूरा प्रेतपाणिसुमेखला ।।
प्रेतासना प्रियप्रेता पुण्यदा कुलपण्डिता ।
पुण्यालया पुण्यदेहा पुण्यश्लोका च पावनी ।।
पूता पवित्रा परमा परा पुण्य विभूषणा ।
पुण्यनाम्नी भीतिहरा वरदा खड्गपाशिनी ।।
नृमुण्डहस्ता शान्ता च छिन्नमस्ता सुनासिका ।
दक्षिणा श्यामला श्यामा शांता पीनोन्नतस्तनी ।।
दिगम्बरी घोररावा सृक्कान्तरक्तवाहिनी ।
घोररावा शिवासंगा निःसंगा मदनातुरा ।।
मत्ता प्रमत्ता मदना सुधासिन्धुनिवासिनी ।
अभिमत्तामहामत्ता सर्वाकर्षण कारिणी ।।
गीतप्रिया वाद्यरता प्रेतनृत्य परायणा ।
चतुर्भुजा दशभुजा अष्टादशभुजा तथा ।।
कात्यायनी जगन्माता जगती परमेश्वरी ।
जगद्बन्धुर्जगद्धात्री जगदानन्दकारिणी ।।
जगज्जीववती हैमवती माया महालया
नागयज्ञोपवीताङ्गी नागिनी नागशायिनी ।
नागकन्या देवकन्या गान्धारी किन्नरी सुरी ।
मोहरात्रि महारात्रि दारुणामा सुरासुरी ।।
विद्याधरी वसुमति यक्षिणी योगिनीजरा ।

राक्षसी डाकिनी वेदमयी वेदविभूषणा ।।
श्रुतिस्मृति महाविद्या गुह्यविद्या पुरातनी ।
चिंताचिंता स्वधा स्वाहा निद्रातंद्रा च पार्वती ।।
अपर्णा निश्चला लोला सर्वविद्यातपस्विनी ।
गङ्गा काशी शची सीता सती सत्यपरायणा ।।
नीतिः सुनीतिः सुरुचिस्तुष्टिः पुष्टिर्धृतिः क्षमा ।
वाणी बुद्धिर्महालक्ष्मी लक्ष्मीर्नीलसरस्वती ।।
स्रोतस्वती स्रोतवती मातंगी विजया जया ।
नदी सिन्धुः सर्वमयी तारा शून्य निवासिनी ।।
शुद्धा तरंगिणी मेधा लाकिनी बहुरूपिणी ।
सदानन्दमयी सत्या सर्वानन्दस्वरूपिणी ।।
सुनन्दा नन्दिनी स्तुत्या स्तवनीया स्वभाविनी ।
रंकिणी टंकिणी चित्रा विचित्रा चित्ररूपिणी ।।
पद्मा पद्मालया पद्मसुखी पद्मविभूषणा ।
शाकिनी हाकिनी क्षान्ता राकिणी रुधिरप्रिया ।।
भ्रान्तिर्भव रुद्राणी मृडानी शत्रुमर्दिनी ।
उपेन्द्राणी महेशानी ज्योत्स्ना चेन्द्रस्वरूपिणी ।।
सूर्य्यात्मिका रुद्रपत्नी रौद्री स्त्री प्रकृतिः पुमान् ।
शक्तिः सूक्तिर्मतिमती भुक्तिर्मुक्तिः पतिव्रता ।।
सर्वेश्वरी सर्वमता सर्वाणी हरवल्लभा ।
सर्वज्ञा सिद्धिदा सिद्धा भाव्या भव्या भयापहा ।।
कर्त्री हर्त्री पालयित्री शर्वरी तामसी दया ।
तमिस्रा यामिनीस्था च स्थिरा धीरा तपस्विनी ।।
चार्वङ्गी चंचला लोलजिह्वा चारु चरित्रिणी ।
त्रपा त्रपावती लज्जा निर्लज्जा ह्रीं रजोवती ।।
सत्त्ववती धर्मनिष्ठा श्रेष्ठा निष्ठुरवादिनी ।
गरिष्ठा दुष्टसंहर्त्री विशिष्टा श्रेयसीघृणा ।।
भीमा भयानका भीमनादिनी भीः प्रभावती ।

वागीश्वरी श्रीर्यमुना यज्ञकर्त्री यजुःप्रिया ॥
ऋक्सामाथर्वनिलया रागिणी शोभनस्वरा ।
कलकण्ठी कम्बुकण्ठी वेणुवीणापरायणा ॥
वंशिनी वैष्णवी स्वच्छा धात्री त्रिजगदीश्वरी ।
मधुमती कुण्डलिनी ऋद्धिः सिद्धिः शुचिस्मिता ॥
रम्भोर्वशी रती रामा रोहिणी रेवती रमा ।
शङ्खिनी चक्रिणी कृष्णा गदिनी पद्मिनी तथा ॥
शूलिनी परिघास्त्रा च पाशिनी शार्ङ्गपाणिनी ।
पिनाकधारिणी धूम्रा शरभी वनमालिनी ॥
वज्रिणी समरप्रीता वेगिनी रणपण्डिता ।
जटिनी विम्बिनी नीला लावण्याम्बुधिचन्द्रिका ॥
वलिप्रिया सदा पूज्या पूर्णा दैत्येन्द्र माथिनी ।
महिषासुरसंहन्त्री वासिनी रक्तदन्तिका ॥
रक्तपा रुधिराक्ताङ्गी रक्तखर्परहस्तिनी ।
रक्तप्रिया मांसरुचिरा सवासरक्तमानसा ॥
गलच्छोणित मुण्डालिकण्ठमाला विभूषणा ।
शवासना चितान्तस्था माहेशी वृषवाहिनी ॥
व्याघ्रत्वगम्बरा चीनचेलिनी सिंहवाहिनी ।
वामदेवी महादेवी गौरी सर्वज्ञभाविनी ॥
बालिका तरुणी वृद्धा वृद्धमाता जरातुरा ।
सुभ्रुर्विलासिनी ब्रह्मवादिनी ब्राह्मणी मही ॥
स्वप्नावती चित्रलेखा लोपामुद्रा सुरेश्वरी ।
अमोघा ऽरुन्धती तीक्ष्णा भोगवत्यनुवादिनी ॥
मन्दाकिनी मन्दहासा ज्वालमुख्य सुरान्तका ।
मानदा मानिनी मान्या माननीया मदोद्धता ॥
मदिरा मदिरान्मादा मेध्या नव्या प्रसादिनी ।
सुमध्यानन्तगुणिनी सर्वलोकोत्तमोत्तमा ॥
जयदा जित्वरा जेत्री जयश्रीर्जयशालिनी ।

सुखदा शुभदा सत्या सभासंक्षोभ कारिणी ॥
शिवदूती भूतिमती विभूतिर्भीषणानना ।
कौमारी कुलजा कुन्ती कुलस्त्री कुलपालिका ॥
कीर्तिर्यशस्विनी भूषा भूष्या भूतपति प्रिया ।
सगुणा निर्गुणा धृष्टा निष्ठा काष्ठा प्रतिष्ठिता ॥
धनिष्ठा धनदा धन्यावसुधा स्वप्रकाशिनी ।
उर्वी गुर्वी गुरुश्रेष्ठा सगुणा त्रिगुणात्मिका ॥
महाकुलीना निष्कामा सकामा कामजीवना ।
कामदेवकला रामाभिरामा शिवनर्तकी ॥
चिन्तामणि कल्पलता जाग्रती दीनवत्सला ।
कार्त्तिकी कीर्त्तिका कृत्या अयोध्या विषमा समा ॥
सुमंत्रा मंत्रिणी घूर्णा ह्लादिनी क्लेशनाशिनी ।
त्रैलोक्य जननी हृष्टा निर्मांसा मनोरूपिणी ॥
तडाग निम्नजठरा शुष्कमांसास्थि मालिनी ।
अवन्ती मथुरा माया त्रैलोक्यपावनीश्वरी ॥
व्यक्ताव्यक्तानेकमूर्त्तिः शर्वरी भीमनादिनी ।
क्षेमङ्करी शंकरी च सर्वसम्मोह कारिणी ॥
अर्द्धतेजस्विनी क्लिन्ना महातेजस्विनी तथा ।
अद्वैता भोगिनी पूज्या युवती सर्वमङ्गला ॥
सर्वप्रियंकरी भोग्या धरणी पिशिताशना ।
भयङ्करी पापहरा निष्कलङ्का वशङ्करी ॥
आशा तृष्णा चन्द्रकला निद्रान्या वायुवेगिनी ।
सहस्रसूर्यसंकाशा चन्द्रकोटि समप्रभा ॥
वह्नि मण्डलसंस्था च सर्वतत्त्व प्रतिष्ठिता ।
सर्वाचारवत सर्वदेवकन्याधिदेवता ॥
दक्षकन्या दक्षयज्ञनाशिनी दुर्गतारिका ।
इज्या पूज्या विभीर्मूर्तिः सत्कीर्तिर्ब्रह्मरूपिणी ॥
रम्भोरुश्चतुरा राका जयन्ती करुणा कुहूः ।

मनस्विनी देवमाता यशस्या ब्रह्मचारिणी ॥
ऋद्धिदा वृद्धिदा वृद्धिः सर्वाद्या सर्वदायिनी ।
आधाररूपिणी ध्येया मूलाधार निवासिनी ॥
अज्ञा प्रज्ञापूर्णमनाश्चन्द्र मुख्यनुकूलिनी ।
वावदूका निम्ननाभिः सत्या संध्या दृढ़व्रता ॥
आन्वीक्षिकी दंडनीति स्त्रयी त्रिदिव सुन्दरी ।
ज्वलिनी ज्वालिनी शैलतनया विन्ध्यवासिनी ॥
अमेया खेचरी धैर्या तुरीया विमलातुरा ।
प्रगल्भा वारुणीच्छाया शशिनी विस्फुलिंगिनी ॥
भुक्तिः सिद्धिः सदा प्राप्तिः प्राकाम्या महिमाणिमा ।
इच्छासिद्धिर्विसिद्धा च वशित्वोर्ध्वनिवासिनी ॥
लघिमा चैव गायत्री सावित्री भुवनेश्वरी ।
मनोहरा चिता दिव्या देव्युदारा मनोरमा ॥
पिंगला कपिला जिह्वारसज्ञा रसिका रसा ।
सुषुम्नेडा भोगवती गान्धारी नरकान्तका ॥
पाञ्चाली रुक्मिणी राधाराध्या भीमाधिराधिका
अमृतातुलसी वृन्दा कैटभी कपटेश्वरी ॥
उग्रचण्डेश्वरी वीरा जननी वीर सुन्दरी ।
उग्रतारा यशोदाख्या दैवकी देवमानिता ॥
निरञ्जना चित्रदेवी क्रोधिनी कुलदीपिका ।
कुलवागीश्वरी वाणी मातृका द्राविणी द्रवा ॥
योगेश्वरी महामारी भ्रामरी विन्दुरूपिणी ।
दूती प्राणेश्वरी गुप्ता बहुला चमरी प्रभा ॥
कुब्जिका ज्ञानिनी ज्येष्ठा भुशंडी प्रकटा तिथिः ।
द्रविणी गोपनी माया कामवीजेश्वरी क्रिया ॥
शांभवी केकरा मेना मूषलास्त्रा तिलोत्तमा ।
अमेय विक्रमा क्रूरा सम्पत्शाला त्रिलोचना ॥
सुस्थीहव्य वहा प्रीतिरुष्मा धूम्रार्चिरङ्गदा ।

तपिनी तापिनी विश्वा भोगदा धारिणीधारा ॥
त्रिखंडा वोधिनी वश्या सकला शब्दरूपिणी ।
वीजरूपा महामुद्रा योगिनी योनिरूपिणी ॥
अनंगकुसुमानंगमेखलानंगरूपिणी ।
वज्रेश्वरी च जयिनी सर्वद्वन्द्वक्षयङ्करी ॥
षडंगयुवती योगयुक्ता ज्वालांशुमालिनी ।
दुराशया दुराधारा दुर्जया दुर्गरूपिणी ॥
दुरन्ता दुष्कृतिहरा दुर्ध्येया दुरतिक्रमा ।
हंसेश्वरी त्रिकोणस्था शाकम्भर्यनुकम्पिनी ॥
त्रिकोण निलया नित्या परमामृतरञ्जिता ।
महाविद्येश्वरी श्वेता भेरुण्डा कुलसुन्दरी ॥
त्वरिता भक्ति संसक्ता भक्तवश्या सनातनी ।
भक्तानन्दमयी भक्तभाविका भक्तशङ्करी ॥
सर्वसौन्दर्य निलया सर्वसौभाग्य शालिनी ।
सर्वसंभोगभवना सर्वसौख्य निरूपिणी ॥
कुमारीपूजनरता कुमारीव्रत चारिणी ।
कुमारीभक्ति सुखिनी कुमारीरूपधारिणी ॥
कुमारीपूजकप्रीता कुमारीप्रीतिदा प्रिया ।
कुमारी सेवकासंगा कुमारी सेवकालया ॥
आनन्दभैरवी बाला भैरवी वटुक भैरवी ।
श्मशानभैरवी कालभैरवी पुरभैरवी ॥
महाभैरव पत्नी च परमानन्द भैरवी ।
सुधानन्दभैरवी च उन्मादानन्द भैरवी ॥
मुक्तानन्द भैरवी च तथा तरुण भैरवी ।
ज्ञानानन्दभैरवी च अमृतानन्द भैरवी ॥
महाभयङ्करी तीव्रा तीव्रवेगा तपस्विनी ।
त्रिपुरा परमेशानी सुन्दरी पुरसुन्दरी ॥
त्रिपुरेशी पञ्चदशी पञ्चमी पुरवासिनी ।

महासप्तदशी चैव षोडशी त्रिपुरेश्वरी ॥
महांकुश स्वरूपा च महाचक्रेश्वरी तथा।
नवचक्रेश्वरी चक्रेश्वरी त्रिपुरमालिनी ॥
राजराजेश्वरी धीरा महात्रिपुर सुन्दरी।
सिन्दूर पूर रुचिरा श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी ॥
सर्वाङ्ग सुन्दरी रक्ता रक्तवस्त्रोत्तरीयिणी।
जावायावकसिन्दूर रक्तचन्दनधारिणी ॥
जावायावकसिन्दूर रक्तचन्दनरूपधृक्।
चामरी बालकुटिलनिर्मल श्यामकेशिनी ॥
वज्रमौक्तिक रत्नाढ्य किरीट मुकुटोज्ज्वला।
रत्नकुण्डल संसक्त स्फुरद्गण्ड मनोरमा ॥
कुंजरेश्वर कुम्भोत्थ मुक्तारञ्जित नासिका।
मुक्ताविद्रुम माणिक्यहाराढयस्तनमण्डला ॥
सूर्यकान्तेन्दु कान्ताढय स्पर्शाश्मकंठभूषणा।
वीजपूरस्फुरद्वीज दन्तपंक्तिरनुत्तमा ॥
कामकोदण्डकाभुग्नभ्रूकटाक्ष प्रवर्षिणी।
मातङ्गकुम्भवक्षोजा लसत्कोकनदेक्षणा ॥
मनोज्ञ शष्कुली कर्णा हंसीगति विडम्बिनी।
पद्मरागांगद ज्योतिर्दोश्चतुष्कप्रकाशिनी ॥
नानामणि परिस्फूर्जच्छुद्ध कांचन-कंकना।
नागेन्द्रदन्त निर्माणवलयांकित पाणिनी ॥
अंगुरीयक चित्रांगी विचित्र क्षुद्रघण्टिका।
पट्टाम्बरपरीधाना कलमञ्जीर शिंजिनी ॥
कर्पूरागरुकस्तूरी कुंकुम द्रव लेपिता।
विचित्र रत्न पृथिवी कल्प शाखि तलस्थिता ॥
रत्नद्वीप स्फुरद्रक्त सिंहासन विलासिनी।
षट्चक्रभेदनकरी परमानन्दरूपिणी।
सहस्रदलपद्मान्त श्चन्द्रमण्डलवर्त्तिनी ॥

ब्रह्मरूपशिव क्रीडनानासुख विलासिनी ।
हर विष्णु विरिंचीन्द्र ग्रहनायक सेविता ।।
शिवा शैवा च रुद्राणी तथैव शिववादिनी ।
मातङ्गिनी श्रीमती च तथैवानन्द मेखला ।।
डाकिनी योगिनी चैव तथोपयोगिनी मता ।
माहेश्वरी वैष्णवी च भ्रामरी शिवरूपिणी ।।
अलम्बुषा वेगवती क्रोधरूपा सुमेखला ।
गान्धारी हस्तजिह्वा च इडा चैव शुभङ्करी ।।
पिङ्गला ब्रह्मदूती च सुषुम्ना चैव गन्धिनी ।
आत्मयोनिर्ब्रह्मयोनिर्जगद् योनिरयोनिजा ।।
भगरूपा भगस्थात्री भगिनी भगरूपिणी ।
भगात्मिका भगाधाररूपिणी भगमालिनी ।।
लिंगाख्या चैव लिंगेशी त्रिपुराभैरवी तथा ।
लिंगगीतिः सुगीतिश्च लिंगस्था लिंगरूपधृक् ।।
लिंगमाना लिंगभवा लिंगलिंगा च पार्वती ।
भगवती कौशिकी च प्रेमा चैव प्रियंवदा ।।
गृध्ररूपा शिवारूपा चक्रिणी चक्ररूपधृक् ।
लिंगाभिधायिनी लिंगप्रिया लिंगनिवासिनी ।।
लिंगस्था लिंगनी लिंगरूपिणी लिंगसुन्दरी ।
लिंगगीतिर्महाप्रीता भगगीतिर्महासुखा ।।
लिंगनामसदानन्दा भगनामसदागतिः ।
लिंगमालाकण्ठभूषा भगमाला विभूषणा ।।
भगलिंगामृतप्रीता भगलिंग स्वरूपिणी ।
भगलिंगस्य रूपा च भगलिंग सुखावहा ।
स्वयम्भू कुसुमप्रीता स्वयम्भू कुसुमार्चिता ।
स्वयम्भू कुसुमप्राणा स्वयम्भू पुष्पतर्पिता ।।
स्वयम्भू पुष्प घटिता स्वयम्भू पुष्पधारिणी ।
स्वयम्भू पुष्पतिलका स्वयम्भू पुष्प चर्चिता ।।

स्वयम्भू पुष्पनिरता स्वयम्भू कुसुमग्रहा ।
स्वयम्भू पुष्पयज्ञांशा स्वयम्भू कुसुमात्मिका ।।
स्वयम्भू पुष्पनिचिता स्वयम्भू कुसुमप्रिया ।
स्वयम्भू कुसुमादान लालसोन्मत्तमानसा ।।
स्वयम्भू कुसुमानन्दलहरी स्निग्धदेहिनी ।।
स्वयम्भू कुसुमाधारा स्वयम्भू कुसुमाकुला ।
स्वयम्भू पुष्पनिलया स्वयम्भू पुष्प वासिनी ।।
स्वयम्भू कुसुमस्निग्धा स्वयम्भू कुसुमात्मिका ।
स्वयम्भू पुष्पकरिणी स्वयम्भू पुष्पवाणिका ।।
स्वयम्भू कुसुमध्याना स्वयम्भू कुसुम प्रभा ।
स्वयम्भू कुसुमज्ञाना स्वयम्भू पुष्पभागिनी ।।
स्वयम्भू कुसुमोल्लासा स्वयम्भू पुष्पवर्षिणी ।
स्वयम्भू कुसुमोत्साहा स्वयम्भू पुष्परूपिणी ।।
स्वयम्भू कुसुमोन्मादा स्वयम्भू पुष्पसुन्दरी ।
स्वयम्भू कुसुमाराध्या स्वयम्भू कुसुमोद्भवा ।।
स्वयम्भू कुसुमव्याग्रा स्वयम्भू पुष्पपूर्णिता ।
स्वयम्भू पूजक प्रज्ञा स्वयम्भू होतृमातृका ।।
स्वयम्भू दातृरक्षित्री स्वयम्भू रक्ततारिका ।
स्वयम्भू पूजकग्रस्ता स्वयम्भू पूजक प्रिया ।।
स्वयम्भू वन्दकाधारा स्वयम्भू निन्दकान्तका ।
स्वयम्भू प्रदसर्वस्वा स्वयम्भू प्रदपुत्रिणी ।।
स्वयम्भू प्रद सस्मेरा स्वयम्भू प्रदशरीरिणी ।।
सर्वकालोद्भव प्रीता सर्वकालोद्भवात्मिका ।
सर्वकालोद्भवोद्भावा सर्वकालोद्भवोदभवा ।
कुण्डपुष्प सदा प्रीतिगेलि पुष्पसदारतिः ।
कुण्डगोलोद्भव प्राणा कुण्डगोलोद्भवात्मिका ।।
स्वयम्भू वा शिवा धात्री पावनी लोकपावनी ।
कीर्तिर्यशस्विनी मेधा विमेधा शुक्रसुन्दरी ।।

अश्विनी कृत्तिका पुष्या तेजस्का चन्द्रमण्डला।
सूक्ष्मा सूक्ष्मा वलाका च वरदा भयनाशिनी॥
वरदाभयदा चैव मुक्तिबन्ध विनाशिनी।
कामुका कामदा कान्ता कामाख्या कुलसुन्दरी॥
दुःखदा सुखदा मोक्षा मोक्षदार्थ प्रकाशिनी।
दुष्टादुष्टमतिश्चैव सर्वकार्य विनाशिनी॥
शुक्राधारा शुक्ररूपा शुक्रसिन्धु निवासिनी।
शुक्रालया शुक्रभोगा शुक्रपूजा सदारतिः॥
शुक्रपूज्या शुक्रहोम सन्तुष्टा शुक्रवत्सला।
शुक्रमूर्त्तिः शुक्रदेहा शुक्रपूजक पुत्रिणी॥
शुक्रस्था शुक्रिणी शुक्र संस्पृहा शुक्रसुन्दरी।
शुक्रस्नाता शुक्रकरी शुक्रसेव्याति शुक्रिणी॥
महाशुक्रा शुक्रभवा शुक्रवृष्टि विधायिनी।
शुक्राभिधेया शुक्रार्हा शुक्रवन्दक वन्दिता॥
शुक्रानन्दकरी शुक्रसदानन्दाभिधायिका।
शुक्रोत्सवा सदाशुक्रपूर्णा शुक्रमनोरमा॥
शुक्रपूजकसर्वस्वा शुक्र निन्दक नाशिनी।
शुक्रात्मिका शुक्रसम्वत् शुक्राकर्षण कारिणी॥
शारदा साधक प्राणा साधका सवत मानसा।
साधकोत्तम सर्वस्वा साधकाभक्तरक्तगा॥
साधकानन्द सन्तोषा साधकानन्द कारिणी।
आत्म विद्या ब्राह्म विद्या परब्रह्म स्वरूपिणी॥
त्रिकूटस्था पञ्चकूटा सर्वकूटशरीरिणी।
सर्ववर्णमयी वर्णजपमाला. विधायिनी॥

टिप्पणी—श्री महाकाली के सहस्र नामों का उल्लेख उक्त श्लोकों में किया गया है।

इति श्री कालिका नाम सहस्रं शिवभाषितम्।
गुह्याद्गुह्यतरं साक्षात् महापातक नाशनम्॥

पूजाकाले निशीथे च सन्ध्ययोरुभयोरपि ।
लभते गाणपत्यं स यः पठेत साधकोत्तमः ।।
यः पठेत पाठयेद्वापि शृणोति श्रावयेदथ ।
सर्वपाप विनिर्मुक्तः स याति कालिकापुरम ।।
श्रद्धयाऽश्रद्धया वापि यः कश्चिन्मानवः स्मरेत् ।
दुर्गं दुर्गशतं तीर्त्वा स याति परमां गतिम् ।।
बंध्या वा काकबंध्या वा मृतवत्सा च यांगना ।
श्रुत्वा स्तोत्रमिदं पुत्रान् लभते चिरजीविनः ।।
यं यं कामयते कामं पठन् स्तोत्रमनुत्तमम् ।
देवीपाद प्रसादेन तत्तदाप्नोति निश्चितम् ।।

भावार्थ—शिवजी द्वारा कहा गया यह श्री कालिका सहस्रनाम स्तोत्र गुप्त से भी गुप्त है तथा महान् पापों को नष्ट करने वाला है ।

पूजाकाल में, रात्रि में तथा दोनों सन्ध्याओं में जो भी श्रेष्ठ साधक इसका पाठ करता है, वह गणपति को प्राप्त कर लेता है । जो व्यक्ति इसे पढ़ता अथवा पढ़ाता और सुनता अथवा सुनाता है, वह समस्त पापों से मुक्त होकर देवी कालिका के लोक को जाता है ।

जो कोई मनुष्य श्रद्धा अथवा अश्रद्धा से इसका स्मरण करता है, वह कठिनाइयों के सैकड़ों दुर्गों को पार करके परमगति को प्राप्त होता है ।

वन्ध्या, काकवन्ध्या अथवा मृतवत्सा—जो भी स्त्री इस स्तोत्र को सुनती है, वह दीर्घजीवी पुत्रों को प्राप्त करती है ।

इस स्तोत्र का पाठ करने वाला मनुष्य जिस वस्तु की कामना करता है, वह उसे देवी के चरणों की कृपा से निश्चितरूप में प्राप्त होती है ।

इति श्रीकालिका कुल सर्वस्वे कालिका सहस्र नाम स्तोत्रम् समाप्तम् ।

श्री काली सहस्राक्षरी

क्रों क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं हूं हूं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं हूं हूं स्वाहा शुचिजाया महापिशाचिनी दुष्टचित्तनिवारिणी क्रीं कामेश्वरी वीं हं वाराहिके ह्रीं महामाये खं खः क्रोधाधिपे श्रीमहालक्ष्म्यै सर्वहृदयरञ्जनि वाग्वादिनीविधे त्रिपुरे हंस्त्रिं हसकहलह्रीं हस्त्रैं ॐ ह्रीं क्लीं मे स्वाहा ॐ ॐ ह्रीं ईं स्वाहा दक्षिण कालिके क्रीं हूं ह्रीं स्वाहा खड्गमुण्डधरे कुरुकुल्ले तारे ॐ ह्रीं नमः भयोन्मादिनी भयं मम हन हन पच पच मथ मथ फ्रें विमोहिनी सर्वदुष्टान् मोहय मोहय हयग्रीवे सिंहवाहिनी सिंहस्थे अश्वारूढे अश्वमुरिप विद्राविणी विद्रावय मम शत्रून् मां हिंसितुमुद्यतास्तान् ग्रस ग्रस महानीले वलाकिनी नीलपताके क्रें क्रीं क्रें कामे संक्षोभिणी उच्छिष्टचाण्डालिके सर्वजगद्वशमानय वशमानय मातङ्गिनी उच्छिष्टचाण्डालिनी मातङ्गिनी सर्वशङ्करी नमः स्वाहा विस्फारिणी कपालधरे घोरे घोरनादिनी भूर शत्रून् विनाशिनी उन्मादिनी रों रों रों रीं ह्रीं श्रीं हसौंः सौं वद वद क्लीं क्लीं क्लीं क्रीं क्रीं क्रीं कति कति स्वाहा काहि काहि कालिके शम्वरघातिनि कामेश्वरी कामिके ह्रं ह्रं क्रीं स्वाहा हृदयाहये ॐ ह्रीं क्रीं मे स्वाहा ठः ठः ठः क्रीं ह्रं ह्रीं चामुण्डे हृदयजनाभि असूनवग्रस ग्रस दुष्टजनान् अमून शंखिनी क्षतजर्चाचितस्तने उन्नतस्तने विष्टंभकारिणि विद्याधिके श्मशानवासिनी कलय कलय विकलय विकलय कालग्राहिके सिंहे दक्षिणकालिके अनिरुद्धये ब्रूहि ब्रूहि जगच्चित्रिरे चमत्कारिणि हं कालिके करालिके घोरे कह कह तडागे तोये गहने कानने शत्रुपक्षे शरीरे मर्दिनि पाहि पाहि अम्बिके तुभ्यं कल विकलायै बलप्रमथनायै योगमार्ग गच्छ गच्छ निदर्शिके देहिनि दर्शनं देहि देहि मर्दिनि महिषमर्दिन्यै स्वाहा रिपून्दर्शने दर्शय दर्शय सिंहपूरप्रवेशिनि वीरकारिणि क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं फट् स्वाहा शक्तिरूपायै रों वा गणपायै रों रों रों व्यामोहिनि यन्त्रनिके महा-

काथायै प्रकम्बवदनायै लोलजिह्वायै मुण्डमालिनि महाकालरसिकायै नमो नमः ब्रह्मरन्ध्रमेदिन्यै नमो नमः शत्रुविग्रहकलहान् त्रिपुरभोगिन्यै विषज्वालामालिनी तन्त्रनिके मेघप्रभे शवावतंसे हंसिके कालि कपालिनि कुल्ले कुरुकुल्ले चैतन्यप्रभेप्रज्ञे तु साम्राज्ञि ज्ञान ह्रीं ह्रीं रक्ष रक्ष ज्वालाप्रचण्डचण्डिकेयं शक्तिमार्तण्डभैरवि विप्रचित्तिके विरोधिनि आकर्णय आकर्णय पिशिते पिशितप्रिये नमो नमः खः खः खः मर्दय मर्दय शत्रून् ठः ठः ठः कालिकायै नमो नमः ब्राह्मयै नमो नमः माहेश्वर्यै नमो नमः कौमार्यै नमो नमः वैष्णव्यै नमो मनः वाराह्यै नमो नमः इन्द्राण्यै नमो नमः चामुण्डायै नमो नमः अपराजितायै नमो नमः नारसिंहिकायै नमो नमः कालि महाकालिके अनिरुद्धके सरस्वति फट् स्वाहा पाहि पाहि ललाटं भल्लाटनी अस्त्रीकले जीववहे वाचं रक्ष रक्ष परविद्यां क्षोभय क्षोभय आकृष्य आकृष्य कट कट महामोहिनिके चीरसिद्धिके कृष्णरूपिणी अजनसिद्धिके स्तम्भिनि मोहिनि मोक्षमार्गानि दर्शय दर्शय स्वाहा॥

॥ इति श्री काली सहस्राक्षरी समाप्तम् ॥

श्री बीज सहस्राक्षरी

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ
ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ क्रीं
क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं
क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं हुं हुं हुं हुं हुं हुं
हुं हुं हुं हुं हुं हुं हुं हुं हुं हुं हुं हुं हुं हुं हुं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं
ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं
ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं
ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं
ह्रीं ह्रीं हुं
हुं हुं हुं हुं हुं हुं हुं हुं हुं हुं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं
हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं
हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं
हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं
हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं
हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं
हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं
हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं
हसौं हसौं हसौं हसौं हसौं ऐं ऐं ऐं ऐं ऐं ऐं ऐं ऐं ऐं ऐं ऐं ऐं ऐं ऐं
ऐं ऐं
ऐं ऐं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं
ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं
ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं श्मशान कालिकायै
घोररूपायै शवासनायै अभयखड्ग मुण्डधारिण्यै दक्षिणकालिके
मुण्डमालि. चतुर्भुजो नागयज्ञोपवीते क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं

क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं
क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं
क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं
क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं
प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं
प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं
प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं
प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं
प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं प्रीं
क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं
क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं
क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं
क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं
क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं
क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं
क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं
क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्रों क्रों क्रों
क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों
क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों
क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों
क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों
क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों
क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों क्रों तुं तुं तुं तुं तुं तुं तुं तुं तुं तुं तुं तुं तुं
तुं तुं
तुं तुं
तुं तुं
तुं तुं तुं तुं तुं तुं तुं तुं तुं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं
ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं

ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं
ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं
ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं
ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं
ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं
ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं फट् फट्
फट् फट् फट् फट् फट् फट् फट् फट् फट् फट् फट् फट् फट् फट्
स्वाहा स्वाहा स्वाहा स्वाहा स्वाहा स्वाहा स्वाहा ।

॥ इति श्री काली बीज सहस्राक्षरी समाप्तम॥

श्री काली तन्त्रम्

प्रथम पटल

सपर्या विधि

कलास शिखरासीनं देवदेवं जगद्गुरुं ।
उवाच पार्वती देवी भैरवं परमेश्वरं ।।

श्री पार्वत्युवाच

देवदेव महादेव सृष्टिस्थित्यन्त कारक ।
किं तद्ब्रह्ममयंधामं श्रोतुमिच्छामि तत्वतः ।।
कालिकायां महाविद्यां समस्तभेद संयुतां ।
सपर्य्याभेद सहितां चतुर्वर्ग फलप्रदां ।

श्री भैरव उवाच

महाविद्यां महामायां महायोगीश्वरीं परां ।
सर्वविद्या महाराज्ञीं सर्वसारस्वत प्रदां ।।
कामत्रयं वह्निसंस्थं रतिविन्दु विभूषितं ।
कूर्चयुग्मं तथा लज्जा-युगलं तदनन्तरं ।।
दक्षिणे कालिके चेति पूर्ववीजानि चोद्धरेत् ।
अन्ते वह्निवधूं दद्यात् विद्याराज्ञी प्रकीर्तिता ।।
नात्रसिद्धयाधयेक्षाऽस्ति न वा मित्रारि लक्षणं ।
न वा प्रयास बाहुल्यं न कामक्लेश सम्भवः ।।
यस्या स्मरणमात्रेण जीवन्मुक्तो भवेन्नरः ।।

भावार्थ—कैलाश शिखर पर असीन देवाधिदेव जगद्गुरु परमेश्वर भैरव से पार्वती देवी ने पूछा ।

श्री पार्वती बोलीं—हे देवाधिदेव महादेव! आप सृष्टि, स्थिति

एवं प्रलय के कर्त्ता हैं। मैं चतुर्वर्ग का फल प्रदान करने वाली ब्रह्म-स्वरूपा कालिका देवी की महाविद्या, उनके मन्त्र तथा उनकी विविध प्रकार की पूजा के विषय में सुनना चाहती हूं।

श्री भैरव जी ने कहा—महामाया, माहायोगीश्वरी परब्रह्मरूपा सर्वविद्या, महाराज्ञी महाविद्या हैं, वे समस्त विद्याओं को देने वाली हैं। क्रमशः तीन ककारों में रेफ, दीर्घ ईकार तथा विन्दु का योग होने से तीन बीज (क्रीं क्रीं क्रीं) होते हैं। उनके बाद दो कूर्च बीज (हूं हूं) और उनके पश्चात् दो लज्जाबीज (ह्रीं ह्रीं), उनके पश्चात् 'दक्षिणे कालिके' ये दो पद, उनके पश्चात् क्रमशः पूर्वोक्त सातों बीज, उनके पश्चात् अन्त में 'स्वाहा' का योग करने से दक्षिण कालिका का बाईस अक्षर का मन्त्र होता है—

क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

इस मन्त्र के सम्बन्ध में सिद्ध, साध्य, सुसिद्ध आदि चक्रों का विचार करने की आवश्यकता नहीं है और न इसकी उपासना में युगभेद के अनुसार चतुर्गुण जप आदि के समान अतिरिक्त परिश्रम अथवा योग आदि का आश्रय लेकर शरीर को कष्ट देने की ही आवश्यकता पड़ती है। इस मन्त्र का स्मरण करने मात्र से ही मनुष्य जीवन्मुक्त हो जाता है।

भैरवोस्य ऋषि प्रोक्तः उष्णिक् छन्द उदाहृतं।
देवता कालिका प्रोक्ता लज्जावीजं तु वीजकं॥
शक्तिस्तु कूर्चवीजं स्यादनिरुद्ध सरस्वती।
कवित्वार्थे नियोगः स्यादेवं ऋष्यादि कल्पना॥

भावार्थ—इस मन्त्र के ऋषि भैरव हैं, छन्द उष्णिक् है, देवता दक्षिणाकालिका हैं, बीज लज्जावीज अर्थात् 'ह्रीं' है, शक्ति कूर्चवीज अर्थात् 'हूं' है, विद्या अनिरुद्ध, सरस्वती तथा विनियोग कवित्व शक्ति की प्राप्ति के लिए होता है।

विशेष—इसका कीलक 'क्रीं' है।

अङ्गन्यास करन्यासौ यथावदभिधीयते।
षड्दीर्घभाजा बीजेन प्रणवाद्येन कल्पयेत् ॥
हृदयाय नमः प्रोक्तं शिरसे वह्निवल्लभा।
शिखायै वषडित्युक्तं कवचाय हुमीरितं ॥
नेत्रत्रयाय वौषट्स्यादस्त्राय फडितिक्रमः।
एवं यथाविधि कृत्वा वर्णन्यासं समाचरेत् ॥
वर्णन्यासं प्रवक्ष्यामि येन देवीमयो भवेत्
अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ ॡ वै हृदयं स्पृशेत्।
ए ऐ ओ औ ततोऽप्यं अः क ख ग घ पुनस्ततः।
उक्त्वा च दक्षिणं भुजं स्पृशेत् साधकसत्तमः।
ङ च छ ज समुच्चार्य झ ञ ट ठ ड ढ तथा ॥
इति वामभुजे न्यस्य ण त थ द पुनः स्मरेत्।
ध न प फ ब भ इति दक्षिणजंघके न्यसेत्।
म य र ल व श ष स ह ल क्ष वामजंघके।
इति वर्णान् प्रविन्यस्य मूलविद्यां समुच्चरन् ॥
सप्तधा व्यापकं कुर्याद् येन देवीमयो भवेत्।
व्यापकत्वेन संन्यस्य ततो ध्यायेत् परां शिवां ॥
पीठन्यासं ततः कुर्याद् येन देवीमयो भवेत्।
हृत्सरोजे सुधासिन्धुमध्ये द्वीपं सुवर्णजं ॥
परितः पारिजातांश्च मध्ये कल्पतरुं ततः।
तन्मूले हेमनिर्माणं द्वाश्चतुष्टयभूषितं ॥
मण्डपं मन्दवातेन पराक्रान्तं सुधूपितं।
मन्त्र तन्त्र प्रतिष्ठाप्य तत्र पूजां समाचरेत् ॥
श्मशानं तत्र सम्पूज्य तत्र कल्पद्रुमं यजेत्
तन्मूले मणिपीठञ्च नानामणि विभूषितं।
नानालङ्कार भूषाढयं मुनिदेवैश्च भूषितं
शिवाभिर्बहुमांसास्थि मोदमानाभिरन्ततः ॥

चतुर्दिक्षु शवमुण्डाश्चिताङ्गारास्थिभूषिता: ।
इच्छाज्ञाना क्रिया चैव कामिनी कामदायिनी ।।
रति रतिप्रिया नन्दा मध्ये चैव मनोन्मनी ।
हसौः सदाशिवेत्युक्त्वा महाप्रेतेति तत्परं ।।
पद्मासनाय हृदयं पीठन्यास उदाहृत: ।
एवं देहमये पीठे चिन्तयेदिष्ट देवतां ।।
ध्यानमस्या: प्रवक्ष्यामि स्मरणाच्छिवतां व्रजेत् ।।

संक्षिप्त भावार्थ—'ॐ क्रां हृदाय नम:', 'ॐ क्रीं शिरसे स्वाहा आदि रूप से अङ्गन्यास तथा करन्यास करना चाहिए। तत्पश्चात् वर्णन्यास एवं व्यापकन्यास करके पीठन्यास करना चाहिए । हृदय-कमल में सुधासागर, उस सागर के बीच में रत्नद्वीप, रत्नद्वीप के बीच में चारों ओर पारिजात वृक्ष, उन वृक्षों के बीच में कल्पवृक्ष, कल्प-वृक्ष के मूल स्थान में स्वर्णनिर्मित चार द्वारों से युक्त चिन्तामणिगृह जिसमें से सुगन्ध उठ रही है, की कल्पना करे। तदुपरान्त श्मशान, उसके बीच में कल्पवृक्ष, उसके मूलस्थान में विभिन्न प्रकार की मणियों से सुशोभित मणिमयपीठ, उस पर विभिन्न अलंकारों को धारण किये हुए मुनिगण, श्मशान के चारों ओर शव तथा मांसादि के भक्षण से तृप्त होकर घूमने वाली शिवायें एवं शवमुण्ड, चिताङ्गार, अस्थियों आदि के बिखराव की कल्पना करनी चाहिए । उसी मणि-पीठ की चारों दिशाओं में (१) इच्छा, (२) ज्ञाना, (३) क्रिया, (४) कामिनी, (५) कामदायिनी, (६) रति, (७) रतिप्रिया तथा (८) नन्दा—ये आठ शक्तियां और इनके बीच में मनोन्मनी शक्ति के विराजमाम होने की कल्पना करे। इन नौ शक्तियों के मस्तक पर महाप्रेत रूपी सदाशिव शयन कर रहे हैं। इस प्रकार के पीठ की कल्पना करके उन शवरूपी सदाशिव के ऊपर स्थित भगवती काली देवी का ध्यान करना चाहिए। इस प्रकार से स्मरण करने वाला व्यक्ति शिवत्व को प्राप्त कर लेता है।

ध्यान

करालवदनां घोरां मुक्तकेशीं चतुर्भुजां।
कालिकां दक्षिणां दिव्यां मुण्डमाला विभूषितां॥
सद्यश्छिन्न शिरः खड्ग वामाधोर्ध्वकराम्बुजां।
अभयं वरदञ्चैव दक्षिणोध्वधि पाणिकां॥
महामेघप्रभां श्यामां तथा चैव दिगम्बरीं।
कंटावसक्तमुण्डाली गलद्रुधिर चर्चितां॥
कर्णावतंसतानीत शवयुग्मभयानकां।
घोरदंष्ट्रां करालस्यां पीनोन्नत पयोधरां॥
शवानां करसङ्घातैः कृतकाञ्चींहसन्मुखीं।
सृक्कद्वयगकद्रक्तधारा विस्फुरिताननां॥
घोररावां महारौद्रीं श्मशानालयवासिनीं।
बालार्कमण्डलाकार लोचनत्रित यान्वितां॥
दन्तुरां दक्षिणव्यापि मुक्तालम्बिकचोच्चयां।
शवरूप महादेव हृदयोपरि संस्थितां॥
महाकालेन च समं विपरीत रतातुरां।
शिवाभिर्घोररावाभिश्चतुर्दिक्षु समन्वितां॥
सुख प्रसन्नवदनां स्मेरानन सरोरुहां।
योगिनी चक्रसहितां कालिकां भावयेत् सदा॥
एवं सञ्चिन्तयेत् कालीं सर्वकामार्थसिद्धये॥

अर्चन विधि

अथार्चनविधिं वक्ष्ये देव्या सर्वसमृद्धिदं।
येनानुष्ठितमात्रेण स्वयं भैरव रूपवान्॥
येनानुष्ठित मात्रेण भवाब्धौ न निमज्जति।
अनेकहेम रत्नादि माणिक्यवर सिद्धिदं॥
इन्द्रादि सुरवृन्दानां साधनैक फलप्रदं।
विपक्ष कुल संहार कारणं पौरुषंप्रदं॥

शान्तिकं पौष्टिकंञ्चैव वशीकरणमुत्तमं ।
मारणोच्छेदजनकमाकृष्टिकरमुत्तमं ।।
समस्तशोकशमनमानन्दाब्धौ निमज्जनं ।
चतुः समुद्र पर्यन्त मेदिनी साधनोत्तमं ।
स्त्रीरत्न कुल सन्दायि पुत्रपौत्र विवर्धनं ।

संक्षिप्त भावार्थ—अब समस्त समृद्धियों को देने वाली देवी की अर्चन विधि का वर्णन किया जाता है, जिसका अनुष्ठान करने मात्र से लोगों को समस्त कामनाएं पूर्ण होती हैं तथा सब प्रकार के दुःख एवं कष्टों का नाश होकर स्त्री, पुत्र, पौत्र आदि को वृद्धि होती है।

आदौ यन्त्रं प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वा ऽमरतांव्रजेत् ।
आदौ त्रिकोणं विन्यस्य त्रिकोणं तद्वहिर्न्यसेत् ।।
ततो वै विलिखेन्मन्त्री त्रिकोणत्रयमुत्तमं ।
वृत्तं विलिख्य विधिवल्लिखेत् पद्मं सुलक्षणं ।।
ततो वृत्तं विलिख्यैव लिखेद् भूपुर मेककं ।
चतुरस्त्रं चतुर्द्वारमेवं मण्डलमालिखेत् ।।

भावार्थ—पहले आधार यन्त्र का वर्णन किया जाता है। पहले एक अधोमुख त्रिकोण का निर्माण करे। इस त्रिकोण को बीच में रखकर उसके बाहर क्रमशः एक के बाद एक करके चार त्रिकोण और बनाए। इस प्रकार पांच त्रिकोण हुए। ये सब समबाहु त्रिभुज के आकार के होंगे। इन्हें मध्य में रखकर इनके बाहर एक वृत्त बनाए। वृत्त के बाहर अष्टदल कमल का निर्माण करे, कमल के बाहर एक अन्य वृत्त बनाए। वृत्त के बाहर चार द्वारों से युक्त चतुरस्त्र के भूपुर का निर्माण करे (पहले त्रिकोण के ठीक बीच में एक बिन्दु तथा 'क्रीं क्रीं' इन दो बीजों को भी लिखना चाहिए)—दक्षिणाकाली की पूजा का यन्त्र यही है।

पीठपूजां ततः कृत्वा स्ववामेऽर्घ्यं न्यसेत् प्रिये ।
मूलविद्यां षडङ्गेन मूलमन्त्रेण चार्चयेत् ।।

ततो हृदय पद्मान्त: स्फुरन्तीं परमां कलां ।
यन्त्रमध्ये समावाह्य न्यासजालं प्रविन्यसेत् ॥
ततोध्यात्वा महादेवीमुपचारान् प्रकल्पयेत् ।
नमस्कृत्य महादेवीं ततः आवरणं यजेत् ॥
कालीं कपालिनीं कुल्लां कुरुकुल्लां विरोधिनीं ।
विप्रचित्तां तु सम्पूज्य बहि: षट्कोणके ततः ॥
उग्रामुग्रप्रभां दीप्तां तथा मध्य त्रिकोणके ।
नीलां घनां बलाकाञ्च तथैवान्य त्रिकोणके ॥
मात्रां मुद्रां मिताञ्चैव तथैवात्त स्त्रिकोणके ।
सर्वा: श्यामा असिकरा मुण्डमाला विभूषिता: ॥
तर्जनीं वामहस्तेन धारयन्त्य: शुचिस्मिता: ।
ततो वै माता: पूज्या ब्राह्मी नारायणी तथा ॥
माहेश्वरी च चामुण्डा कौमारी चापराजिता ।
वाराही च तथा पूज्या नारसिंही तथैव च ॥
अनुलेपनकं गन्धो धूपदीपो तथैव च ।
त्रिस्त्रि: पूजा प्रकर्तव्या सर्वासामपि साधकै: ॥
गुरु पंक्तिं षडङ्गञ्च दिक्पालांश्च ततो ऽर्चयेत् ।
एवं पूजां पुरा कृत्वा मूलेनैव यथाविधि ॥
नैवेद्यादीन् यथाशक्त्या दद्याद् देव्यै पुनः पुन: ।
ततो वेदशवारांस्तु दीपं दद्यात्तु साधक: ॥
पुष्पादिकं पुनर्दद्यान्मूलेनैव यथाविधि ।
ततः सावहितो मन्त्री गुरुं नत्वा शिर: स्थितं ॥
देवीं ध्यात्वा चाष्टोत्तर सहस्रं प्रजपेन्मनुं ।
तेजोमयं जपफलं देव्या हस्ते समर्पयेत् ॥
गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वमिति मन्त्रेण मन्त्रवित् ।
ततः शिरसिवै पुष्पं दत्वाष्टाङ्गं प्रणम्य च ॥
विसृज्य परया भक्त्या संहारेणैव भक्तित: ।
उद्वास्य हृदये देवीं तन्मयो भवतिध्रुवं ॥

पुरश्चरण काले ऽपि पूजा चैषा प्रकीर्तिता ॥

भावार्थ—इसके उपरान्त पीठपूजा करके अपने बाईं ओर अर्घ्य स्थापित कर षडङ्गपूजा करके पुनः ध्यान करे। तत्पश्चात् हृदय-कमल में प्रकाशित देवी का यन्त्र के मध्य में आवाहन करके उपलब्ध उपचारों से पूजन करना चाहिए। फिर देवी को नमस्कार करके आवरण-पूजा करे, जिसकी विधि यह है कि यन्त्र के पांच त्रिकोणों के समस्त पन्द्रह कोणों में क्रमशः बाईं ओर से (१) काली, (२) कपालिनी, (३) कुल्ला, (४) कुरुकुल्ला, (५) विरोधिनी (६) विप्रचित्ता, (७) उग्रा, (८) उग्रप्रभा, (९) दीप्ता, (१०) नीला, (११) घना, (१२) बलाका, (१३) मात्रा, (१४) मुद्रा तथा (१५) मिता—इन पन्द्रह देवियों का पूजन करना चाहिए। ये सभी देवियां श्यामवर्ण वाली हैं, इनके दाएं हाथ में तलवार तथा बाएं हाथ में ताड़न-यष्टि हैं। ये कण्ठ में मुण्ड माला पहने हैं तथा इनके मुख पर मुस्कान है।

इसके उपरान्त (१) ब्राह्मी, (२) नारायणी, (३) माहेश्वरी, (४) चामुण्डा, (५) कौमारी, (६) अपराजिता, (७) वाराही तथा (८) नारसिंही—इन आठ मातृकाओं का पूजन करना चाहिए। प्रत्येक देवी को अनुलेपन, गन्ध, धूप तथा दीप तीन-तीन वार प्रदान करनी चाहिए, तत्पश्चात् गुरुपंक्ति, षडङ्ग तथा इन्द्र आदि दस दिक्पालों की क्रमशः पूजा करनी चाहिए।

आवरण देवताओं का पूजन करने के उपरान्त मूल देवता को पुनः यथाशक्ति नैवेद्य आदि निवेदित करे। तत्पश्चात् गुरु को प्रणाम कर मूलदेवता का ध्यान करके, मूलमन्त्र का एक सहस्र आठ वार जप करे। तत्पश्चात् 'गुह्यातिगुह्य गोप्त्री'—इस मन्त्र द्वारा देवी के बाएं हाथ में जप के फल को समर्पित कर दे। फिर मस्तक पर पुष्प चढ़ाकर साष्टाङ्ग प्रणाम कर, संहार मुद्रा द्वारा देवी का विसर्जन कर, उन्हें अपने हृदय में धारण करे। पुरश्चरण काल में इसी प्रकार पूजन करना चाहिए।

।। इति श्री कालीतन्त्रे सपर्या विधि
नाम प्रथम पटलः समाप्तः ।।

द्वितीय पटल

पुरश्चरण विधि

भैरव उवाच

साधनं सिद्धिमन्त्रस्य वक्ष्यामि परमाद्भुतं ।
भाग्यहीनोऽपि मूर्खोऽपि यद्बोधादमरो भवेत् ।।
साधयेत् सकलान् कामान् सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ।
आदौ पुरस्क्रियां कुर्यान्नियमेन यथाविधि ।।
लक्षमेकं जपेद् विद्यां हविष्याशी दिवा शुचिः ।
रात्रौ ताम्बूल पूरास्यः शय्यायां लक्षमानतः ।।
नानाचारो न कर्तव्यो न चारणमितस्ततः ।
भूतहिंसा न कर्तव्या पशुहिंसा विशेषतः ।।
बलिदानं विना देव्या हिंसां सर्वत्र वर्जयेत् ।
अन्यमन्त्र पुरस्कारं निन्दां चैव विवर्जयेत् ।।
ततः सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगार्हो न चान्यथा ।
जीवहीनो यथा देही सर्वकर्मसु न क्षमः ।।
पुरश्चरणहीनोऽपि तथा मन्त्रः प्रकीर्तितः ।
तस्मादादौ पुरश्चर्यां कृत्वा साधक सत्तमः ।।
प्रयोगं च ततः कुर्यात् सर्वं साधक दुर्लभम् ।।

भावार्थ—अब मैं सिद्धमन्त्र के परम अद्भुत साधन को कहता हूं, जिसके द्वारा भाग्यहीन तथा मूर्ख व्यक्ति भी अमर हो जाता है, उसकी समस्त कामनाएं पूर्ण होती हैं और वह सब सिद्धियों का स्वामी हो जाता है। पहले यथाविधि पुरश्चरण की क्रिया को करना चाहिए। एक लाख बार मन्त्र का जप करे। पशुभाव में हविष्याशी

तथा संयत रहकर प्रातः से मध्याह्न तक जप करना उचित है। फिर रात्रि के समय वीरभाव में पञ्चमकार से युक्त होकर जप करना चाहिए। जप की संख्या एक लाख ही है। विभिन्न आचारों में परायण नहीं होना चाहिए अर्थात् पशुभाव के साधक को पश्वाचार से तथा वीरभाव के साधक को वीराचार से ही पुरश्चरण करना चाहिए। देवी-पूजा के लिए आवश्यक बलि के अतिरिक्त किसी भी प्राणी, विशेषकर पशु की हिंसा नहीं करनी चाहिए और न किसी की निन्दा ही करनी चाहिए। इस प्रकार पुरश्चरण द्वारा मन्त्र की सिद्धि प्राप्त करके अन्य प्रयोगों को करना चाहिए। पुरश्चरण किये बिना मन्त्र की सिद्धि नहीं होती और जब तक मन्त्र सिद्ध नहीं हो जाता, तब तक साधक मन्त्र-प्रयोग का अधिकारी भी नहीं होता। इसलिए साधक को सर्वप्रथम पुरश्चरण करना चाहिए, तत्पश्चात् वशीकरण, उच्चाटन, शान्तिक आदि प्रयोग करने चाहिए।

।। इति श्री कालीतन्त्रे पुरश्चरण विधिः नाम द्वितीय पटल समाप्तम् ।।

तृतीय पटल

नैमित्तिक विधि

भैरव उवाच

तती होम विधिं वक्ष्ये सर्वसिद्धि प्रदायकं।
लतापुष्पान्वितं कृत्वा वर्णानां शतकं सुधीः ।।
तानि सम्मन्त्र्य विधिवदसकृत् साधकोत्तमः ।
ततो वै होमयेत् तानि संस्कृतेऽग्नौ यथाविधि ।।
युगानामयुतं तेन पूजनं जायते शिवे ।
अनेन क्रमयोगेन यश्चरेद् भुवि साधकः ।।
न तस्य दुर्लभं किञ्चित् त्रिषु लोकेषु विद्यते ।

धीरो भवति वाग्मि च सर्वसिद्धिमुपालभेत् ॥
हुनेदाज्येन भक्तेन मांसेन रुधिरेण च।
कृष्णपुष्पेण साज्येन सरक्तेन विशेषतः ॥
आमिषादिभिरप्येवं श्मशाने जुहुयात् सुधीः।
महाकालं हुनेद् यत्नात् पश्चात् देवीं विशेषतः ॥
त्रिधा विभज्य विद्यां वै साधकः शुद्ध मानसः।
मासं रक्तं त्वचं केशं नखं भक्तञ्च पायसम् ॥
आज्यं चैव विशेषेण जुहुयात् सर्वसिद्धये।
एवं कृते तु सर्वत्र लभते सिद्धिमुत्तमां ॥
यद् यत् कामयते कामी तत्तदाप्नोति निश्चितं।
देववन्मानवो भूत्वा भुनक्ति बहुलं सुखं ॥
तर्पणस्य विधिं वक्ष्ये येन कार्याणि साधयेत्।
तर्पयेच्च पयोभिश्च रक्तधारायुतैस्तथा ॥
मज्जाभिश्च तथा तद्वत् स्वकीयेन परेण च।
आकर्षितायाः कन्यायाः कुलप्रक्षालनेन च ॥
मेष माहिष रक्तेन नररक्तेन चैव हि।
मूष मार्जार रक्तेन तर्पयेद् देवतां परां ॥
एवं तर्पणमात्रेण साक्षात् सिद्धीश्वरो भवेत्।
कविता जायते तस्य द्राक्षारस परम्परा ॥
बृहस्पति समो भूत्वा देववद् भुवि मोदते।
न तस्य पापपुण्यानि जीवन्मुक्तो भवेद् ध्रुवं ॥

भावार्थ—इस पटल में जप, होम तथा तर्पण की विधि का वर्णन किया गया है। यह विधि वीरभाव की है, जिसमें लता-पुष्प, बिल्व-पत्र, घृत, चावल, मांस, रुधिर, काले पुष्प आदि वस्तुओं से श्मशान में होम करने का विधान है। रक्तधारा युक्त जल, अपनी अथवा परकीय मज्जा एवं पशु-रक्त आदि के तर्पण का भी वर्णन है। इससे अणिमादिक अष्ट सिद्धियों, विद्वत्ता तथा वाक्सिद्धि प्राप्त होने की बात कही गई है। यह भी बताया है कि इन क्रियाओं को करने से

साधक के पाप-पुण्य सभी नष्ट हो जाते हैं और वह जीवन्मुक्ति को प्राप्त करता है। शक्ति-कुल प्रक्षालित-जल का भी वर्णन है। इन सब विषयों को विस्तार पूर्वक गुरु-मुख से श्रवण करना चाहिए और उन्हीं के निर्देशानुसार इन क्रियाओं को करना चाहिए--यह हमारा मत है। जिन वस्तुओं के प्रयोग का वर्णन इस पटल में किया गया है, उनका यदि कोई साङ्केतिक अर्थ हो तो वह भी गुरु-मुख से ही जाना जा सकता है।

॥ इति श्री कालीतन्त्रे नैमित्तिक विधि नाम तृतीय पटल: समाप्तम् ॥

चतुर्थ पटल

काम्य विधिः

भैरव उवाच

अथ काम्य विधिं वक्ष्ये येन सर्वत्र सर्वग:।
साधक: साधयेत् सिद्धि देवानामपि दुर्लभां॥
कुलागार पुष्पितायां दृष्ट्वा यो जपते नर:।
अयुतैक प्रमाणेन साधक: स्थिर मानस:॥
केवलं गुप्तभावेन सतु विद्यानिधिर्भवेत्।
संस्कृता: प्राकृता: शब्दा लौकिका वैदिकाश्च ये॥
वशमायान्ति ते सर्वे साधकस्य च नान्यथा।
अथवा मुक्तकेशश्च हविष्याशी सुसंयत:॥
प्रजपेदयुतं प्राज्ञ एतदेव फलं लभेत्।
नग्नां परलतां पश्यन्नयुतं यस्तु साधक:॥
प्रजपेत् स भवेद् सद्यो विद्याया वल्लभ: स्वयं।
तस्य दर्शन मात्रेण वादिन: कुण्ठतां गता:॥
गद्यपद्यमयी वाणी तस्य वक्त्रात् प्रवर्तते।

तत्पदे सुधियः सर्वे प्रणमन्ति मुदान्विताः ॥
तस्य वाक्य परिचयज्जडा भवन्ति वाग्मिनः ।
अथवा मुक्त केशश्च हविष्यं भक्षयेन्नरः ॥
प्रजपेदयुतं तस्य एष प्रतिनिधिः स्मृतः ।
धनकामस्तु यो विद्वान् महदैश्वर्य कामुकः ॥
बृहस्पतिसमो यस्तु भवितुं कामयेन्नरः ।
अष्टोत्तरशतं जप्त्वा कुलमामंत्र्य मंत्रवित् ॥
मैथुनं यः प्रयात्येव स तु सर्वफलं लभेत् ।
लतारतेषु जप्तव्यं महापातक मुक्तये ॥
लता यदि न लभ्येत तदा मज्जां प्रयत्नतः ।
समुत्सार्य जपेन्मन्त्री सर्वकामार्थसिद्धये ॥
तासां प्रहारं निन्दां च कौटिल्यमप्रियं तथा ।
सर्वथा च न कर्तव्यमन्यथा सिद्धिरोधकृत् ॥
स्त्रियो देवाः स्त्रियः प्राणाः स्त्रिय एव विभूषणं ।
स्त्री सङ्गिना सदा भाव्यमन्यथा स्वस्त्रियामपि ॥
विपरीतरता सा तु भाविता हृदयोपरि ।
अष्टोत्तरशतं जप्त्वा नासाध्यं विद्यते क्वचित् ॥
तद्धस्तावचितं पुष्पं तद्धस्तावचितं जलं ।
तद्धस्तावचितं भोज्यं देवताभ्यो निवेदयेत् ॥
महाचीनद्रुमलतावेष्टितः साधकोत्तमः ।
रात्रौ यदि जपेन्मन्त्रं सैव कल्पलताभवेत् ॥
महाचीनद्रुमलतावेष्टनेन च यत्फलं ।
तस्यापि षोडशांशेन कलां नार्हन्ति ते शवाः ॥
शवासनाधिकफलं लतागेह प्रवेशनं ।
श्मशानालयमागत्य मुक्तकेशो दिगम्बरः ॥
जपेदयुत संख्यं तु सर्वकामार्थसिद्धये ।
महाचीनद्रुमलता मज्जाभिर्विल्वपत्रकं ॥
सहस्रं देवीमभ्यर्च्य श्मशाने साधकोत्तमः ।

तदा राज्यमवाप्नोति यदि सा न पलायते ॥
स्वगात्ररुधिरावर्त्तैश्च विल्वपत्रैः सहस्रशः ।
श्मशाने ऽभ्यर्च्य कालीं तु वागीश समतां व्रजेत् ॥
अनाढिकां तथा दृष्ट्वा लक्षं जपति भूमिपः ।
निर्मलां च तथा दृष्ट्वा वश्यार्थमयुतं जपेत् ॥

भावार्थ—इस पटल में वीर-भाव सम्मत अनेक प्रकार की काम्य-विधियों का वर्णन किया गया है। स्त्रियों के साथ श्रेष्ठ व्यवहार करने, उनको ही देवता समझने तथा उनके द्वारा लाई गई वस्तुओं का पूजा में प्रयोग करने आदि विषयों पर विशेष बल दिया गया है। इस पटल के आशय को भी गुरु-मुख से सुनना-समझना ही उचित है।

॥ इति श्री कालीतन्त्रे काम्यविधि नाम चतुर्थ पटलः समाप्तम् ॥

पञ्चम पटल
सिद्धविद्या विधिः
भैरव उवाच

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मन्त्रं कल्पद्रुमंपरं ।
येन जप्तेन विधिवत् सिद्धयोऽष्टा भवन्ति हि ॥
यस्याः स्मरणमात्रेण वाचश्चित्रीयते नृणां ।
यज्ज्ञानादमरत्वं च लभेन्मुक्ति चतुर्विधां ॥
ये जपन्ति परां देवीं नियमेन तु सस्थिताः ।
देवाः सर्वे नमस्यन्ति किं पुनर्मानवादयः ॥
वृहस्पतिसमो वाग्मी धने धनपतिर्भवेत् ।
कामतुल्यश्च नारीणां रिपूणां शमनोपमः ॥
तस्य पादाम्बुज द्वन्द्वं राज्ञा किरीट भूषणं ।
तस्य मूर्ति विलोक्यैव कुबेरोपि तिरस्कृतः ॥

य एनां पूजयेद् देवीं नियमे पितृकानने ।
तस्य चाज्ञाकराः सर्वे सिद्धयोऽष्टौ भवन्ति हि ॥
तस्यैव जननी धन्या पिता यस्य सुरोपमः ।
सम्प्रदायविदां वक्ता य एनां वेत्ति तत्त्वतः ॥
अस्या विज्ञानमात्रेण कुलकोटिः समुद्धरेत् ।
नंदन्ति पितरः सर्वे गाथा गायन्ति ते मुदा ॥
अपि नः स्वकुले कश्चित् कुलज्ञानी भविष्यति ।
स धन्यः स च विज्ञानी स कविः स च पण्डितः ॥
स कुलीनः स सुकृती स वशी स च साधकः ।
स ब्राह्मणः स वेदज्ञः सोऽग्निहोत्री स दीक्षितः ॥
स तीर्थसेवी पीठानां स निवासी स सर्वदाः ।
स सोमपायी च व्रती स यज्वा स च साधकः ॥
स संन्यासी च योगी च स मुक्तः स च ब्रह्मवित् ।
स वैष्णवः स शैवश्च स सौरः स च गाणपः ॥
स च विज्ञानवेत्ता च य एनां वेत्ति तत्त्वतः ।
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन सर्वावस्थासु सर्वदा ॥
एनां ज्ञात्वा यजेन् मन्त्री सुखमोक्षफलप्रदां ।
नमः पाशाङ्कुशे द्वेधा फट् स्वाहा कालि कालिके ॥
दीर्घतनुच्छदः कालीमनुः पञ्चदशाक्षरः ।
अनया सदृशी विद्या त्रैलोक्ये नापि विद्यते ॥
विद्यारत्नं प्रवक्ष्यामि श्रुत्वा कर्णावतंसवत् ।
मायाद्वयं कूर्चयुग्म मैंद्रान्तम्मादन त्रयं ॥
मायाविन्दीश्वर युतं दक्षिणे कालिके पदं ।
संहारक्रमयोगेन बीज सप्तकमुद्धरेत् ॥
एकविंशत्यक्षराढ्यस्ताराद्यः कालिकामनुः ।
पूर्वोक्तमन्त्रवत् कुर्यात् पूजां सर्वां विचक्षणः ॥

भावार्थ—इस पटल में भगवती दक्षिण कालिका के पन्द्रह तथा

इक्कीस अक्षर वाले मन्त्रों की साधन-विद्या का वर्णन किया गया है। ये मन्त्र इस प्रकार हैं—

(१) नमः आं आं क्रों क्रों फट् स्वाहा कालि कालिके हूं।

तथा—

(२) ॐ ह्रीं ह्रीं हूं हूं क्रीं क्रीं क्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं।

यह दूसरा मन्त्र 'विद्यारत्न' के नाम से प्रसिद्ध है। इसकी पूजा-विधि बाईस अक्षर वाले मन्त्र के समान ही है। इस पटल के पूर्ण आशय को भी गुरु-मुख से सुनना ही योग्य है।

॥ इति श्री काली तन्त्रे सिद्धविद्या विधि नाम पञ्चम पटलः समाप्तम् ॥

षष्ठ पटल

वीर-साधना

भैरव उवाच

शृणु देवि वरारोहे वीरसाधनमुत्तमं।
नृणां शीघ्र फलावाप्त्यै प्रकारान्तरमुच्यते॥
चतुष्पथे चतुर्दिक्षु पुरुषं हृदयं खनेत्।
जीवितं ब्रह्मरन्ध्रे वै दीपान् प्रज्वालयेत् सुधीः॥
मध्ये तथा खनेदेकं तत्र मूर्द्धासनं भवेत्।
पूर्वोक्तेन च मार्गेण तत्र संस्कारमाचरेत्॥
महाकालादिदेवेभ्यो बलिं पूर्ववदाहरेत्।
कल्पोक्तपूजां संपूज्य जपेत् प्रयतमानसः॥
दंताक्षमालया चैव राजदंतेन मेरुणा॥
दिग्वासाः प्रजपेन्मन्त्रमयुतं सर्वदैवतं॥

जपान्ते च बलिं दत्वा दक्षिणा विभवावधिः।
सर्वसिद्धिश्वरो विद्वान् सर्वदेव नमस्कृतः॥
अथवा विजनेऽरण्ये स्थिरयोगासनो नरः।
उदयास्तं दिवा जप्त्वा सर्वसिद्धीश्वरो भवेत्॥
विल्ववृक्षे निज क्रोड़े शवमारोप्य यत्नतः।
नृसिंहमुद्रया वीक्ष्य जपेन्मातृकयाः नरः॥
सहस्रं तत्र जप्त्वा वै सर्वसिद्धिश्वरोभवेत्।
बटमूले शवं नीत्वा तत्रदेवीं प्रपूज्य च॥
सुप्त्वा तत्र मनुं जप्त्वा सर्वसिद्धीश्वरोभवेत्।
करकाञ्चीं समादाय मुण्डमाला विभूषितः॥
तेनैव तिलकं कृत्वा तत्तद्भूस्य विभूषितः।
श्मशाने च सकृज्जप्त्वा सर्वसिद्धीश्वरो भवेत्॥
कुङ्कुमागुरु कस्तूरी रोचनागुरु चन्दनं।
कर्पूरं पद्मरागञ्च केसरं हरि चन्दनम्॥
एकत्र साधितं कृत्वा प्रत्येकं साधयेत्ततः।
एतत्तिलक मात्रेण राजानं वश मानयेत्॥
जिह्वाग्रे रुधिरं कृत्वा आकाशे च समाहरेत्।
तेनैव गुटिकां कृत्वा भद्रकालीं ततो जपेत्॥
नीलां नीलपताकां च ललज्जिह्वां करालिकां।
ललाट तिलकं कृत्वा साधको वीतभीः स्वयं॥
महाष्टमी नवम्योस्तु संयोगे पुरतः स्थितः।
छागमहिषमेषाणां चतुर्दिक्षुशरान् क्षिपेत्॥
कबन्धान् मुण्डपुञ्जं च दीपादिभिरलंकृतं।
मध्ये कबन्धमास्तीर्य तत्र गन्धर्वरूपधृक्॥
ताम्बूलपूर रक्तास्ये सञ्जानाञ्चित लोचनं।
कृत्वाकालीमनुं जप्त्वा सर्वसिद्धीश्वरो भवेत्॥
विपद्रवियुतं देवि नेत्रान्तं चन्द्रभूषितं।
बीजं प्रत्येक द्रव्याणां मिलितानां च पार्वति॥

मूलमन्त्रेण मन्त्रं यो जपेत् साष्टशतत्रयं।
जिह्वाग्रे रुधिरं गृह्ल चामुण्डे घोर निस्वने।।
बलिं गृह्ल वरं देहि रुधिरं गगनेऽमले।
कालि कालि प्रचण्डोग्रे ततोऽस्त्रं कवचं ततः।।
कालिकेयं समाख्याता वीराणां हितकाम्यया।
कूर्चयुग्मं महादेवि नीलायाः कथितं तव।।
वियद्भृगुयुतं देवि कलमिश्रं रवौ रतिः।
चन्द्रखण्डसमायुक्तं ततो नीलपदं ततः।।
पताके हूं फडन्ते स्यात् पूर्वकूट मनुर्मतः।
सुगुप्तेयं महाविद्या तव स्नेहादि होदिता।।
जयश्रीकरणीदेवी पताकेव रणस्थले।
तेन नीलपताकेयं विद्यां वै वीरसाधने।।
उग्रचण्डा महाविद्या या पुरा कथिता प्रिये।
ललज्जिह्वा तु सा प्रोक्ता योज्या वै वीर साधने।।
या सौ विद्या महातारा सा करालेति कीर्त्तिता।
भूमिपुत्र समायुक्ता यामावस्या शुभोदया।।
भाद्रेपुनृक्षयोगेन तस्यां वीरवरोत्तमः।
विष्णुक्रान्तां समानीय निक्षिपेन्मृतभूमिषु।।
तत्र तां साधितां कृत्वा तद्दिने मत्स्यहट्टके।
तत्र तं साधितं मत्स्यमेकमूल्येन दापयेत्।।
तज्जलेनाभिषेकं च पूर्ववच्च शिरोपरि।
साधितां विजयां तस्य उदरे मुखवर्त्मना।।
क्षिप्त्वा तत्र खनेन्मत्स्य मञ्जनाञ्चित लोचनः।
पूर्वद्रव्येण तिलकमुत्थाय च मनुं जपेत्।।
स्वयं वै तत्र भगवान् भैरवो लगुडान्वितः।
गतभीतिस्ततो वीररतं विलोक्य जपेन्मनुं।।
यदि भाग्यवशाद्देवि लगुडस्तत्र लभ्यते।
तदा स्वयं भैरवोऽसौ स्वयं वीरेश्वरो भवेत्।।

मत्स्यमानीय देवेशि निक्षिपेत् पितृकानने ।
तत्रासकृज्जपित्वा तु देवतामेलनं भवेत् ॥
तत्र नत्वा महादेवं महादेवीं च भाविनि ।
तद्भस्मतिलकं कृत्वा स्वयं वीरेश्वरो भवेत् ॥
निशायां मृतहट्टे च उन्मत्तानन्दभैरवः ।
दिग्वासा विमलीभस्मभूषणो मुक्तकेशकः ॥
कपाली खड्गहस्तश्च जपेन् मातृकया यदि ।
तदा तस्य महादेवी सर्वसिद्धिः करे स्थिता ॥
डाकिनीं योगिनीं वापि अन्यं वा भूतलाङ्गनां ।
तत्राप्यानीय संपूज्य सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ॥
सर्वेषां जीवहीनानां जन्तूनां वीरसाधने ।
ब्राह्मणं गोमयं त्यक्त्वा साधयेद् वीरसाधनम् ॥
मृतासनं विना देवि पूजयेत् पार्वतीं शिवां ।
तावत् कालं वसेद्घोरं यावदाहूतसंप्लवं ॥
महाशवाः प्रशस्ताः स्युः प्रधान वीरसाधने ।
क्षुद्राप्रयोग कर्तॄणां प्रशस्ताः सर्वसिद्धिदाः ॥
एवं वीरक्रमं देवि कथितं च तवानघे ।
न कस्यचित् प्रवक्तव्यं मम प्रीत्या महेश्वरि ॥

भावार्थ—इस पटल में वीर-साधन की विभिन्न विधियों का वर्णन किया गया है। चतुष्पथ-साधन, शव-साधन, लगुड़-साधन तथा वीर-साधन को अनेक विधियों का अनेक प्रकार से उल्लेख किया गया है। इस पटल में (१) भद्रकाली, (२) नीला, (३) नील पताका, (४) ललज्जिह्वा तथा (५) करालिका—इन पांच देवताओं के मन्त्रों तथा उनके साधनों के विषय में भी बताया गया है। विभिन्न प्रकार के विशेष-तिलकों की भी चर्चा की गई है। इन साधनों के करने से साधक को भुक्ति-मुक्ति एवं सभी सिद्धियों की प्राप्ति होती है। यह भी कहा गया है कि इन साधनों के विषय में किसी को बताना नहीं चाहिए। इस पटल के आशय को भी गुरु-मुख द्वारा

श्रवण करना चाहिए तथा उन्हीं के निर्देशानुसार किसी क्रिया-कर्म में प्रवृत्त भी होना चाहिए।

।। इति श्री कालीतन्त्रे वीर-साधना नाम षष्ठ पटलः समाप्तम् ।।

सप्तम पटल

रहस्य-पुरश्चरण विधिः

देव्युवाच

ज्ञातमेतन्मया देव त्वत्प्रसादान्महेश्वर।
अशक्तानां तु मे देव पुरश्चरणमुच्यतां ।।
सिध्यन्ते च यथा मन्त्रा लभन्ते सिद्धिमुत्तमां ।।

भैरव उवाच

श्मशाने च पुरश्चर्या कथिता भुवि दुर्लभा।
अथवान्य प्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते ।।
कुजे वा शनिवारे वा नरमुण्डं समाहृतं।
पञ्चगव्येन मिलितं चन्दनाद्यैर्विशेषतः ।।
निक्षिप्य भूमौ हस्तार्द्धमानतः कानने वने।
तत्र तद्दिवसे रात्रौ सहस्र यदि मानवः ।।
एकाकी प्रजपेन्मन्त्रं स भवेत् कल्प पादपः।
अथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते ।।
शवमानीय तद्द्वारे तेनैव परिखन्यते।
तद्दिनात्तद्दिनं यावत्तावदष्टोत्तरं शतं ।।
स भवेत् सर्वसिद्धीशो नात्र कार्या विचारणा।
अथवान्य प्रकारेण पुरश्चरणमुच्यते ।।
अष्टम्यां च चतुर्दश्यां पक्षयोरुभयोरपि।
सूर्योदयात् समारभ्य यावत् सूर्योदयान्तरं ।।
तावज्जप्त्वा निरातङ्कः सर्वसिद्धीश्वरो भवेत्।

अथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते ।।
चन्द्रसूर्यग्रहे चैव ग्रासावधि विमुक्तितः ।
यावत्संख्यं मनुं जप्यात्तावद्धोमादिकं चरेत् ।।
सूर्यग्रहणकालाद्धि नान्यः कालः प्रशस्यते ।
तत्र यद्यत् कृत कर्म तदनन्तफलं लभेत् ।।
अथवान्य प्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते ।
शरत्काले चतुर्थ्यादिनवम्यन्तं विशेषतः ।।
भक्तितः पूजयित्वा तु रात्रौ तावत् सहस्रकं ।
जपेदेकाकी विजने केवलं तिमिरालये ।।
अष्टम्यादिनवम्यन्तमुपवासपरो भवेत् ।
अन्यत्र गुरुमार्गस्य लंघनं नैव कारयेत् ।।
अथवान्य प्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते ।
अष्टमो सन्धिवेलायामष्टोत्तर लतागृहं ।।
प्रविश्य मन्त्री विधिवत्ताः समभ्यर्च्य यत्नतः ।
पूर्वोक्तकल्पमासाद्य पूजादिकं समाचरेत् ।।
केवलं कालदेवोऽसौ जपेदष्टोत्तरं शतं ।
तासां तु पत्रमूलेषु उल्कां संगृह्य मस्तके ।।
मन्त्रसिद्धिर्भवेत् सद्यो लतादर्शनपूजनात् ।
अथवान्य प्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते ।।
आकृष्टायाः कुलागारे लिखित्वा मन्त्रमेव च
सम्पूज्य तत्र संस्कारं कृत्वा तस्यै निवेद्य च ।।
किञ्चिज्जप्त्वा मनुं नीत्वा देवताभावतत्परः ।
तां विसृज्य नमस्कृत्य स्वयं जप्त्वा सुसंयतः ।।
प्रातः स्त्रीभ्यो बलिं दत्वा मन्त्रसिद्धिर्न संशयः ।
अथवान्य प्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते ।।
गुरुमानीय संस्थाप्य देववत् पूजनं विभोः ।
वस्त्रालङ्कारहेमाद्यैः सन्तोष्य गुरुमेव च ।।
तत्सुतं तत्सुतां चैव तत्पत्नीं च विशेषतः ।

पूजयित्वा मनुं जप्त्वा स्वयं सिद्धीश्वरो भवेत् ।।
अथवान्य प्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते ।
सहस्रारे गुरोः पादपद्मं ध्यात्वाप्रपूज्य च ।।
केवलं देवभावेन जप्त्वा सिद्धीश्वरो भवेत्
गुरवे दक्षिणां दद्याद् यथाविभवमात्मनः ।।
गुरोरनुज्ञामात्रेण दुष्ट मन्त्रोऽपि सिध्यति ।
गुरुं विलंघ्य शास्त्रेऽस्मिन्नाधिकारः सुरैरपि ।।
एषां च मन्त्र तन्त्राणां प्रयोगः क्रियते यदि ।
गुरुवक्त्रं विना देवि सिद्धिहानिः प्रजायते ।।
अथवान्य प्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते ;
स्वकीयां परकीयां वा स्त्रियमानीय साधकः ।।
शतमष्टोत्तरं जप्त्वा योनिमामन्त्र्य तत्ववित् ।
गच्छन् परमतत्वज्ञः सहस्रं जपते यदि ।।
तदा मन्त्रो भवेत् सिद्धो दुष्टमन्त्रोऽपि पार्वति ।
एतत्प्रयोगं देवेशि न कस्मै दर्शयेत् क्वचित् ।।
यदि वा दर्शयेन्मोहात् कुबुद्धि कुलनाशकः ।
अन्यथा प्रेतराजस्य भवनं याति निश्चितं ।।

भावार्थ—इस पटल में संक्षिप्त पुरश्चरण विधानों का वर्णन किया गया है—(१) मंगल अथवा शनिवार के दिन किया जाने वाला वीराचार-सम्मत विधान, (२) एक मंगलवार अथवा शनिबार से आरंभ करके दूसरे मंगलवार अथवा शनिवार तक प्रतिदिन रात्रि में किया जाने वाला वीराचार-सम्मत विधान, (३) अष्टमी अथवा चतुर्दशी तिथि को एक सूर्योदय से दूसरे सूर्योदय तक किया जाने वाला पशु तथा वीर दोनों भावों से सम्मत विधान, (४) शरद-कालीन देवीपक्ष में चतुर्थी से नवमी तक रात्रि में किया जाने वाला वीराचार-सम्मत विधान, (५) अष्टमी तथा नवमी के सन्धिकाल में युवती स्त्रियों के पूजन से आरंभ करके मन्त्र जप करने का वीराचार-सम्मत विधान तथा (६) गुरु-पूजन द्वारा आरंभ करके पशु तथा

वीर-भाव से सम्मत विधानों का वर्णन किया गया है। इन्हें भी गुरु-मुख से सुनकर जानना चाहिए।

॥ इति श्री कालीतन्त्रे रहस्य पुरश्चरण विधि नाम सप्तम पटलः समाप्तम् ॥

अष्टम पटल

आचार-विधिः

भैरव उवाच

अथाचारं प्रवक्ष्यामि यत्कृतेऽमृतमश्नुते।
सर्वभूतहिते युक्तः समयाचारपालकः॥
अनित्यकर्मसन्त्यागी नित्यानुष्ठानतत्परः।
मन्त्राराधन मात्रण शिवभावेन तत्परः॥
परस्यां देवतायां च सर्वकर्म निवेदकः।
अन्यमन्त्रार्चन श्रद्धामन्यमन्त्र प्रपूजनं॥
कुलस्त्री वीरनिन्दां च तद्द्रव्यस्यापहारण।
स्त्रीषु रोषं प्रहारं च वर्जयेन्मतिमान् सदा॥
स्त्रीमयं च जगत्सर्वं स्वयं तावत् तथा भवेत्।
पेयं चर्व्यं तथा चोष्यं भक्ष्यं भोज्यं गृहं स्वयं॥
सर्वं च युवतीरूपं भावयेन्मतिमान् सदा।
कुलजां युवतीं वीक्ष्य नमस्कुर्यात् समाहितः॥
यदि भाग्यवशेनैव कुलदृष्टिस्तु जायते।
तदैव मानसीं पूजां तत्र तासां प्रकल्पयेत्॥
बालां वा यौवनोन्मत्तां वृद्धां वा युवतीमपि।
कुत्सितां वा महादुष्टां नमस्कृत्य विभावयेत्॥
तासां प्रहारं निन्दां च कौटिल्यमपि वर्जयेत्।
सर्वथानैव कर्त्तव्यमन्यथा सिद्धिरोधकृत्॥

स्त्रियो देवा: स्त्रिय: प्राणा: स्त्रिय एव विभूषणं।
स्त्री सङ्गिना सदाभाव्यमन्यथा स्वस्त्रिया अपि ॥
विपरीतरता सा तु भविता हृदयोपरि।
तद्धस्तावचितं पुष्पं तद्धस्तावचितं जलं ॥
तद्धस्तावचितं भोज्यं देवताभ्यो निवेदयेत्।
सर्वं तदक्षयं प्रोक्तं देवतापूजनात् प्रिये ॥
विपरीतरतासक्तोऽप्यष्टोत्तर सहस्रकं।
अष्टोत्तरशतं वापि तदा सिद्धि: प्रजायते ॥
स्त्री द्वेषो नैव कर्त्तव्यो विशेषात् पूजनं स्त्रिया:।
जपस्थाने महाशंखं निवेश्योर्ध्वं जपं चरेत् ॥
स्त्रियं दश्यन् स्पृशन् गच्छन् विशेषात् कुलजां शुभां।
भक्षन ताम्बूल मत्स्यांश्च भक्ष्यद्रव्यं यथारुचि ॥
मत्स्यं मांसं तथा क्षौद्रं नाना द्रव्यसमन्वितं।
भक्ताद्यशेषभक्ष्याणि दत्वा द्रव्यं जपेन्मनुं ॥
दिक्कालनियमो नात्र स्थित्यादि नियमो न च।
सर्वथा पूजयेद् देवीमस्नात: कृतभोजन: ॥
महानिश्य शुचौ देशे बलिं मन्त्रेण दापयेत्।
न जपे कालनियमो नार्चादिषु वलिष्वपि ॥
स्वेच्छानियम उक्तोऽत्र महामन्त्रस्य साधने।
वस्त्रासनदेहागारस्थानस्पर्शादि वारिण: ॥
शुद्धि न चाचरेत्तत्र निर्विकल्पं मनश्चरेत्।
सर्व एव शुभ: कालो नाशुद्धिर्विद्यते क्वचित् ॥
न विशेषो दिवारात्रौ न सन्ध्यायां महानिशि।
नात्र शुद्धरेपेक्षास्ति न चामेध्यादिदूषणं ॥
सुगन्धिश्वेत लौहित्य कुसुमैरर्चयेद् दलै:।
विल्वैर्मरुवकाद्यैश्च तुलसी वर्जितै: शुभै: ॥
नाधर्मो विद्यते सुभ्रु किं च धर्मो महान् भवेत्।
स्वेच्छाचारोऽत्र गदित: प्रचरेद् धृष्टमानस: ॥

कृतार्थं मन्यमानस्तु सन्तुष्टो हृष्टमानसः ।
इत्याचारपरः श्रीमान् जपपूजादि तत्परः ॥
पालकः कुलतत्वानां परतत्वे प्रलीयते ।
उदिताकृतिरानन्दमयः संसारमोचकः ॥
अणिमाद्यष्ट सिद्धीशः साधकोदेवता भवेत् ॥

भावार्थ—इस पटल में कुलाचार के सम्बन्ध में बताया गया है। संसार को स्त्री रूप में देखने, क्रोधी स्त्री रूप में अनुभव करने तथा किसी भी स्त्री को देखते ही मन-ही-मन उसकी मानसी-पूजा तथा प्रणाम करने का आदेश दिया गया है। स्त्रियों द्वारा लाये गए पूजा-द्रव्यों से पूजन करने का अक्षय-फल होता है, यह बात भी कही गई है। महाशङ्ख की माला में जप, देवी-पूजन, बलि-प्रदान, सुगन्धि श्वेत अथवा रक्त पुष्प, विल्वपत्र तथा पंचमकारों के उपयोग एवं व्यवहार के विषय में विस्तारपूर्वक कहा गया है। यह भी कहा गया है कि जो साधक कुलाचार में तत्पर होकर जप-पूजा आदि कर्म करता है, वह संसार में अणिमादि अष्ट सिद्धियों को प्राप्त कर लेता है और अन्त में परतत्त्व में विलीन हो जाता है, जिसके कारण उसका पुनर्जन्म नहीं होता। इस पटल में वर्णित विधियों के विषय में भी गुरु-मुख से ज्ञान प्राप्त करना तथा उन्हीं के निर्देशानुसार कार्य करना आवश्यक है। गुरु से पूर्ण जानकारी प्राप्त किए बिना वीराचार आदि कर्मों को करना निषिद्ध एवं घातक कहा गया है।

॥ इति श्री कालीतन्त्रे आचारविधिः नाम अष्टमपटलः समाप्तम् ॥

नवम पटल

विद्याफल-विधि

भैरव उवाच

एवं समस्त विद्यानां राज्ञी स्तोतुं न शक्यते
वक्त्रकोटि सहस्रैस्तु जिह्वा कोटि शतैरपि ॥

सर्वसिद्धिपराभूमिरनिरुद्धसरस्वती ।
तस्मादस्या ज्ञानमात्रात् सिद्धयो ऽष्टौ भवन्ति हि ॥
अनिरुद्ध सरस्वत्या ज्ञानमात्रेण साधकः ।
पाण्डित्ये च कवित्वे च वागीश समतां व्रजेत् ॥
तस्य पाण्डित्य वैदग्ध्य विचित्रपद कल्पनात् ।
देवा अपि विलज्जन्ते किं पुनर्मानवादयः ॥
अस्ति चेत् त्वत्समा नारी मत्समः पुरुषोऽस्ति चेत् ।
अनिरुद्ध सरस्वत्याः समो मन्त्रो ऽस्ति वै तदा ॥
अस्या जपो ब्रह्मजपो ज्ञानमस्यात्मचिन्तनं ।
योगमन्धारणा सम्यग्ध्यानमस्या न संशयः ॥
महापदि महापापे महाग्रह निवारणे ।
महाभये महोत्पाते महाशोके महोत्सवे ॥
महामोहे महाऽसौख्ये महादारिद्रय संकटे ।
महारण्ये महाशून्ये महास्थाने महारणे ॥
दुराख्याने दुरावासे दुर्भिक्षे दुर्निमित्तके ।
समस्तक्लेशसंघाते स्मरणादेव नाशयेत् ॥
अस्या ज्ञानं ब्रह्मज्ञानं ध्यानमस्यात्मचिन्तनं ।
तस्मादस्याः समाविद्या नास्ति तन्त्रे न संशयः ॥
कुलामृत निषेवी च कालीतन्त्रार्थ चिन्तकः ।
ब्रह्मादि भवने तस्य समो नास्ति कुतः परः ॥
स एव सुकृती लोके स एव कुलभूषणः ।
धन्या च जननी तस्य येन देवी समर्चिता ॥
वक्त्रे सरस्वती तस्य लक्ष्मीस्तस्य सदागृहे ।
तीर्थानि देहे तिष्ठन्ति येन देवी समर्चिता ॥
धनेन धननाथश्च तेजसा भास्करोपमः ।
बलेन पवनो ह्येष येन देवी समर्चिता ॥
गानेन तुम्बरुः साक्षाद्दाने कर्णसमस्तथा ।
दत्तात्रेयसमो ज्ञानी येन देवी समर्चिता ॥

वह्निरिव रिपोर्हन्ता गङ्गेव मलनाशक: ।
शुचौशुचिसम: साक्षादिन्दोरिव सुखप्रद: ।।
पितृदेवसम: शास्ता कालस्येव दुरासद: ।
वागीश इव गम्भीरो निघति इव दुर्द्धर: ।।
वृहस्पतिसमो वाग्मी धारणी सदृश: क्षमी ।
कन्दर्पसदृश: स्त्रीणां येन देवी समर्चिता ।।
अहोभाग्यमहो लोके कुलज्ञान परायण: ।
तेषां मध्ये ऽपि य: कोपि काली साधन तत्पर: ।।
त्यजसि त्वं वरं चैतत् पुमांसं परमं तथा ।
मादृशं तु क्वचित् काले त्यजसि त्वं कदाचन ।।
काली ज्ञानिनमासाद्य न त्यजसि कदाचन ।
नहि काली समा विद्या नहि कालीसमं फलं ।।
नहि कालीसमं ज्ञानं नहि काली समं तप: ।
ये गुणा: परमेशस्य पञ्चकृत्यविधायिन: ।।
ते गुणा: सन्ति सर्वज्ञे कालीतत्वस्य नान्यथा ।
कालिकाहृदयज्ञानी लतासाधनतत्पर: ।।
देववन्मानवो भूत्वा लभेन्मुक्तिं च शाश्वतीं ।
इति ते कथितं सम्यक् कालिकास्तवमुत्तमं ।।
अनेन सम्यगास्थाय सर्वधर्म फलं लभेत् ।।

भावार्थ--इस पटल में 'अनिरुद्ध-सरस्वती' अर्थात् भगवती के **बाईस** अक्षर वाले मन्त्र का वर्णन किया गया है तथा यह बताया है कि इस मन्त्र का साधन करने से सम्पूर्ण सिद्धियां प्राप्त होती हैं। इसका जप करने से आत्म-चिन्तन का फल मिलता है, इसका स्मरण करने से सब प्रकार के पाप ग्रह, भय, उत्पात, रोग, शोक, मोह, दारिद्रय आदि से मुक्ति मिलती है।

इस मन्त्र द्वारा देवी की अर्चना करने वाला साधक ही पुण्यात्मा तथा कुलभूषण है और उसके घर में सरस्वती एवं लक्ष्मी तथा शरीर

में समस्त तीर्थों का निवास बना रहता है। इस मन्त्र का साधक धनवानों में कुबेर, तेजस्वियों में सूर्य, बलवानों में वायु, गायकों में गन्धर्व, दानियों में कर्ण, ज्ञानियों में दत्तात्रेय, शत्रु-संहारकों में अग्नि, पाप-नाशकों में गंगा, सुख प्रदाताओं में चन्द्रमा तथा शासकों में यम के समान उच्च पद प्राप्त करता है। वह समुद्र जैसा गम्भीर, बृहस्पति जैसा विद्वान् पृथ्वी जैसा सहिष्णु तथा स्त्रियों के लिए कामदेव तुल्य होता है। इस मन्त्र का जप करने वाले साधक पर काली सदैव अपनी कृपा बनाए रहती हैं। विद्याराज्ञी मन्त्र की महिमा का वर्णन ही इस पटल का मुख्य विषय है।

इति श्री कालीतन्त्रे विद्याफल विधि नाम नवमपटलः समाप्तम् ॥

दशम पटल

सिद्ध विद्या विधिः

यथाकाली तथा दुर्गा यथा दुर्गा तथोन्मुखी।
यथा तारा तथा काली यथा नीला तथोन्मुखी ॥
दुर्गायाः कालिकायास्तु ध्यानं समनिहोच्यते।
महाचीनक्रमेणैव ताराशीघ्र फलप्रदा।
गन्धर्वाख्य क्रमेणैव पञ्चमी भुक्तिमुक्तिदा।
महाचीन क्रमेणैव कालिका फलदायिनी ॥
कालिकोग्रमुखी शस्ता दत्तात्रेय विभाविता।
सप्तसप्ततिभेदेन श्रीविद्या विदिता भुवि ॥
तासां तु समता ज्ञेया गुप्त साधनसाधने।
चत्वारिंशत् प्रकारा च भैरवी परिकीर्तिता ॥
तासां तु समता ज्ञेया गुप्त साधन साधने।
या या विद्या महाचण्डा तासामेष विधिर्मतः ॥
महाचीन क्रमेणैव छिन्नमस्ता च सिद्धिदा।

यस्मिन् मन्त्रे य आचारस्तस्मिन् धर्मस्तु तादृशः ।।
कृतार्थस्तेन जायेत स्वर्गो वा मोक्ष एव वा ।
भ्रान्तिरत्र न कर्तव्या सिद्धि हानिस्तु जायते ।।
विशुद्धचित्तो ऽत्र भवेत् सिद्धि स्यादपवर्गदा ।
एवं तु तत्क्षणात् सिद्धि विस्मयो नास्ति चापरः ।।
विस्मिता विलयं यान्ति पशवः शास्त्रमोहिताः ।।

भैरव उवाच

कालिका हृदयं विद्यां सिद्धिविद्यां महोदयां ।
पुरा येन यथा जप्त्वा सिद्धिमापुर्दिवौकसः ।।
कामाक्षरं वह्निसंस्थमिन्दिरा नाद बिन्दुभिः ।
मन्त्रराजमिदं ख्यातं दुर्लभं पापचेतसां ।।
सुलभं शुभदं भक्त्या साधकानां महात्मनां ।
त्रिगुणा तु विशेषण सर्वशास्त्र प्रबोधिका ।।
अनया सदृशी विद्या नास्ति सारस्वतप्रदा ।
आकर्षण वशीकार मारणोच्चाटनं तथा ।।
शान्ति पुष्ट्यादि कर्माणि साधयेदनयाऽचिरात् ।
किं वक्तव्यमनेनापि वर्णितुं नैव शक्यते ।।
जिह्वाकोटि सहस्रैस्तु वक्त्रकोटि शतैरपि ।
अनया सदृशी विद्या अनया सदृशो जपः ।।
अनया सदृशं ज्ञानं न भूतं न भविष्यति ।
ध्यान पूजादिकं सर्वं साधनं च पुरस्क्रिया ।।
अनिरुद्धसरस्वत्याः समानं सवमीरितम् ।
रक्तराकर्षणे पुष्पैः पीतैः स्तम्भन कर्मणि ।।
मारणे कृष्णपुष्पैस्तु पूजयेद् घोरदक्षिणां ।
आद्यैक बीजं बीजानां तथैवान्तेऽपि चैककं ।।
दक्षिणे कालिके चेति मध्ये संयोज्य मन्त्रवित् ।
स्वाहान्तं मन्त्रमुच्चार्य भवेदा कर्षणं महत् ।।
लोहिताङ्कुशहस्तां च एकशूलधरां तथा ।

महाकाल समासीनां ध्यात्वा चाकर्षणं महत् ।।
स्थावरं जङ्गमं चैव पातालतलगं तथा ।
आकर्षयति मन्त्रज्ञः किमन्यद् भुवि योषितः ।।
अयुतैक जपः प्रोक्तः सदा कर्षण कर्मणि ।
अथान्यत् सम्प्रवक्ष्यामि वशीकरण मुत्तमं ।।
कूर्चलज्जाह्वयं वीजद्वयं ठान्तं तथैव च ।
योजयित्वा जपेद् विद्यामयुतं वशयेद् ध्रुवं ।।
ध्यानमस्याः प्रवक्ष्यामि येन वश्यं जगत् त्रयं ।
नागयज्ञोपवीतां च चन्द्रार्द्धकृतशेखरां ।।
जटाजूटसमासीनां महाकाल समीपगां ।
एवं कामशराबिद्धा विह्वला काममोहिताः ।
स्वं स्वं सन्त्यज्य भर्त्तारं यान्ति लोक त्रयाङ्गनाः ।
अथवक्ष्ये महाविद्यां सिद्धिविद्यां महोदयां ।।
भैरवेण पुरा प्रोक्ता काली हृदय संज्ञिता ।
अस्या ज्ञान प्रभावेण कलयामि जगत्त्रयं ।।
प्रणवं पूर्वमुद्धृत्य हृल्लेखावीजमुद्धरेत् ।
रतिवीजं समुद्धृत्य पपञ्चम भगान्वितं ।।
ठ द्वयेन समायुक्ता विद्याराज्ञी मयोदिता ।
अनया सदृशी विद्या कालिका यास्तु दुर्लभा ।।
भैरवोऽस्य ऋषिः प्रोक्तो विराट् छन्द उदीरितं ।
सिद्धकाली ब्रह्मरूपा देवता भुवनेश्वरी ।।
रतिवीजं वीजमस्या हृल्लेखा शक्ति रुच्यते ।
हृल्लेखया षड्दीर्घेन प्रणवाद्येन कल्पयेत् ।।
अङ्गषट्कं ततोन्यस्य ध्यात्वा देवीं शिवोभवेत् ।।
खड्गोद्भिन्नेन्दुबिम्बस्रवदमृतरसा-
-प्लाविताङ्गी त्रिनेत्रा ।
सव्येपाणौ कपालाद्गलदमृतमथो
मुक्तकेशी पिवन्ती ।।

दिग्वस्त्रा बद्धकाञ्ची मणिमय मुकुटा-
द्यैर्युता दीप्तजिह्वा ।
पायान्नीलोत्पलाभा रवि शशि विलस-
त्कुण्डलालीढ़ पादा ॥
जपेद् विंशति साहस्रं सहस्रं केण संयुतं ।
होमयेत्तद्दशांशेन मृदुपुष्पेण मन्त्रवित् ॥
त्रिकोणं कुण्डमालिख्य सिद्धविद्यः शिवोभवेत् ।
पूजनं च प्रयोगं च दक्षिणा वद्रुयाचरेत् ॥
एकाक्षर्या महाकल्प समानं सर्वमेव वा ।
रक्तपद्मस्य होमेन साक्षाद् वैश्रवणो भवेत् ॥
बिल्वपत्रस्य होमेन राज्यं भवति निश्चितम् ।
रक्तप्रसून होमेन वशयेदखिलं जगत् ॥
पीतपुष्पस्य होमेन स्तम्भयेद् वायुमप्यथ ।
मालतीपुष्प होमेन साक्षाद् वाक्पति सन्निभः ॥
कृष्णपुष्पस्य होमेन शत्रून मारयतेऽचिरात् ।
अत्रसर्वस्य होमस्य संख्या स्यादयुतावधि ॥
अस्याः स्मरणमात्रेण महापातक कोटयः ।
सद्यः प्रलयमायान्ति साधकः खेचरो भवेत् ॥

भावार्थ—इस पटल में बताया गया है कि काली, तारा, दुर्गा तथा उन्मुखी—इन सबकी उपासना पद्धति एक जैसी है। महाचीन क्रम से काली और तारा तथा गन्धर्व क्रम से श्री विद्या शीघ्र फल-दायक हैं। उग्रमुखी काली, सप्तसप्तति प्रकार की श्री विद्या तथा चत्वारिंशत प्रकार की भैरवी—ये सभी गुप्त-साधन में समान हैं। सभी उग्ररूपा देवियां महाचीन क्रम से सिद्धिदात्री हैं। दक्षिण काली के एकाक्षर मन्त्र, त्र्यक्षर मन्त्र तथा षडक्षर मन्त्र और उनके ध्यान स्वरूप का वर्णन करते हुए, जप के विषय में अन्य बातों का उल्लेख तथा मन्त्रों की महिमा का वर्णन किया गया है।

।।इति श्री कालीतन्त्रे सिद्ध विद्या विधिः नाम दशम पटलः समाप्तम् ।।

एकादश पटल

सामान्य साधन

भैरव उवाच

अथोच्यते कालिकायाः सामान्यसाधनं प्रिये ।
कृतेन येन विधिवत् पलायन्ते महापदः ।।
शिवाबलिश्च दातव्यः सर्वसिद्धिमभीप्सुभिः ।
महोत्पाते महाघोरे महारोगे महाग्रहे ।।
महादपि महायुद्धे महाविग्रह संकुले ।
महादारिद्रय शमने महादुःस्वप्नदर्शने ।।
महाशान्तौ महावश्ये महास्वस्त्ययने तथा ।
घोराभिचारशमने घोरोपद्रवनाशने ।।
कूटयुद्धादिशमने कूटशत्रुनिवारणे ।
राजादिभयशान्तौ च राजक्रोधप्रशान्तये ।।
न ददाति बलिं यस्तु शिवायै शिवताप्तये ।
सपापिष्ठो नाधिकारी कुलदेव्याः समर्चने ।।
कुलीनं नावमन्येत कुलज्ञं परिपूजयेत् ।
कुलज्ञेषु प्रसन्नेषु कालिका सन्निधिर्भवेत् ।।
अहोधन्यवतां लोके जानाति कुलदर्शनं ।
तेषांमध्ये तु यः कश्चित् कुलदेवीं समर्चयेत ।।
कुलाचार विहीन यः पूजयेत् कालिकां नरः ।
स स्वर्गमोक्षभागी च न स्यात् सत्यं न संशयः ।।
आयुरारोग्यमैश्वर्यं बलं पुष्टिं महद्यशः ।
कवित्वं भुक्ति मुक्ती च कालिकापादपूजनात् ।।
शुक्लेन ध्यान योगेन कविता वशवर्तिनी ।

पीतेन ध्यान योगेन स्तम्भये दखिलं जगत् ।।
कृष्णाभा शत्रुमरणे धूम्राभा वैरि निग्रहे।
अनया विद्यया मन्त्री स्पृशेत् पातकिनं यदि ।।
स तु संस्पर्शमात्रेण वक्ति सौधीमनगं नां।
कुमारीपूजनं कुर्यात् सर्वधर्म फलाप्तये ।।

भैरव उवाच

अथान्यत् संप्रवक्ष्यामि प्रयोगं शत्रु निग्रहं।
सर्वान्ते वह्निवनितां योजयित्वाऽयुतं जपेत् ।।
कालिकां द्विभुजां कर्तृकपाले सव्यदक्षिणे।
एवंध्यात्वा तु शत्रूणां मारणं समुपाचरेत् ।।
एवं कालीमतं प्रोक्तं सर्वसिद्धि प्रदायकं।
अनया विद्यया सम्यक् साधयेत् स्वमनीषितं ।।
अनया विद्यया यद्यन्नसाधयति साधकः।
तत्तत् सर्वेषु तन्त्रेषु नास्ति सत्यं न संशयः ।।
काल नियन्त्रणात काली ज्ञानतत्त्वप्रदायिनी।
तस्मात् सर्व प्रयत्नेन यजेदुभय सिद्धये ।।
कालीमतमिदं दिव्यं भैरवेन प्रकाशितं।
न कुत्रापि प्रवक्तव्यं साघते च स्वपौरुष ।।
एतत्तन्त्रं च मन्त्रं च ध्यानं चैव प्रपूजनं।
प्रकाशात् सिद्धि हानिः स्यात् तस्माद् यत्नेन गोपयेत् ।।
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन गोप्तव्यं देवतागणैः।
यथामनुष्यो लभ्येत तथा कार्यं महेश्वरि ।।
योभक्तः साधयेद्ज्ञानी तस्मै नित्यं प्रकाशयेत् ।।

भावार्थ—इस पटल में सामान्य साधन की विधियों का वर्णन किया गया है तथा काली-पूजन से प्राप्त होने वाले ऐश्वर्य, भोग, यश, मोक्ष आदि का उल्लेख किया गया है। इन्हें गुरु-मुख से जानना चाहिए।

।। इति श्री कालीतन्त्रे सामान्य साधनं नाम एकादश पटलः समाप्तम् ।।

द्वादश पटल

परम गुह्याचारः

भैरव्युवाच

त्वयोक्तं पूजनं देवं साधनेन पुरस्कृतं।
इदानीं श्रोतुमिच्छामि वीर नित्यक्रियांप्रभो ।।

भैरव उवाच

प्रातः कृत्यं ततोन्यास ऋष्याद्यङ्गाङ्गुलैरपि ।
वर्णव्यापक विन्यासः पीठन्यास स्ततः परं ।।
ततोऽन्तर्यजनं देवि योगियोगानिशा प्रिये।
पञ्चमानां प्राशनं च जपो रात्रौ विधानतः ।।
स्तोत्रपाठो यत्र तत्र समये च वरानने।
वीरश्रद्धा तर्पणं च तथालापः स्त्रियामपि ।।
विजयाङ्गी कृतिश्चैव स्वसुखोद्देशिनं तथा।
अप्रकाशः कुलाचारे मृदुभाषा च सर्वतः ।।
गुर्वनुज्ञामात्रेणैव सर्वाचारविधिः प्रिये।
एवमादीनि चान्याति वीरनिन्दा न सुव्रते ।।
ऐति परम्परयाह्येन तच्चीने च प्रतिष्ठितं।
अन्यत्र विषयेन्नास्ति सत्यमेतद् ब्रवीमिते ।।
वामाचारः कुलाचारश्चीननाथेन शङ्करात्।
प्रकाशितः शङ्करेण महारुद्रात् प्रकाशितः ।।
महाचीनाधियो देवो महात्म्येन तयोद्वयोः।
कुलाचारं कुलश्रेष्ठे वामाचारः प्रयत्नतः ।।
अस्यैवाशेष माहात्म्यं चीनतन्त्रे मयोदितं।

कुलाचारमशेषेण चीननाथेन वेत्यपि ।।
यद् यद् दृष्टं श्रुतं यद् यद् गुरुः साधक वक्त्रतः ।
तत्तत् कार्यं वीरवर्यैस्तेन सिद्धिर्भवेत् प्रिये ।।
क्वचिच्चण्डः क्वचिद्रुण्डः क्वचिद्भूत पिशाचवत् ।
क्वचिद्देवार्च्चनरतः क्वचित्तन्निन्दकस्तथा ।।
भवेच्छीलरतो वीरो महारुद्रस्य शासनात् ।
भक्षणं च विधिं वक्ष्ये पञ्चमादेर्यथा विधि ।।
आदौ गुरुं स्मरन् पश्चात् कुण्डलीं परिभाव्य च ।।
आजिह्वान्तर्स्पर्णेन भक्षयेन्नति पूर्वकं ।।
गुरुं नत्वा तपोज्येष्ठं शक्तंर्नति परायणः ।
ज्येष्ठ त्वं वा कनिष्ठत्वं वा कुलाचार विधानतः ।।
अभिषेक्ता गुरुः साक्षान्मन्त्रदेन समः स्मृतः ।
अभिषेके विनाभूते प्रधानत्वं करोति यः ।।
चत्वारि तस्य नश्यन्ति आयुर्विद्या यशोबलं ।
तद्विधिश्चोतरातन्त्रे पाशवेन विमिश्रितः ।।
वीरैर्ग्राह्यः प्रयत्नेन हंसैः क्षीरं जलाद्यथा ।
आचारोऽयं शक्तिमन्त्रे सर्वत्र परिकथ्यते ।।
विशेषात् कालिकातारा भैरव्यादिषु पञ्चसु ।
कालिका तारिणी भेदं यः करोति स नारकी ।।
यत्र यत्र कालिकेति नाम संश्रूयते प्रिये ।
तत्र तारा विधानं च युतेनात्रस्तु संशयः ।।
यद् यदन्यत् साधनं च नान्यत्रापि नोदितं ।
तत् सर्वं पूर्वपूर्वेन तन्त्रेन ज्ञायते प्रिये ।।
न पूजा न्यास जालं वा स्त्रीणां केवल जापतः ।
सिद्धिर्भवति देवेशि कुलाचार विधानतः ।।
अथचेत् क्रियते न्यासस्तदा शृणु विधिं प्रिये ।
ऋष्याद्यङ्गकपीठानां न्यासं कृत्वा च संस्मरेत् ।।
ततः साहमिति ध्यायेन् महाचीन मतं यथा ।

कालीतन्त्रं कौलतन्त्रं तारातन्त्रं तथा प्रिये ।।
चीनतन्त्रं स्वतन्त्रं च युगपद्वक्त्रतः स्मृत ।
अथ यद्यन्मतं प्रोक्तं तत्पञ्चसु समाचरेत् ।।
गुरुपाद प्रसादेन शुभादृष्टस्य योगतः ।
आचारः प्राप्यते वीरैर्नात्र कार्यश्च संशयः ।।
तदैव तुष्टा सा देवी निर्विकल्पः स्वयं यदि ।।

भावार्थ—इस पटल में साधक के लिए आवश्यक आचारों तथा क्रियाकलापों के विषय में लिखा गया है। पञ्चमकार युक्त जप-साधना, तर्पण, स्त्रियों के साथ वार्तालाप, गुरुस्मरण, कुण्डलिनी-ध्यान तथा अन्य बातों के सम्बन्ध में विभिन्न निर्देश दिये गए हैं। इन सभी के विषय में गुरु-मुख से सुनकर जानकारी प्राप्त करनी चाहिए।

।।इति श्री कालीतन्त्रे परमगुह्याचारः नाम द्वादश पटलः समाप्तम् ।।

इति कालीतन्त्रम्

श्री काल्यपनिषत्

ॐ अथाह यै देवप्रिये मनोहारिणि चण्डकपालिनि भगवति त्रैलोक्याधिरूपे ॐ तत्सत् हंसः सोहं निरञ्जने निराकारे सूक्ष्माति-सूक्ष्मे निर्वाणस्वरूपिणि अम्बे अम्बिके अम्बालिके दक्षिणाम्नायेश्वरी चतुर्दशभुवनाधिपेश्वरी कालिकातो ब्रह्माविष्णुमहेश्वरादयः सर्वे देवा राक्षसाः मुनयः अष्टसिद्धिमाप्नुवन्ति तपस्वी प्रजापतयः प्रजाता पुनः कालिकाङ्गे प्रलीयन्ते।

दिव्य चतुर्दशभुवनमणिमालिनि अरूपे स्वरूपे रूपातीते ॐ कार स्वरूपिणि वषट्कार रूपे फट्कारावतारे इडा पिंगला सुषुम्णा चित्रा-स्वरूपे ॐ तत्वमसि जगत्त्वमसि स्थावरजङ्गमस्त्वमसि यः एवं वेद स वेदविद्भवति ज्ञानी स पडितश्च।

क्रीं इति त्रितयं क्रोधद्वयं तद्वल्लज्जा दक्षिणेकालिकेति पुनः सप्ताक्षरं प्राग्वदुच्चार्य स्वाहान्त येन विज्ञायते स शिवत्वं प्राप्नोति योगी स पण्डित स सर्वं एव भवति। ध्यान ज्ञान मनो वचः कर्म। सस्मरणं करोति स जीव मुक्त कथ्यते। अस्यपाठाच्चतुर्वर्गित्वं प्राप्यते।

नागयज्ञोपवीताञ्च चन्द्रार्द्ध कृत शेखराम्, जटाजूटश्च संचिन्त्य महाकालसमीपगाम्—एवं ध्यानं ये ये जना पठन्ति स्मरन्ति ते ते जना कालिकायुयुवा भवन्ति। समाधि ज्ञानं विज्ञानमिति सत्यम्। इति मन्त्रोच्चारणेन पञ्चमहापातकं नाशयति। विद्याराज्ञीयं यस्य गृहे वर्तते सः वैश्रवणो भवति सर्वरोगं सर्वदोषं नाशयति क्षिप्रं ब्रह्म-स्वरूपे सर्वक्रतुफलं सर्वदान सर्वतीर्थ पुण्यं पाठाल्लभते मनोरथं प्राप्नोति धनवान पुत्रवान् ज्ञानवान् योगित्वं लभते नात्र संशयः इहत्र भोगः परत्वामृते मोक्षं प्राप्नोति सत्यम्।

भावार्थ—चौदहों भुवनों की अधीश्वरी भगवती कालिका द्वारा ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर आदि सभी देवता, राक्षस तथा मुनिजन अष्ट

सिद्धियों को प्राप्त करते हैं, तपस्वी प्रजापतिगण उत्पन्न होते हैं तथा पुनः कालिका के अङ्ग में ही लय हो जाते हैं।

हे अरूप रूपा, रूपातीत, ॐकार स्वरूपिणी वषट्कार रूपा, फट्कारावतार, इडा-पिङ्गला-सुषुम्णा चित्रा स्वरूपा कालिके! वह तुम्हीं हो, तुम्हीं जगत्रूपा हो, और तुम्हीं स्थावर तथा जङ्गम हो—इस प्रकार जो जानता है, वही वेदज्ञ है वही ज्ञानी है, तथा वही पण्डित है।

'क्रीं' इस बीज को पहले तीन बार, फिर 'हूं' इस क्रोधबीज को दो बार, उसी तरह लज्जाबीज 'ह्रीं' को दो बार, फिर 'दक्षिणे कालिके' इस पद को, तत्पश्चात् उक्त सात बीजाक्षरों (क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं) को पुनः पूर्ववत् उच्चारण करके अन्त में 'स्वाहा' कहना चाहिए (अर्थात्—क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा) जो इसे जानता है, वह शिवत्व को प्राप्त करता है, वही योगी तथा पण्डित सब कुछ होता है। जो व्यक्ति ध्यान ज्ञान, मन, वचन तथा कर्म से स्मरण करता है, उसी को जीवन्मुक्त कहा जाता है। इसके पाठ से चारों वर्ग (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) की प्राप्ति होती है।

सर्प का यज्ञोपवीत पहने अर्द्धचन्द्र का मुकुट धारण किये, जटा-जूट युक्त, महाकाल के समीप स्थित—ऐसी भगवती का जो व्यक्ति ध्यान करते हैं, वे दीर्घायु तथा युवा होते हैं। उनके पांचों महापापों का नाश हो जाता है। जिसके घर में यह विद्याराज्ञी मन्त्र विद्यमान रहता है वह कुबेर के समान धनी होता है। उसके सभी रोग तथा सभी दोष नष्ट हो जाते हैं। उसे सब प्रकार के यज्ञ, दान, तथा तीर्थों का पुण्य इसके पाठ से प्राप्त होता है, उसके मनोरथ पूर्ण होते हैं। वह धनवान्, पुत्रवान्, ज्ञानवान् तथा योग को प्राप्त करता है, इसमें सन्देह नहीं है। वह इस लोक में सुख भोगकर अन्त में मोक्ष को प्राप्त करता है यह सत्य है।

॥ इति श्री अथर्ववेदोक्त श्री काल्युपनिषत् समाप्तम् ॥

श्री कालिकोपनिषत्

अथ हैतां ब्रह्मरन्ध्रे ब्रह्मस्वरूपिणी माप्नोति । सुभगां कामरेफेन्दिरां समाख्यरूरिणीमादौ तदन्वकर्तु बीजद्वयकूर्च्चबीजं तद्वामषष्ठस्वरबिन्दुमेलनं रूपं तदनुभुवना द्वयभुवना तु व्योमजलनेन्दिरा शून्यमेलनरूपा दक्षिणे कालिके वेत्यभिमुखं गता तवनुबीजसप्तकमुच्चार्य बृहद्भानुजया मुच्चरेत् ।

अयं सर्वमन्त्रोत्तमोत्तम इमं सकृज्जपन् सतु विश्वेश्वर: स तु नारीश्वर: सतु वेदेश्वर: स सर्वगुरु: सर्वनमस्य: सर्वेषु वेदेष्वधिश्रितो भवति स सर्वेषु तीर्थेषु स्नातो भवति सर्वेषु यज्ञेषु दीक्षितो भवति स स्वयं सदाशिव: ।

त्रिकोणं त्रिकोणं त्रिकोणं पुनश्चैवं त्रिकोणं त्रिकोणं ततो वसुदलं सार्द्ध चन्द्र केसरं युग्मशोविलिख्य सम्भृतं भूपुरैकेन युतं सर्वज्ञनाभ्यर्च्य तस्मिन् देवीदले रेखायां विन्यस्य ध्येया ।

अभिनवजलदवदना घनस्तनी कुटिलदंष्ट्रा शवासना वराभय खड्गमुण्डमण्डितहस्ता कालिका ध्येया ।

काली कपालिनी कुल्ला कुरुकुल्ला विरोधिनी विप्रचित्तेति षट्कोणगा: । उग्रा उग्रप्रभा दीप्ता नीला घना बलाका मात्रा मुद्रा मितेति नवकोणगा:—इत्थं पञ्चदशकोणगा: । ब्राह्मी नारायणी माहेश्वरी चामुण्डा कौमारी अपराजिता वाराही नारसिंहीत्यष्ट पत्रगा: । चतुष्कोणगाश्चत्वारो देवा: माधव रुद्र विनायक सोरा: चतुर्दिक्षु इन्द्र यम वरुण कुबेरा: ।

देवी सर्वाङ्गेनादौ सम्पूज्य भगोदकेन तर्पणं पञ्चमकारेण पूजनमेतस्या: सपर्याया: किमधिकं नो शक्यं ब्रह्मादिपदं हेयं हेलया प्राप्नोति। एतस्या एक द्वि त्रि क्रमेण मनवो भवन्ति । नारि-मित्रादि लक्षणमत्र

वर्तते । अमुष्य मन्त्रपाठकस्य गतिरस्ति नान्यस्येह गतिरस्ति एतस्या-स्ताशमनोर्दुर्गमनोर्वा सिद्धि: । इदानीं तु सर्वा: स्वप्नभूता असितेव जागर्ति ।

इमामसिताज्ञामुपनिषदं यो वाऽधीते सोऽपुत्र: पुत्री भवति निर्धनो धनायति धर्मार्थकाममोक्षाणां पात्रीयत्यन्यस्य वरद: दृष्ट्वा जगन्मोहयति क्रोधस्तं जहति गङ्गादि तीर्थ क्षेत्राणामग्निष्टोमादियज्ञानां फलं भागीयति ।

भावार्थ—इस ब्रह्मस्वरूपिणी का ब्रह्मरन्ध्र में अनुभव होता है । 'क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके स्वाहा'—इस मन्त्र का उच्चारण करना चाहिए ।

यह मन्त्र सब मन्त्रों में उत्तम है । इसका एक बार जप करने वाला साधक भी विश्वेश्वर, नारीश्वर, वेदेश्वर, सर्वगुरु, सर्वपूज्य तथा समस्त वेदों का अधिकारी होता है । उसे सभी तीर्थों के स्नान का पुण्य मिलता है, सभी यज्ञों के करने का फल प्राप्त होता है तथा वह स्वयं सदाशिव हो जाता है ।

पांच त्रिकोण एक के बाद एक लिखे, फिर अर्द्धचन्द्रकेसर युक्त अष्टदल लिखे, फिर एक भूपुर लिखे । इस प्रकार का यन्त्र बनाकर उसमें पूजन करके न्यास पूर्वक ध्यान करना चाहिए ।

भगवती कालिका का मुख नवीनमेघ के समान है, वे घनस्तनी हैं, उनकी दाढ़ें टेढ़ी हैं, वे शव पर आरूढ़ हैं तथा अपने चारों हाथों में वर, अभयमुद्रा, खड्ग तथा मुण्ड को धारण किये हुए हैं ।

पहले के दो त्रिकोण के छहों कोनों में (१) काली, (२) कपालिनी, (३) कुल्ला, (४) कुरुकुल्ला, (५) विरोधिनी तथा (६) विप्रचित्ता स्थित हैं । बाद के तीन त्रिकोणों के नौ कोणों में (१) उग्रा (२) उग्रप्रभा, (३) दीप्ता, (४) नीला, (५) घना, (६) बलाका, (७) मात्रा, (८) मुद्रा तथा (९) मिता स्थित हैं । इस प्रकार पन्द्रह कोणों में इन सबकी स्थिति है । अष्टदलकमल के आठों

दलों (१) ब्राह्मी, (२) नारायणी, (३) माहेश्वरी, (४) चामुण्डा, (५) कौमारी, (६) अपराजिता, (७) वाराही तथा (८) नारसिंही स्थित हैं। भूपुर के चारों कोनों में (१) माधव, (२) रुद्र, (३) विनायक तथा (४) सूर्य—ये चारों देवता स्थित हैं। भूपुर की चारों दिशाओं में (१) इन्द्र, (२) यम, (३) वरुण तथा (४) कुबेर स्थित हैं।

सर्वप्रथम सर्वाङ्ग में देवी का पूजन करके भगोदक से तर्पण तथा पञ्चमकारों से पूजन करना चाहिए। इनकी पूजा से अधिक और क्या है? इससे ब्रह्मादि पद सहज ही प्राप्त हो जाते हैं। इनके एक दो, तीन के क्रम से यन्त्र होते हैं। इन मन्त्रों के विषय में अरि-मित्र आदि का बिचार नहीं किया जाता। इनके मन्त्र का जप करने वाला व्यक्ति सद्गति को प्राप्त करता है। इनसे तारा तथा दुर्गामन्त्र की सिद्धि होती है। इस समय में सभी देवता सोये हुए हैं, केवल कालिका देवी ही जाग्रत् हैं।

इस कालिकोपनिषद् की आज्ञा का जो व्यक्ति पालन करता है वह निस्संतान-व्यक्ति पुत्र लाभ करता है, निर्धन धनवान बनता है धर्म-अर्थ-काम तथा मोक्ष की प्राप्ति होती है, वह दूसरों को वर दे सकता है, उसे देखते ही संसार मोहित हो जाता है, क्रोध शान्त हो जाता है, गङ्गा आदि तीर्थ क्षेत्र तथा अग्निष्टोम आदि यज्ञों का फल उसे प्राप्त होता है।

॥इति श्री कालिकोपनिषदम् समाप्तम् ॥

हमारे पूज्य तीर्थ

लेखक—राजेन्द्र कुमार 'राजीव'

यदि आप तीर्थ यात्रा करना चाहते हैं ? यदि आप तीर्थ धामों की स्थापना, इतिहास, मार्ग में उपयोग में आने वाले साज-सामान, खाद्य-पदार्थ, आने-जाने का मार्ग, प्रमुख तीर्थ के आस-पास के दर्शनीय स्थलों की रोचक और ठोस जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं तो...

यह पुस्तक अवश्य पढ़िये !

आपके मन में ये जिज्ञासाएं हमेशा रहती होंगी कि—

- ☐ हमारे तीर्थ-स्थानों की स्थापना किसने और क्यों की ?
- ☐ इनके पीछे क्या उद्देश्य और भावना थी ?
- ☐ हमारे चार बड़े धामों की क्या महत्ता है ?
- ☐ भारतीय संस्कृति को एक सूत्र में पिरोये रखने के लिए हमारे ये तीर्थ कैसी भूमिका निभाते हैं तो—

इन महत्वपूर्ण बातों की प्रामाणिक जानकारी पाने के लिए यह पुस्तक अवश्य पढ़ें।

मूल्य 18/-
डाकखर्च : 2/-
पृष्ठ —220
सचित्र

याद रखिये
तीर्थ-स्थान हमारे
देश के प्राण हैं।

चाहे आप तीर्थ-यात्री हों, पर्यटक हों या धार्मिक साहित्य के प्रेमी—आपके पास यह पुस्तक अवश्य होनी चाहिए।

पुस्तकें वी०पी०पी० द्वारा मंगाने का पता

पुस्तक महल ( ) खारी बावली, दिल्ली-110006